

भाषिण्डकण्ड दि० सैम प्रथमसंस्कृतः प्रथमोऽङ्कः १००

श्री विजयकर्मिद्विरचित

शृङ्गारार्णवचन्द्रिका

(अपरनाम अलंकारसंग्रह)

संपादक

डॉ० वामन महादेव कुलकर्णी
एम० ए०, पी-एच० डी०

प्रकाशक

भारतीय ज्ञानपीठ

शाणिकचन्द्र द्वि० जैन ग्रन्थमाला
ग्रन्थमाला सम्पादक
डॉ० हीरालाल जैन, डॉ० आ० ने० उपाध्ये

प्रकाशक
भारतीय ज्ञानपीठ
प्रधान कार्यालय
९, बलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७
प्रकाशन कार्यालय
दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी-५
विक्रय कार्यालय
३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

प्रथम संस्करण
वीर निर्वाण संवत् २४९५
विक्रम संवत् २०२६
सन् १९६९
मूल्य तीन रुपये

मुद्रक
सम्प्रति मुद्रणालय
वाराणसी

MĀNIKACHANDRA D. JAINA GRANTHAMĀLĀ, NO. 36

SRNGARARNAVACANDRIKĀ

(Alaṅkārasaṅgraha)

of

VIJAYAVARṆĪ

Edited by

Dr. V. M. Kulkarni,
M. A., Ph. D.

Published by

BHĀRATĪYA JÑĀNAPĪTHA

Mānsukachandra D. Jaina Granthamālā
General Editors :
Dr. H. L. Jain and Dr. A. N. Upadhye

Published by
Bhāratīya Jñānapīṭha
Head office
9, Alipur Park Place, Calcutta-27
Publication office
Durgakunda Road, Varanasi-5
Sales office
3620/27 Netaji Subhas Marg, Delhi-6

First Edition
V. N. S. 2495
V. S. 2026
A. D. 1969

Price Rs. 3/-

प्रधान सम्पादकीय

शृङ्गारार्णव-चन्द्रिका के इस सम्पादन को भारतीय विद्या के प्रेमियों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमें बड़ी प्रसन्नता हो रही है। यह रचना संस्कृत काव्यशास्त्र विषयक है जो अभी तक अप्रकाशित थी। इसके कर्ता मुनीन्द्र विजयकीर्ति के शिष्य विजयवर्णी थे और उन्होंने इसे कर्नाटक प्रदेशीय बगवाडि के कामिराज नामक नरेश की प्रार्थना से बनाया था। ये नरेश १३वीं शती के अन्त में हुए माने जाते हैं। ग्रन्थ में काव्यशास्त्र विषयक अनेक बातों का समावेश है जिनके उदाहरणों में राजा कामिराज के यश का वर्णन किया गया है। इस सम्बन्ध में यह रचना जगन्नाथकृत रसगंगाधर, विद्याधरकृत एकावली तथा विद्यानाथकृत प्रताप-रुद्रयशोभूषण से समानता रखती है क्योंकि उनमें भी समस्त उदाहरण उनके कर्ताओं द्वारा स्वयं रचित हैं और उनमें उनके सरदाकों का यशोगान भी पाया जाता है।

शृङ्गारार्णव-चन्द्रिका का प्रस्तुत सस्करण केवल एक मात्र प्राचीन प्रतिपर आधारित है जो डॉ० आ० ने० उपाध्ये को हस्तगत हुई थी और जिसे उन्होंने प्रामाणिक रीति से सम्पादन हेतु डॉ० व्ही० एम० कुलकर्णी के सुपुर्द की थी। इसकी अन्य किसी प्राचीन प्रति का कहीं से अभी तक पता नहीं चल सका है। डॉ० कुलकर्णी संस्कृत काव्यशास्त्र के बड़े लगनशील अध्येता हैं और उन्होंने वर्तमान परिस्थितियों में जहाँ तक सम्भव था वहाँ तक ग्रन्थ को उसके यथार्थ स्वरूप में प्रस्तुत करने में कोई कोरकसर नहीं रखी। उन्होंने ग्रन्थ की विद्वत्पूर्ण आलोचनात्मक प्रस्तावना भी लिखी है, जिसमें उन्होंने ग्रन्थकर्ता का इतिहास, रचनाकाल, काव्यस्वरूप, ग्रन्थनाम तथा संक्षिप्त विषय-वर्णन एवं उसके स्रोतों आदि अनेक

उपयोगी विषयों का विवेचन किया है। उन्होंने ग्रन्थ के अन्त में अनेक उपयोगी परिशिष्ट भी जोड़े हैं। यह सब सामग्री बड़ी सावधानी से प्रस्तुत की गयी है और आशा की जाती है कि वह इस काव्यशास्त्र विषयक रचना के विषयों को समझने में पाठको को बहुत उपयोगी सिद्ध होगी।

प्रस्तुत ग्रन्थमालाने संस्कृत और प्राकृत भाषाओंके अनेक अप्रकाशित ग्रन्थों को प्रकाश में लाकर जैन साहित्य की स्मरणीय सेवा की है। हम श्रीमान् शान्तिप्रसाद जी और उनकी विदुषी पत्नी श्रीमती रमाजी के बहुत कृतज्ञ हैं कि उन्होंने इस ग्रन्थमाला के भार को बड़ी उदारतापूर्वक अपने कन्धोपर वहन किया है। उनका यह कार्य जैन साहित्य के क्षेत्र में उत्साहपूर्ण कार्यकर्तियों के लिए एक सुअवसर और चुनौती भी है। संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश आदि भाषाओं में लिखित अनेक छोटी बड़ी रचनाएँ अभी भी प्राचीन भण्डारों में उपेक्षित पड़ी हुई हैं। हमारा अपने विद्वान् बन्धुओं से आग्रहपूर्वक निवेदन है कि वे इन रचनाओं को स्वच्छ रूप में सम्पादित कर प्रस्तुत करें जिससे हमारे देश का सांस्कृतिक दाय यथोचित रीति से समझा व सम्मानित किया जा सके। हमारी ग्रन्थमाला हेतु कृपापूर्वक इस ग्रन्थको सम्पादित करने के लिए हम डॉ० कुलकर्णी के बहुत कृतज्ञ हैं।

—हीरालाल जैन

—आ० ने० उपाध्ये

मूलग्रन्थस्य विषयानुक्रमणिका

१. वर्णगणफलनिर्णय ।	१
२. काव्यगतशब्दार्थनिश्चय ।	. .	८
३. रसभावनिश्चयः ।	१२
४. नायकभेदनिश्चय ।	...	२५
५. दशगुणनिश्चय ।	...	४३
६. रीतिनिश्चय ।	...	४७
७. वृत्तिनिश्चय ।	...	४९
८. शय्यापाकनिश्चय ।	५२
९. अलङ्कारनिर्णयः ।	५४
१०. दोषगुणनिर्णय ।	. .	९७



INTRODUCTION

1. CRITICAL APPARATUS

Śrngārārnnavacandrikā (ŚC) of Vijayavarnī is being published for the first time from the only available MS. Dr A. N Upadhye to whose efforts I owe this MS, could not get any other MS. of Vijayavarnī's work—perhaps it does not exist This MS on which the text is based, is in the Jainā Siddhānta Bhavana, Arrah, (Bihar) In Pīśāsatisūgraha* Pt. K, Bhujabali Sastrī describes it

Manuscript No 231 Śrngārārnnavacandrikā
Kha
Author ; Vijayavarnī
Subject Alaukāra (poetics)
Language : Sanskrit

Length 8 5" (21.6 cm), Breadth 7" (17.8 cm)
Condition Good, Manuscript . Paper manuscript, No.
of lines per folio about 11, No of letters per line
20 to 22

The MS, opens thus .

मृङ्गारणवचन्द्रिके अलकार

* Pages 73-76, published by Nirmal Kumar Jainā,
Secretary, Jainā Siddhānta Bhavana, Arrah, 1942

श्री अनन्तनाथाय नम ॥ निविघ्नमस्तु ॥

जयति ससिद्धकाव्यालापपद्माकरेय

and ends with

“श्रवणबेलुगुलक्षेत्रनिवासि. वि. विजयचन्द्रेण जैनक्षत्रियेण इद
ग्रथं समाप्त लेखीति मगलमहा ॥ श्री ॥

Generally speaking, the condition of the MS. is good but, occasionally, we are faced with lacunae in it. Wherever possible I have filled up these gaps I have corrected scribal errors, and the readings, about which I felt doubtful, I have noted in the footnotes. In some cases I have corrected the readings by referring to the passages in the books used by the author. I have spared no pains in presenting the text of ŚC as faithfully as was possible in the circumstances.

2. THE PERSONAL HISTORY OF VIJAYAVARNĪ

Nothing is known about the personal history of Vijayavarni beyond what he has himself told us in the praśasti and the puspikā to his work¹ he was a disciple of Munindra Vijayakīrti, a devout adherent of the doctrine of Syādvāda, propounded by the great Jinas.
²In the course of a literary discourse he was once asked

1 इति परमजिनेन्द्रवदनचन्द्रविनिर्गतस्थाद्वादचन्द्रिकाचकोरविजयकीर्ति-
मुनीन्द्रचरणाम्बुचञ्चरीकविजयवर्णिविरचिते श्रीवीरनरसिंहकामिराजवङ्ग-
नरेन्द्रशारदिन्दुसनिभकीर्तिप्रकाशके

2 स राजा काव्यग्रहोषु सभाजनविभूषिण ।

अष्टद्वितीय नाम्ना कविताशक्तिभासुरम् ॥ I 19

It appears, Vijayavarni was also known as Dvitiya.

by King Kāmirāja of Bangavādi to explain the various aspects of poetics. At the King's request he composed *Alaṃkārasaṃgraha* called *Śiṅgārārṇavacandrikā* (SC).

³ This work, while elucidating the different topics in poetics, sings the glory of King Kāmirāja through the examples with which he illustrates the different points.

⁴ In the introduction to his work he particularly refers to the poetry of Karnāta poets like Gunavarman. This reference would lead us to believe that he had himself studied their poetry. A perusal of this SC would reveal that he had studied the standard works on poetics namely, those of Daṇḍī, Bhoja, Dhanañjaya, Mammata and the like. Vijayavarṇī was in personal association with King Kāmirāja. Naturally, his date depends on that of King Kāmirāja.

3 DATE OF KING KĀMIRĀJA

In his *Praśasti* the author gives the geneology of his patron, and according to Pt Bhubabali Sastrī and Dr Nemicaandra Sastrī, our author's information does not conflict with historical facts. Viranarasimha ruled at Bangavādi (1157 A D). He had a brother called

3. Vide footnote No. 1, supra.

4 गुणवर्मादिकर्नाटकमीनां सूक्तिसंचय ।
बाणविकास देयास्ते रतिकानन्दरायिनीम् । 17

Pāṇḍyarāja. Candraśekhara, the son of Vīranarasīṃha, ruled at Bangavādī (1157 A.D), He had a brother called Pāṇḍyarāja Candraśekhara, the son of Vīranarasīṃha, came to the throne in A D 1208, and his younger brother Pāṇḍyappa, in A D 1224 Vitthalādevī, their sister, was appointed regent in A. D 1239 Then her son, called Kāmīrāja, came to the throne in A D 1264⁶

Our author wrote his ŚC at the request of this King Kāmīrāja (name is spelt as Kamarāyā, Kāmīrāya and Kāmīrāya in the MS) Vijayavarṇī must have, therefore, composed his ŚC in the last quarter of the thirteenth century (A D)

A comparative study of the nearly common or corresponding passages between ŚC and Pratāparudrayaśobhūṣiṇa(PRY),and ŚC and Alaṃkārasaṃgraha, however, raises doubts regarding the date of composition of Vijayavarṇī's work Dr Kane assigns PRY to the first quarter of the fourteenth century. Pandit Balakrishnamurti assigns Amṛtānandayogin to the thirteenth

5 Vide infra, Sources of ŚC

6 Vide Praśasti-saṃgraha (pp 76-78) edited by Pt K Bhujbalī Sastri, Arrah, 1942 and "दो अलंकार ग्रन्थोकी पाण्डुलिपियाँ" by Dr Nemicandra Sastri in Jaina-Siddhānta Bhāskara, Part XXIII, Kīraṇa I, Dec 1963

century, whereas C. Kuhnán Raja assigns him to the beginning of the second half of the fourteenth century. The date of Amrtánandayogin remains thus uncertain. A comparative study instituted by me leads me to believe that Vijayavarnī has much common with PRY and Alaṅkaraśaṅgraha for the treatment of a few topics. In the present state of our knowledge the question of Vijayavarnī's date evades definite determination, and it is but right to keep it open till definite and conclusive evidence comes forth.

4 VIJAYAVARNĪ'S POETRY

In the introduction to his ŚC Vijayavarnī refers to himself as *Kaviśaktibhāśura*⁷ and as '*Kavīśvara*'⁸ and to his own work in glowing terms⁹. For his *Kārikās* he is deeply indebted to authoritative works on poetics and he expressly states, on a few occasions, that he has followed '*Pūrva-sāstra*'. The illustrations and introductory stanzas are, however, his own. A few of these illustrations would appear to have been modelled on those found in his authorities. Considering his verses it is difficult to admit his claim to high poetic power or to the title '*Kavīśvara*'. His poetry is rather

7 I 19

8 I 26

9 I 23-28

pedestrian and highly conventional. There is hardly anything which enlivens his ŚC. His ślokas are easy to understand. At handling elaborate metres he is not so adept. He is guilty at a number of places of the metrical defect called yatibhanga. He profusely uses expletives. Occasionally, we come across similes which are striking¹⁰, but the work, as a whole, has value rather for its subject-matter than for its literary merit.

5 THE TITLE OF THE PRESENT WORK

In the course of his introduction¹¹ to the present work the author tells us that at the request of King Kāmurāja he composed Alankāra-saṅgraha called ŚC. The colophon¹² refers to the title as “Śṛṅgārārnava-candrikā-nāmnī alankāra-saṅgrāhe ”. From these references it is crystal clear that the author gives ‘Alankāra-saṅgraha’ as the general name to the work and ŚC as the distinguishing appellation. The name ‘Alankāra-saṅgraha’ consists of two words (1) alankāra and (2) saṅgraha. The word alankāra stands here

10 III I, IX 62

11 इत्थं नृपप्रार्थितेन मया लङ्कारसंग्रहः ।

क्रियते मूर्तिना नाम्ना शुक्लारणवचन्द्रिका ॥ I 22

12 Vide colophon at the end of Chapters I, II, IX and X

विजयवर्णिविरचिते शुक्लारणवचन्द्रिकानाम्नि अलङ्कारसंग्रहे

obviously not in its restricted sense of figures of speech but in its wider sense denoting all such factors as word and sense that should find place in poetry, *rasa*, *bhāva*, *guna*, *vṛtti*, *rīti*, *śayyā*, *pāka* *alaṅkāras* and *doṣas* (which poet should avoid in his composition), in short, Sanskrit poetics *Samgraha* primarily means a collection but here it signifies a compendium¹³ or a brief exposition. *Alaṅkāra-samgraha* therefore means 'A compendium or a brief exposition of Sanskrit poetics¹⁴', and metaphorically, the work dealing with it

According to some, *saṃgraha* comprises three parts, namely, *uddeśa* (simple enumeration), *laksana* (definition) and *parīksā* (examination or exposition). The present work contains all the three.

The title SC is made up of three words 1 *Sṛṅgāra*, 2 *arnava* and 3 *candrikā*. The word *śṛṅgāra* denotes one of the eight or nine *rasas* bearing that name, *arnava* means an ocean, and *candrikā* moonlight. The whole title, therefore, means 'Moonlight to the ocean of *Sṛṅgāra*¹⁵. The word *candrikā*¹⁶ at the end

13 समग्र सचिच्य ग्रहण स्वोकार सचयनमिचर्थ । अथवा सक्षेपेण स्वरूपकथनम् ।

14 अलङ्काराणां समग्र सक्षेपेण स्वरूपकथनमित्यर्थ ।

15 शृङ्गारोऽर्णव एव तस्य चन्द्रिका प्रकाशिका इत्यर्थ ।

16 The words कौमुदी and चन्द्रिका convey this sense when they stand at the end of compounds. Compare the titles तर्ककौमुदी, वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी, सांख्यतत्त्वकौमुदी etc and रसचन्द्रिका, काव्यचन्द्रिका, नाटकचन्द्रिका, अलङ्कारचन्द्रिका, चमत्कारचन्द्रिका, etc.

of compounds means elucidation or throwing light on the subject treated. The author compares his work with *candrikā*—moonlight, which is so very lovely and delightful, and thereby suggests that it is a delight to read and study his work which is (implicitly claimed to be) so lucid in its method of composition and style.

The title may also be explained as “The work imparting special knowledge about poetics covering *śrngāra-rasa* and allied topics”¹⁷

The work does not prominently treat of *śrngāra* nor the author has anything new to say regarding *śrngāra* as Bhoja had in his *Śrngāraprakāśa*. The reason why *śrngāra* finds a place in the title is probably this *Śrngāra-rasa* is regarded as the prince (queen?) among sentiments (*rasarāja*). When this very essential and vital topic of poetics is mentioned in the title, it automatically follows that other, comparatively less important, topics of poetics are implied by it or covered under it.

6 A BRIEF SUMMARY OF THE CONTENTS OF SC

The work opens with a homage to Lord Jina, and goes on to describe some of the predecessors of King

17 शृङ्गारोऽर्णव एव तस्य चन्द्रिकेव (उच्छूनयन्ती-वर्धयन्ती) चन्द्रिका ।
शृङ्गाररसादि साहित्यशास्त्रविषयक विशिष्ट ज्ञान बोधयन्तीत्यर्थ ।

Kāmarāja, the patron. The first chapter¹⁸ mainly deals with consequences ascribed to initial letters of any composition and to the metrical feet employed in it

The second chapter¹⁹ enumerates seven groups of poets and deals with fourfold sense and fourfold power of word

The third chapter²⁰ deals with Rasa, Bhāva and their varieties with illustrations of each and every type

The fourth chapter²¹ is a study of the types of hero and heroine and their friends and messengers and their rivals

The fifth chapter²² treats of ten Gunas

The sixth chapter²³ makes a study of Rīti and its kinds

The seventh chapter²⁴ deals with Vitti and its varieties.

The eighth chapter²⁵, which is the shortest of all, deals with the concepts śayyī of and pāka

-
- 18 Chapter I (vv 1-63) Varnagaṇaphala-nirṇaya
 19 Chapter II (vv 1-42) Kāvya-gata śabdātītha niścaya
 20 Chapter III (vv 1-130) Rasabhāvanīścaya
 21 Chapter IV (vv 1-163) Nāyaka-bhedanīścaya
 22, Chapter V (vv 1-31) Daśa-guṇanīścaya
 23 Chapter VI (vv 1-17) Rītinīścaya
 24 Chapter VII (vv 1-16) . Vīttinīścaya
 25 Chapter VIII (vv 1-10) Sayyā-pāka-nīścaya

The ninth chapter²⁶, which is the longest of all deals with Arthālankāras

Lastly, the tenth chapter²⁷ treats of Dosas in a poetic composition and also of circumstances when they cease to be so.

7. SOURCES OF THE ŚC

A striking feature of this work is that all the examples given as illustrations of the different points, are composed by Vijayavarnī himself and go to glorify King Kāmīrāja. In this respect it resembles Vidyādharma's Ekāvalī (1285-1325 A D) Vidyānātha's PRY (1300-1325 A D)

As the work is composed in the decadent period of Sanskrit literature and as it deals with a scientific subject, poetics, on which authoritative treatises of masterminds were already in existence, it would not be fair on one's part to expect any originality or contribution to poetics from Vijayavarnī. Occasionally, he clearly states that his descriptions are in accordance with earlier authorities.²⁸ A perusal of his work reveals

26 Chapter IX (vv 1-310) Alaukāranīṣcaya

27 Chapter X (vv 1-197) Doṣaguna-nīṣcaya

28 अत अतो कारणतोऽस्माभिरुच्यते रसलक्षणम् ।

पूर्वशास्त्रानुसारेण भावभेदविशेषितम् ॥ III 2

अतोऽगुणा प्रकीर्त्यन्ते पूर्वशास्त्रानुसारत ।

कामिराय नराधीश श्रूयतां भवताधुना ॥ V 3

अन्ये विकल्पा द्रष्टव्या आक्षेपाणां निवृत्तम् ।

मया शास्त्रानुसारेण दिग्मात्र सप्रदर्शितम् ॥ IX 174

that he had carefully studied the authorities on poetics. The matter relating to the predictive character of the initial letters and metrical feet, which the author treats of in Chapter I, is generally described in works on metrics. Some early works on metrics are irretrievably lost but a few passages from such works are preserved in the works of later writers where they are quoted, perhaps directly from the original sources but mostly they appear at second hand, quoted from some writer who quotes them. Thus some ślokas are quoted by Nārāyanabhāṭṭa in his commentary on Vṛttaratnākara with the introductory remark taduktam Bhāmahena²⁹. These ślokas inform us of Varna-phala and Guna-phala. It is very doubtful if this Bhāmaha is the same man who wrote Kāvya-lankāra'. Nārāyanabhāṭṭa also quotes some passages describing the deities of Ganas and auspicious or inauspicious character of the initial Ganas with the introductory remark

अन्यैस्तु देवताफलस्वरूपाण्येषामुक्तानि—

It is the authors of Alankārsangraha and ŚC who have introduced this topic in works on poetics. In Chapter II the author gives a sevenfold classification of poets based on their taste or aptitude for a particular type of literary composition. This classification is

29 Vide appendix-C

somewhat different from the eightfold classification of poets given for the first time by Rājasēkhara in his *Kāvya-mīmāṃsā*³⁰ Whereas Rājasēkhara names the groups of poets and adds stanzas to illustrate the type of literary composition of each one of them, Viṣayavarnī gives a definition of each one of the groups of poets but does not illustrate the types of their literary composition—ŚC and *Alankārasaṅgraha*, however, agree in their classification and definition of groups of poets leading to the conclusion that one of them must have borrowed from the other³¹.

In the same chapter the author treats of the fourfold sense of words 1 Mukhyārtha with its four kinds ((i) Jāti (ii) Kriyā (iii) Guna and (iv) Dravya) 2 Lak-yārtha 3 Gaunārtha and 4 Vyangyārtha, and the fourfold power of words . 1 Abludhā 2 Laksanā (with its three kinds (i) Jahatī (ii) Ajahatī and (iii) Jahatyajahatī) 3 Gaunī and 4 Vyañjanā It is the Mīmāṃsakas who look upon Gaunī as a separate power of words³² This whole discussion is, generally speaking, based on *Kāvya-prakāśa* (Ullāsa II and III)

30. Vide Appendix-C

31. Vide Appendix-D

32. योगवृत्तिर्लक्षणात् भिन्नैति प्रभाकरा । *Ratnāpana* (p 44)

Vidvānātha, however, emphatically says योगवृत्ति-
रपि लक्षणाप्रभेद एव । *Pratāprudrayaśobhūśana* (pp
44-45)

In Chapter III the author deals with Rasa and Bhāva and their divisions. He treats of nine Sthāyī-bhāvas, nine Rasas, Vibhāvas (Ālambana and Uddīpana), Anubhāvas, eight Sāttvika bhāvas and thirty three Vyabhicāri (Sañcāri) bhāvas, and such details about Rasas as the primary and the derivative Rasas, (their inter relations), their harmonies and conflicts, their colours (Varna) and their presiding deities (Adhīdevatā). He clearly acknowledges his indebtedness to ancient or earlier authorities on the subject³³. A study of his definitions of technical terms relating to Rasa-Bhāva and the like corroborates his statement. Two points, however, deserve special mention his description of the different factors relating to Śānta-Rasa is typically Jain³⁴ and is original, another remarkable point is that the author mentions Para-Brahma as the presiding deity of Śrngīra. In his celebrated commentary³⁵ on Nāṭya-śāstra Abhinavagupta writes

वीरो महेन्द्रदेव स्यात् बुद्ध शान्तोऽब्जजोऽद्भुत । इति शान्तवादिन
केचित् पठन्ति । बुद्धो जिन परोपकारकपर प्रबुद्धो वा ।

From this statement it is clear that the author had not Abhinava-bhāratī before him but some other text where

33 अतः कारणतोऽस्माभिरुच्यते रसलक्षणम् ।
पूर्वशास्त्रानुसारेण भावभेदविशेषितम् ॥

—§C III 3.

34 III 109-112

35 Abhinavabhāratī Vol I p 299

Para-Brahman has been mentioned as its presiding deity. No early work on Alankārasāstra which would be regarded as standard and well-known makes any reference to Para-Brahman as its presiding deity. Dr. Raghavan states that "the Alankārasarvasva of Harsopādhyāya (?), written for one Gopāladeva, makes the supreme spirit, Para-Brahman, as the Devatā of Sānta³⁶. We, however, do not know the exact date of this work which would have enabled us to determine the inter-relation between these two works. Alankārasangraha of Amrtānandayogin speaks of Para-Brahman as the presiding deity of Sānta-rasa. There is a close agreement between ŚC of Vijayavarṇī and Alankārasangraha of Amrtānandayogin in their treatment of some common topics from poetics³⁷. The dates of these two works as proposed by scholars³⁸ do not, however, permit us

36 The Number of Rasas (p 50) The Adyar Library, Adyar, 1940

37. See Appendix-D

38 For the date of Vijayavarṇī vide pages 2 and 3 supra. For the date of Amrtānandayogin, vide Introduction to Alankāra-sangraha (pp iv to vi) edited by Pandita Balakrishnamurti, Sri Venkatesvara Oriental Institute, Tirupati (1950) and Introduction to Alankārasangraha (pp XXXVIII-XLIII) edited by V. Krishnamācharya and K. Rāmachandra Sarma (The Adyar-Library Series- No. 70, 1949).

to state categorically that Vijayavarṇī has drawn upon Amṛtānandayogin's work.

In Chapter IV the author deals with characters : the hero, the heroine and their types, the enemies of the hero and the Dūtīs. A comparative study of this chapter and the second Prakāśa of Daśarūpaka reveals that Vijayavarṇī is heavily indebted to Dhanarṇjaya in his treatment of the characters³⁹. He differs with Dhanarṇjaya on three points

1 Dhanarṇjaya speaks of three friends (Sahāyas) of the hero⁴⁰: 1. Pīthamarda (patākānāyaka), 2 Vita, and 3 Vidūsaka. Vijayavarṇī adds the fourth Nāgarika⁴¹ to the list

2. Dhanarṇjaya mentions three types of heroines⁴²: 1. Svīyā (= Svastri or Svakīyā), 2 Anyā (= Anyastrī or Parakīyā) and 3 Sādhāranastri (Sādhāraṇā).

Vijayavarṇī makes them four⁴³ by adding one more type, viz Anūdhā. He, however, says that according to one view, Anūdhā is parakīyā only and hence there are three types of heroines only.

39 Vide Appendix-C

40. Daśarūpaka II, vv 8-9 (ab)

41. ŚC IV. vv 29-32.

42. Daśarūpaka II, v15 (ab) and vv20 (cd)-22 (ab).

43. ŚC IV, vv 43-59.

3. In Dhananjaya's view if absence is due to death the love sentiment cannot be present⁴⁴. Vijaya-varṇī advocates the view that Kaiuṇātmaka-vipralambha can be present if one of the two, (the lover and his-beloved) passes away and the other laments his or her death⁴⁵ Now, Vidyānātha⁴⁶ also speaks of four Sahāyas of the hero but his list has Ceta and no Nāgarika. Rudrata⁴⁷ and Dhananjaya⁴⁸ speak of two types of Parakīyā or Anyas'rī Kanyakā and Anyodhā Vijaya-varṇī mentions Parakīyā and Anūdihā (= Kanyakā) separately and makes four types of heroines Of course, he is fully aware of the views of Rudrata and Dhananjaya that Anūdihā (= Kanyakā), too, is regarded as not one's own (Parakīyā) Finally, in setting forth the four kinds of Vipralambha'srṅgāia he has followed Rudrata⁴⁹

44 Daśarūpaka IV, vv 50-51 (ab) and vv 57-68

45 ŚC IV, v 103 and v 110

46 Pratāparudrava-obhūṣana, Kāvya-prakarana, v 40

47 परकोया तु द्वेधा कन्योडा चेति ते हि जायेते ।

—Kāvya-lamkāra XII-30 (ab)

48 अन्यस्त्री कन्यकोडाच ।

—Daśarūpaka II-20 (c)

49 अथ विप्रलम्भनामा शृङ्गारोऽयं चतुर्विधो भवति ।

प्रथमानुरागमानप्रवासकरुणात्मकत्वेन ॥

—Kāvya-lamkāra XIV-1

and,

करुणं स विप्रलम्भो यत्रान्यतरौ त्रिवेदं नायकयोः ।

यदि वा मृतकरुणं स्यात्तत्रान्यस्तद्गतं प्रलपेत् ॥

—Kāvya-lamkāra XIV-34

In Chapter V the author treats of Guṇas. A careful and comparative study of the definitions of these ten Guṇas with those given in the Kāvyaḍarśa reveals that Vijayavarṇi closely followed Daṇḍī⁵⁰, and occasionally Vāmana⁵¹ Vijayavarṇi paraphrases Daṇḍī's definitions⁵².

In Chapter VI the author treats of Rīti and its four kinds 1 Vaidarbhī 2 Gaudī, 3. Pāñcālī, and 4. Lāṭī.

50. Vijayavarṇi's statement :

एते दशगुणा प्रेक्ता दश प्राणाश्च भाषिता । —V-5(ab)

Unmistakably reminds us of Daṇḍī's

इति वैदर्भमार्गस्य प्राणा दश गुणा स्मृता । —Kāvyaḍarśa 42 (ab)

51 Cf अधवा पदबन्धस्योज्ज्वलत्वं कान्तिरुच्यते । —V-16 (ab)

and औज्ज्वल्य कान्ति । ३. १ २५

बन्धस्योज्ज्वलत्वं नाम यदसौ कान्तिरिति ।

—Kāvyaḍarśa-Sūtravṛtti

52 I give here only two examples :

(1) Cf श्रुतिष्वेतोद्भयानन्दकारिणां कोमलात्मनाम् ।

वर्णानां रचनान्यास सौकुमार्यं निरूप्यते ॥ —V, 6

and, अनिष्ठुराक्षरप्रार्यं सुकुमारमिहेष्यते ।

बन्धशैथिल्यदोषोऽपि दर्शित सर्वकोमले ॥

सुकुमारतयैवेतदारोहति सतां मन ।

—Kāvyaḍarśa I 69-71

(11) Cf प्रयुक्तो लौकिकार्थोऽपि यथा भवति सुन्दर ।

सा कान्तिरुदिता सद्भिः कलागमविशारदे ॥ —V 15

and कान्तं सर्वजगरकान्तं लौकिकार्थानतिक्रमात् ।

तरुच वार्ताभिधानेषु वर्णनास्वपि दृश्यते ॥

—Kāvyaḍarśa I 85

It is Rudrata⁵³ who for the first time added *Lāṭī* to the three well known *Rītis* set forth by *Vāmana*, *Agnipurāṇa*⁵⁴ and *Jayadeva's Candrāloka*⁵⁵ too speak of these four *Rītis*. In *Bhoja's Sarasvatikanṭhābharana*⁵⁶ the *Rītis* number six with the addition of *Āvantikā* and *Māgadhī*.

The definition of *Rīti* given by the author is in agreement with the one set forth by *Vidyānātha* in his *PRY*⁵⁷. *Vidyānātha*, however, speaks of three *Rītis* only, omitting *Lāṭī* as has been done by *Mammata*.

53 Rudrata II 3-6 *Vāmana* distinguishes *Rītis* on the basis of qualities (*Guṇas*) present whereas *Rudrata* distinguishes them on the basis of the use of compounds. *Viṣayavarṇi* clearly says that *Rītis* are based on the qualities possessed by words. In his definitions of *Rītis*, however, he follows these two principles.

54 Chapter 340, vv I-4 Dr *Raghavan* corrects the text of the fourth stanza (vide *Some Concepts of Ālamkāra Śāstra*, p 180, f n 1)

55 *Mavāṅkha* VI 21-22

56 *Pariccheda* II, *Kārikās* 2-3

57 Cf रातिर्नाम गुणारिण्यपदमघटना मता । —PRY p 63
and माधुर्यादिगुणापेतपदानां घटनात्मिका ।

—*Śrngārāṇavacandrikā* VI-3

Vidyānātha's definition is, however, based on *Vāmana's Sūtras* 1, 2, 7 8

The definitions of the four Rītis as laid down in ŚC⁵⁸ and Alamkārasaṅgraha are in close agreement. The definitions of the three Rītis are partly in agreement with those of Vāmana⁵⁹.

In Chapter VII the author treats of six Vrttis— 1. Kaiśikī, 2. Ārabhatī, 3 Bhāratī, 4 Sāttvatī, 5. Madhyamā Kaiśikī and 6 Madhyamā Ārabhatī. These six Vrttis are first dealt with by Bhoja in his Sarasvatikanthābharana, but as Śabdālamkāras (Chapter II. 34-38) and after him by Vidyānātha in his PRY (Kāvya-prakaraṇa, pp 57-63) Vijayavarṇī's treatment of this topic bears remarkable resemblance to that of Vidyānātha's⁶⁰.

In chapter VIII we find an exposition of the conception of Śayyā and Pāka. No doubt, the conception of Pāka is found in Vāmana's Kāvyaalamkārasūtra-vrtti and Rājasekhara's Kāvya-nimānsā, but the striking thing is that the definitions of Śayyā and Pāka as given by Vijayavarṇī are in close agreement with the corresponding ones in Vidyānātha's PRY⁶¹

58. Chapter VI, vv 5-7, 9 11 and 13
and Chapter V vv 9-12.

59 Kāvyaalamkārasūtravrtti 1-2 11-13.

60. Vide Appendix-C

61 If it were accepted that Vijayavarṇī modelled his definitions of Sayyā and Pāka on those of Vidyānātha

पदानामानुगुप्य बान्धोन्धमित्रत्वमुच्यते ।
यत् सा शय्या कलाशास्त्रनिपुणैर्विदुषा बरे. ॥

—VIII ३

Cf या पदाना परान्धोन्धमैत्री शय्येति कथ्यते ।
अत्र पदविनिमयासहिष्णुत्वाद् बन्धस्य
पदानुगुप्यरूपा शय्या ।

—PRY p 67

आलम्ब्य शब्दमर्थस्य द्राक् प्रतीतिर्यतोऽजनि ।
स द्राक्षापाक इत्युक्तो बहिरन्त स्फुरद्रस ॥
आलम्ब्य शब्दमर्थस्य द्राक्प्रतीतिर्यतो न हि ।
स नालिकेरपाक स्यादन्तर्गण्ड (? गूढ) रसोदय ॥

VIII. 6-7.

द्राक्षापाक स कथितो बहिरन्त स्फुरद्रस ।
स नारिकेलपाक स्यादन्तर्गूढरसोदय ॥

PRY pp 67-69

In Chapter IX the author gives an exposition of 47 Arthālaṅkāras. Of these, he defines the first 33 Arthālaṅkāras, including 33 divisions of Upamā and 20 divisions of Rūpaka, after Dandī's Kāvyaḍarśa¹². The rest of the Arthālaṅkāras are possibly defined by the author keeping in view Rudrata's Āryās dealing with them

we would have to reconsider the date of composition of ŚC

62 Vide Appendix-C.

In Chapter X the author treats of Kāvya-doṣas viz; Pada-doṣas, Vākya-doṣas, Artha-doṣas and Rasa-doṣas, and also describes the circumstances in which the Doṣas cease to be so His treatment of Kāvya-doṣas clearly reveals his considerable indebtedness to Mammata⁶³ who treats of the Doṣas in his Kāvya-prakāśa (Ullāsa VII) Mammata has utilised earlier writers on this topic and added new Doṣas which he himself has discovered Vijayavarnī follows Mammata's classification of Doṣas in toto.

8 ACKNOWLEDGEMENT

In conclusion, I acknowledge my deep indebtedness to Dr. A N Upadhye, M A, D Litt, Dean, Faculty of Arts, Shivaji University, Kolhapur, at whose suggestion this work of editing SC from a single manuscript was entrusted to me It is he who gave me the Ms and requested me to edit this work He has all along been taking kindly interest in the progress of my work and its publication I can never adequately express in words what I owe to Pandit Balacharya Khuperkar Shastri who has taken keen interest in this work and made valuable suggestions for emending the text as

63 Vide Appendix-C.

correctly as possible. It was, indeed, my proud privilege to spend hours together with him discussing matters relating to Sanskrit poetics in general and the text in particular I offer my warmest thanks to my friend Professor G S. Bedagkar, who kindly went through the Introduction and made valuable suggestions to improve it. However, for whatever imperfections still left in the work, I am entirely responsible.

The Author acknowledges his indebtedness to the Shivaji University, Kolhapur, for the grant-in-aid received by him from the University, towards the cost of Publication of this book,

Rajaram College, }
 KOLHAPUR, }
 August 25, 1966. }

V M KULKARNI

DETAILED TABLE OF CONTENTS

Chapter I

Varna-Gana-Phala-Nirṇaya

[A Study of (Initial) Letters and Metrical Feet and
their Promise]

Verses

- 1 Homage to Lord Jina.
- 2-3 Homage to Śārādā and Sarasvatī.
- 4-5 Homage to Vijayakīrti, the author's Guru.
- 6 Victory to Good Men.
- 7 Tributes to Karnātaka Poets like Gunavarman.
- 8-18 A brief description of Kadamba Kings :
Vīranarasimha, Pāṇḍyarāja—his brother,
Rājaśekhara, the son of Vīranarasimha,
Kāmīrāja, the Maternal nephew of Pāṇḍya-
vanga and contemporary of the author who
ruled over Vanga (Banga)-bhūmi with
its Capital at Vanga (Baṅga)-vāṭī
- 19-21 Kāmīrāja requested the author when
meeting in a Literary Club to explain the
nature of poetry and allied topics.

- 22-28 At the King's request the author composed this work called Śrngārārṇava-Candrikā.
- 29-32 Kāvya (Literature) and its kinds .
Padya (Verse), Gadya (Prose) and Mīśra (Mixed), these three varieties are then defined and subdivided into nine divisions on the basis of their being Uttama, Madhyama or Jaghanya These three terms are then defined.
- 33 The poem should begin with a prayer, paying homage or in addition invoking a blessing, or an indication of the subject-matter.
- 34-35 The present composition begins with varna-gana-suddhi, which contributes to the good of the poet and the hero Its absence would bring disastrous consequences to the poet as well as the hero
- 36-45 Initial alphabets and what they promise.
- 46-47 A poem should not begin with any conjunct except Kṣa for a suddha letter when conjoined with another letter turns asuddha and brings evil consequences
- 48-62 (Initial) metrical feet and what they promise, the nature of a long and a short

syllable, of the eight-fold metrical feet to be employed in Varnavrttas, and five metrical feet, each consisting of four mātrās to be employed in Mātrāvrttas and assigning of the Devatās to each and every one of the metrical feet.

- 63 Conclusion : "May the fame of King Kāmirāja shine bright."

Chapter II

Kāvya-gata-sabdārtha-niscaya

[A Study of Words and Senses that constitute Poetry]

- 1-2 Alternative definitions of a poet
 3-7 Seven Types of Poets and their definitions
 3 defines a Raucika poet
 4 defines a Vācika poet as well as an Ārtha one
 5 defines a Śilpika poet as well as a Mārdavānuga one.
 6-7 define a Viveki poet as well as a Bhūsaṅārthī one.
 8-9 The Sense of Sentences composed by poets is fourfold

1. Mukhyārtha, 2 Lakṣyārtha; 3. Gaunārtha; and 4. Vyāṅgyārtha.
- 10-12 definition of Mukhyārtha, its fourfold classification based on 1. Jāti; 2. Kriyā; 3 Guṇa; and 4. Dravya, and illustrations.
- 13-21 Definition of Lakṣyārtha, Lakṣanā and its three varieties
1 Jahallakṣanā, 2. Ajahallakṣanā and 3. Jahatyajahatī, and their illustrations.
- 22-23 Definition of Gaunārtha and its illustrations
- 24-25 Definition of Vyāṅgyārtha or Dhvani and its illustration
- 26 Informs us that Śabda-śakti is fourfold :
1 Abhidhā, 2. Lakṣanā, 3. Gaunī, and 4. Vyāñjanā
- 27-31 deal with the causes (Niyāmakas) of the apprehension of a particular meaning when there is no determination or decision regarding the meaning of a word These are
1 Saṁyogah (Conjunction); 2. Viprayogah (Disjunction), 3. Virodhitā (Antagonism or Hostility); 4 Sāhacaryam (Association), 5. Kāla (Time), 6 Arthah (Purpose or Motive), 7. Prakaraṇam (Context);

- 8 *Lingaṅ* (Special attribute or Characteristic); 9. *Śabdāntarasannidhiḥ* (Proximity of another word), 10. *Sāmarthyāṅ* (Capability or Power); 11 *Aucityāṅ* (Propriety or Fitness); 12. *Vyaktiḥ* (Gender); 13. *Deśah* (Place); 14. *Svarādayaḥ* (Accent and others).
- 32-40 (ab) illustrate first thirteen causes (*Niyāmakas*).
- 40(cd)-41 *Gānasvara* is of no avail in poetry although it helps in determining the sense of a word in *Vedas Ādi* (in-Svarādi) includes *Cestādi*. Its illustrations should be found by the wise
- 42 Conclusion "May the valour of Kings *Vīranrsūharāya* ever shine in all its glory."

Chapter-III

Rasa-bhāva-niscaya

[A Study of Rasas and Bhāvas]

- 1 A poem though having flawless syllables and metrical feet, words and senses, is not liked if it be devoid of *Rasa*.
- 2 Hence the author undertakes in this Chapter an exposition of *Rasas* and *Bhāvas*.

- 3 Definition of Sthāyibhāva.
- 4 Sthāyibhāva is ninefold: 1. Rati; 2. Hāsa; 3 Śoka, 4 Kopa; 5. Utsāha; 6. Bhaya; 7. Jugupsā, 8. Vismaya, and 9 Sama.
- 5 Definition of Rasa
- 6-7 Rasa is nine-fold 1. Śrngāra; 2. Hāsyā, 3 Karuna, 4 Raudra, 5. Vīra, 6 Bhayā naka, 7 Bībhatsa, 8 Adbhuta, & 9 Śānta.
- 8 Definition of Śrngāra-rasa.
- 9 Definition of other Rasas
- 10 In the case of poetic compositions Rasa is experienced by appreciative readers or hearers only.
- 11 In the case of dramatic compositions it is experienced by spectators
- 12 Definition (or etymological explanation) of Bhāva.
- 13 Bhāva is four-fold, 1 Vibhāva, 2 Anubhāva, 3 Sāttvika, and 4 Vyabhicāri
14. Definition of Vibhāva which is two-fold : Ālambana and Uddīpana
- 15 Definition of Ālambana and Uddīpana Vibhāvas
- 16 Definition of Anubhāvas.
- 17 Definition of Sāttvika-bhāvas

- 18 Sāttvika-bhāvas are eight-fold · 1. Sveda;
 2. Kampana (= Vepathu) 3. Romāñica;
 4 Laya (= Pralaya), 5 Stambha; 6. Vivar-
 ñatā (= Vaivarnya), 7. Vikārasvaratā
 (= Svarabheda, Vaisvarya) and 8. Aśru.
- 19 Definition of Vyabhicāri-bhāvas
- 20-22 List of thirty-three Sañcāri (= Vyabhicāri)
 bhāvas
1. Śankā, 2. Glāni, 3. Nirveda, 4 Jāḍya;
 5. Harsa, 6 Dhrti; 7. Śrama, 8. Dainya,
 9. Augrya, 10. Trāsa, 11. Cintā, 12 Īrsyā,
 13 Amarsa , 14 Garva , 15. Mada ,
 16. Smrti, 17. Marana, 18. Supti, 19 Nidrā,
 20. Avabodha , 21. Vrīḍā , 22. Visāda ,
 23. Vyādhi, 24. Apasmāra, 25. Cāpalya,
 26. Mañi, 27. Moha, 28 Autsukya, 29. Ava-
 hittha, 30. Ālasya, 31. Vega, 32. Tarka,
 and 33. Unmāda.
- 23 In an actor Rasa is imagined to be present,
 but in a spectator it is really present.
- 24 In this world Rasikas enjoy Rasas in accor-
 dance with their own Karman.
- 25 Having described the different factors, in a
 general way, of the different Rasas the
 author now proposes to describe particularly
 the factors relating to Śrngāra-rasa.

- 26-35 Various factors relating to Śrīngāra-rasa are set forth in detail
- 36 Śrīngāra is two-fold 1. Sambhoga & 2. Vipralambha.
- 37-38 Definition of Sambhoga-Śrīngāra and its illustration
- 39 Sambhoga-Śrīngāra is two-fold 1. Pracchanna and 2 Prākāsa, their definitions.
- 40 Vipralambha-Śrīngāra is four-fold, 1. Pūrvānurāga, 2. Māna, 3. Pravāsa, and 4 Karuṇa.
- 41 Sambhoga and Vipralambha have reference to lovers in union and lovers in separation respectively.
- 42-43 Ten Kāmāvasthās : 1. Nayana-prīti, 2 Manasah sakti, 3. Saṅkalpa, 4. Jāgara, 5. Tanutā, 6. Visaya-dvesa, 7 Lajjavināšana, 8 Moha, 9. Mūrcchana, and 10 Marana.
- 44-45 Definition of Caksuh-prīti (=Nayana-prīti) and its illustration.
- 46-47 Definition of "Manasah sakti" and its illustration
- 48-49 Definition of Saṅkalpa and its illustration
- 50-51 Definition of Jāgara
- 52-53 Definition of Tanutā and its illustration.

- 54-55 Definition of Viṣaya-dveṣa and its illustration.
- 56-57 Definition of Trapānāśa (=Lajjānāśa) and its illustration.
- 58-59 Definition of Moha and its illustration.
- 60-61 Definition of Mūrccā and its illustration.
- 62-63 Definition of Marana and its illustration.
- 64 Definition of Hāsya-rasa
- 65-68 Factors relating to Hāsya-rasa are set forth in detail.
- 69-70 Hāsya-rasa is three-fold: Uttama, Madhyama and Jaghanya: Smita and Hasita belong to Uttama category, Vihasita and Upahasita to Madhyama category, and Apahasita and Atihasita to Jaghanya category.
- 71-72 (ab) Definitions of these types of Hāsya.
- 72 (cd)-73 Illustration of Hāsya-rasa
- 74-75 (ab) Definition of Karuṇa-rasa which is two-fold: born of Istanāśa, and 2 Anistāpti
- 75(cd)-77 Factors relating to Karuṇa-rasa are set forth in detail.
- 78-79 Illustrations of two-fold Karuṇa-rasa.
- 80 Definition of Raudra-rasa; its two types
1 Born of Mātsarya (jealousy) and 2 Born of Dveṣa (Hatred)

- 81-83 Factors relating to Raudra-rasa are set forth in detail.
- 84-85 Illustrations of two-fold Raudra-rasa.
- 86-87 (ab) Definition of Vira-rasa and its three types 1. Dānavīra , 2. Dayāvīra and 3. Yuddha-vīra
- 87(cd)-v90 Factors relating to Vira-rasa are particularly set forth.
- 91-93 Illustrate the three types of Vira-rasa.
- 94 Definition of Bhayānaka-rasa.
- 95-97 Factors relating to Bhayānaka-rasa.
- 98 Illustration of Bhayānaka-rasa
- 99 Definition of Bībhatsa-rasa and its two types, based on factors causing 1 Jugupsā and 2 Vairāgya.
- 100-102 Factors relating to Bībhatsa-rasa.
- 103-104 Illustrations of the two-fold Bībhatsa-rasa.
- 105 Definition of Adbhuta-rasa.
- 106-107 Factors relating to Adbhuta-rasa.
- 108 Illustration of Adbhuta-rasa
- 109 Definition of Śānta-rasa
- 110-112 Factors relating to Śānta-rasa.
- 113 Illustration of Śānta-rasa
- 114 The author states he has finished defining and describing (and illustrating) Rasa, its

Kinds and different factors relating to different Rasas

- 115-116 Now, the author directs the King to listen to his exposition of "The Colours of Rasas", "The Presiding Deities of Rasas", The Cause and effect, relations between the primary and secondary Rasas, Antagonism between the Rasas and Absence of Antagonism between some Rasas
- 117 Mentions the colour and deity of Śrngāra-rasa
- 118 Mentions the colour and the deity of Hāsya-rasa
- 119 Mentions the colour and the deity of Karuṇa-Rasa
- 120 Mentions the colour and the deity of Raudra-rasa
- 121 Mentions the colour and the deity of Vira-rasa
- 122 Mentions the colour and the deity of Bhayānaka-rasa
- 123 Mentions the colour and the deity of Bibhatsa-rasa
- 124 Mentions the colour and the deity of Adbhuta-rasa

- 125 Mentions the colour and the deity of *Sānta-rasa*
- 126 States that *Hāsyā*, *Karuṇā*, *Adbhuta*, and *Bhayāṇaka Rasas* are produced from *Śṛṅgāra*, *Raudra-Vīra* and *Bībhatsa* respectively
- 127 *Sānta-rasa* is not produced from any other *Rasa*. No other *Rasa* is to be found in this World.
- 128-129 *Bībhatsa*, *Vīra*, *Adbhuta* and *Karuṇā-Rasas* are opposed to *Śṛṅgāra-Bhayāṇaka*, *Raudra* and *Hāsyā-Rasas*, respectively *Sānta-rasa* is neither favourable nor opposed to any other *Rasa*
- 130 Conclusion "May the fame of King *Nrsiṁha* ever shine bright"

Chapter IV

Nāyaka-bheda-niscaya

[A Study of the Types of Hero—and of Heroine]

- 1-2 Since *Rasas* and *Bhavas* are impossible to be met with in this world in the absence of *Netr* or *Nāyaka* (and *Nāyikā*) the author attempts in this Chapter an exposition of the Types of Hero and of Heroine giving their definitions and characteristics.

- 3-4 Enumeration of the qualities of a Hero
- 5-6 A person possessed of these qualities is called a Hero He is of four types :
1 Dhīrodāṭṭa; 2 Dhīra-lalita, 3. Dhīra-Śānta, and 4. Dhīroddhata.
- 7- 8 Definition of Dhīrodāṭṭa and his illustration.
- 9-10 Definition of Dhīra-lalita and his illustration
- 11-12 Definition of Dhīra-Śānta and his illustration
- 13-14 Definition of Dhīroddhata and his illustration
- 15 These four types of Hero could give rise to any of the nine Rasas in accordance with their state of mind
- 16-17 Every one of these four types of hero could be again, four-fold (this classification is based on the attitude of the heroes to women in love) 1. anukūla, 2 satha, 3. dhrsta, and 4 daksina
- 18-19 Definition of Anukūla and his illustration
- 20-21 Definition of Śatha and his illustration
- 22-23 Definition of Dhrsta and his illustration
- 24-26 Definition of Daksina and his two illustrations
- 27-28 These four types are applicable to each class of hero in love, there are sixteen possible kinds of hero, and further, each of these may be a high-class, middle class or inferior

person Thus, in all, there may be forty-eight types of hero in love

- 29 enumerates four upanāyakas who help these heroes; 1 Vidūṣaka, 2 Pītha-marda, 3 Vita and 4. Nāgarika.
- 30 defines Vidūṣaka
- 31 defines Pīthamarda
- 32 defines Vita and Nāgarika
- 33 defines a Pratināyaka (the enemy of the hero).
- 34-35 enumerate a set of eight special excellences springing from their character (Sāttvika) which these heroes possess in their youth They are 1. Tejas, 2. Vilāsa, 3. Mādhurya; 4 Śobhā, 5. Sthairya, 6 Gabhīrata (= Gāmbhīrya), 7 Audārya, and 8 Lalita
- 36 defines Tejas.
- 37 defines Vilāsa
- 38 defines Mādhurya
- 39 defines Śobhā and Sthiratva (= Sthairya)
- 40 defines Gāmbhīrya.
- 41 defines Audārya.
- 42 defines Lalita.
- 43 The author now proposes to define and treat of the Types of Heroine
- 44 Definition of heroine and her four types

- 45 These (four types of heroine) are :
 1. Svakīyā, 2. Parakīyā, 3. Anūdhā and
 4. Sādhāraṇa, according to some Anūdhā
 is Parakīyā only, hence there are only three
 types of heroine.
- 46 Definition of Svakīyā and Anyā.
- 47-48 Description of Svīyā (= Svakīyā) and her
 excellences
- 49 Illustration of Svīyā
- 50 Definition of Anūdhā.
- 51 Illustration of Anūdhā.
- 52-53 According to some Parakīyā should be trea-
 ted as Anūdhā for there is very little differ-
 ence between the two . Anūdhā, who is
 herself fallen in love, desires the company
 of her hero, Parakīyā approaches the hero
 at the behest of her Sakhī. According to
 some others, however, there is absolutely no
 difference between the two
- 54-55 "Parakīyā is a woman, may be married or
 unmarried, who is not the mistress of her-
 self. An amour with a married woman may
 not form the subject of the dominant senti-
 ment in the play but that with a maiden
 may occur as an element in the principal
 or the secondary action."

- 56 Illustration of Princesses cherishing love for Rāyavaṅga.
- 57 defines Sādharana Nāyikā
- 58 She should accept the rich as lover and avoid the poor.
- 59 Illustration of such Nāyikās
- 60 The hero's wite may be 1 mugdhā (inexperienced), 2 madhyā (partly experienced) and 3. pragalbhā (fully experienced and bold)
- 61-62 define and illustrate Mugdhā
- 63-64 define and illustrate Madhyā
- 65-66 define and illustrate Pragalbhā
- 67 enumerates three types of Madhyā Nayikā
- 68-69 Definition and illustration of Dhīrā Madhyā.
- 70-71 Definition and illustration of Adhīrā Madhyā
- 72 The heroine who is fully experienced and bold is again of three kinds 1. dhīrā, 2. adhīrā, and 3. dhīrādhīrā
- 73-74 Definition of Pragalbhā-dhīrā
- 75-76 Illustrations of Pragalbhā-dhīrā.
- 77-78 Definition and illustration of adhīrā-pragalbhā
- 79-80 Definition and illustration of dhīrādhīrā-pragalbhā

- 81 Madhyā who is of three types is, again, classified into Jyeṣṭhā (Senior) and Kaniṣṭhā (Junior); thus Madhyā is of six kinds.
- 82 Similarly, Pragalbhā too, is of six kinds.
- 83 Illustration of Jyeṣṭhā and Kaniṣṭhā.
- 84-86 After having defined heroines and their types the author now treats of the heroine's eight different relations to her lover 1. Svādhīnapatikā; 2 Vāsikasajjikā (vāsakasajjā); 3. Kalahāntarītā, 4. Vipralabdhā; 5. Virahotkṣāṇṭhitā; 6 Proṣitabhartṛkā, 7 Khanditā and 8. Abhisārikā.
- 87-88 Definition and illustration of Svādhīnapatikā.
- 89-90 Definition and illustration of Vāsikasajjikā (= Vāsakasajjā).
- 91-92 Definition and illustration of Kalahāntarītā.
- 93-94 Definition and illustration of Vipralabdhā.
- 95-96 Definition and illustration of Virahotkṣāṇṭhitā
- 97-98 Definition and illustration of Proṣitabhartṛkā
- 99-100 Definition and illustration of Khanditā.
- 101-102 Definition and illustration of Abhisārikā
- 103-104 Vipralambha-śrīngāra and its four kinds :
1 pūrvānurāga 2. māna; 3 pravāsa and
4 karuṇa.

- 105 Definition of Pūrvānurāga.
- 106 Definition of māna and of Pravāsa
- 107 Definition of Karuna
- 108 Māna and Pravāsa (vipralambha) srngāra have reference to Khaṇḍitā and Prositapriyā.
- 109 Pūrvānurāga (vipralambha) srngāra has reference to kalahāntarītā vipralabdā and virahokanṭhitā
- 110 Karuṇātmaka (vipralambha)—srngāra refers to a woman mourning the death of her husband, or to any one in bereavement
- 111 The heroine's (female) messenger may be a friend (sakhi), a slave (dāsī), a nun (lūginī), a neighbour (prativeśini), a foster-sister (dhātreyī), an artist (śilpikā) or a workwoman (kārū) or self
- 112 Illustration of a messenger
- 113 The heroines described above, possess twenty excellences, springing from their character, when they are in the prime of youth
- 114-116 These excellences are 1. bhava, 2 hāva, 3 helā, 4 sobhā, 5 kānti, 6 dīptikā (= dipti), 7 madhuratva (= mādhyaya), prāgalbhya (= pragalbhātā), 9 vadānyatā (= audārya), 10 dhairya, 11 līlā,

12, vilāsa, 13. vicchitti, 14. vibhrama,
15. kilakīñcita, 16. mottāyita, 17. kuṭṭamita,
18 bibboka, 19 lalita, and 20 vīrta.

117 of these twenty, the first three are physical,
the next seven are alaṅkṛtis, and the remain-
ing ten are svābhāvika (svabhāvaja)

- 118-120 Definition (and description) of bhāva and
its illustration
- 121-122 Definition of hāva and its illustration.
- 123-124 Definition of helā and its illustration
- 125-126 Definition of śobhā and its illustration
- 127-128 Definition of kānti and its illustration
- 129-130 Definition of dīpti and its illustration.
- 131-132 Definition of mādhyā and its illustration.
- 133-134 Definition of pragalbhātā and its illustration.
- 135-136 Definition of audārya and its illustration.
- 137-138 Definition of dhairyā and its illustration
- 139-140 Definition of līlā and its illustration
- 141-142 Definition of vilāsa and its illustration
- 143-144 Definition of vicchitti and its illustration
- 145-146 Definition of vibhrama and its illustration.
- 147-148 Definition of kilakīñcita and its illustration.
- 149-152 Alternative definitions of mottāyita and its
illustrations
- 153-154 Definition of kuṭṭamita and its illustration
- 155-156 Definition of bibboka and its illustration

- 157-158 Definition of *lalita* and its illustration.
- 159-160 Definition of *viḥita* and its illustration
- 161 The hero's good qualities like modesty, etc and a set of eight special excellences have been described. The author refrains from quoting examples but suggests that the wise should find them out for themselves
- 162 The author states excellences like *bhāva*, *hāva*, and so on, are described with reference to heroines, however, illustrations of these excellences may suitably be found even in clever heroes
- 163 Conclusion The author pays tributes to King *Virānśiṃha* for his eminence as a noble and exalted hero.

CHAPTER V

Dasa-guṇa-niscaya

[A Study of Ten Guṇas]

- 1-3 A poetic composition, devoid of Guṇas, is worthless. The author, therefore, following the authoritative works on poetics describes these Guṇas and requests King *Kāmīrāja* to listen to his exposition,

- 4-5 There are ten Guṇas which are proclaimed as the Ten Prāṇas (of poetic styles) .
 1. Sukumāratva (= Sankumārya), 2. Audārya, 3 Ślesa, 4. Kānti, 5 Prasannatā (= Prasāda), 6. Samādhi, 7 Ojas, 8. Mādhurya, 9. Arthavyakti, and 10. Sāmyaka (= Samatā)
- 6-7 Definition of Sankumārya and its illustration.
- 8-10 Alternative definitions of Audārya and its illustration
- 11-12 Definition of Ślesa and its illustration
- 13-14 Alternative definition of Slesa and its illustration
- 15-17 Alternative definitions of Kānti and its illustration
- 18-19 Definition of Prasannatā (= Prasāda) and its illustration
- 20-22 Alternative definition of Samādhi and its illustration
- 23-24 Definition of Ojas and its illustration.
- 25-26 Definition of Mādhurya and its illustration
- 27-28 Definition of Arthavyakti and its illustration
- 29-30 Definition of Samatā and its illustration.
- 31 Conclusion "May the King Rāyavaṅgendra, find delight in works of Mahākavis, bright with these Gunas."

CHAPTER VI

Rīti-niscaya

[A Study of Rīti]

- 1 Poetry devoid of Riti is not approved of by connoisseurs
- 2 Hence the author defines (and describes) Riti and its kinds and urges the King to listen to them attentively
- 3-5 Set forth the nature and definition of Riti and its four kinds . 1. vaidarbhi, 2 gaudikā (= gaudī), 3 lātī and 4 pāñcālī
- 6-8 Definition of Vaidarbhī and its illustration
- 9-10 Definition and illustration of Gaudī.
- 11-12 Definition and illustration of Pāñcālī
- 13-14 Definition and illustration of Lātī
- 15 Śrngāra-, Karuna, Sānta, and Hāsya- these Rasas are imbued with sweetness The remaining five Rasas are marked by Ojas-vigour
- 16 All the nine Rasas are possessed of the quality called "lucidity". The poet skilled as he is, should employ the remaining seven Gunas according to need.
- 17 Conclusion : "May the King—the royal

Swan—sport in the lake of kāvya dotted by groups of lotuses.

CHAPTER VII

Vṛtti-niścaya

[Nature of Vṛtti—Manner or Style]

- 1-2 Readers do not like poetry if it is devoid of Vṛtti Vṛtti is, therefore, defined and its varieties too, are explained and illustrated.
- 3 Defines Vṛtti and enumerates its varieties
1, kaisikī, 2 ārabhaṭī, 3 bhāratī and 4 sāttvatī
- 4 defines kaisikī.
- 5 defines ārabhaṭī.
- 6 defines bhāratī
- 7 defines sāttvatī.
- 8-9 Nature of Rasas.
- 10 illustrates kaisikī
- 11 illustrates ārabhaṭī
- 12 illustrates bhāratī.
- 13 illustrates sāttvatī.
- 14 Madhyamā Kaisikī is suited to all Rasas
- 15 Madhyamā ārabhaṭī is suited to all Rasas
The author then brings out the difference between Vaidarbhī and other Rītis on the

one hand and Kaiśikī and others on the other hand, and defines four kinds of Sandarbha.

- 16 Conclusion . "May the fame of King Nādañjanātha endure for long

CHAPTER VIII

Śayya-pāka-niscaya

[Nature of Śayyā and Pāka]

1-3 Śayyā

- V1 Śayyā is essential to any literary work.
 V2 defines sayyā as "Mutual Suitability of Words" or "The matri of Words."
 V3 Illustrates Sayyā.

4-9 Pāka

- 4 A poetic composition devoid of pāka is not liked by any one
 5 defines Pāka as "profundity of fourfold meaning-sense, and speaks of two kinds of pāka 1, Drāksā and 2 Nālikera
 6 defines Drāksā-pāka
 7 defines Nālikera-pāka.
 8 illustrates Drāksā pāka
 9 illustrates Nālikera-pāka.
 10 Conclusion

CHAPTER IX

Alamkāra-sāraṅgā

[The Nature of Alamkāras]

- 1 A poem devoid of Alamkāras does not look graceful
- 2-5 Alamkāras are the source of poetic charm, are of two kinds depending on sabda and artha (Sound and Sense, Word and Sense) Śabdālamkāras are fourfold: Yamaka, 2. Citra, 3. Vakrokti, 4. Anuprāsa; Arthālamkāras are, however, manifold such as Svabhāvokti,
- 6 request to King Śrīrāyavanga to listen to alamkāras
- 7 Leaves aside śabdālamkāras and defines arthālamkāras
- 8-13 enumerate 47 arthālamkāras
- 14-22 Svabhāvokti or Jāti with its varieties and illustrations
 - 14 Svabhāvokti,
 - 15 Jāti (Sakriya or Niṣkriya Vastu)
- 16-17 Sakriya
 - 18 Niṣkriya

19-22 fourfold Jāti based on Jāti, Kriyā, Guna and Dravya.

23-64 Upamā

23 Upamā

24 Dharmopamā

25 Vastūpamā

26 Viparyāśopamā

27 Anyonyopamā

28 Niyamopamā

29 Anvyamopamā

30 Samuccayopamā

31 Atisayopamā

32 Utpreksopamā

33 Adbhutopamā

34 Mohopamā

35 Sarṅśayopamā

36 Nirnayopama

37 Ślesopamā

38 Saṃtānopamā

39 Nindopamā

40 Prasarsopamā

41 Ācikhyāśopamā

42 Virodhopamā

43 Pratishedhopamā

44 Catūpamā

45 Tatyākhyānopamā

- 46 Asādhāraṇopamā
 47 Abhūtopamā
 48 Asambhāvitopamā
 49 Bahūpamā
 50 Vikriyopamā
 51 Mālopamā
 52 Ekevaśabdā Vakyārthopamā
 53 Anekevaśabdā Vākyārthopamā *
- 54 Prativastūpamā
 55 Tulyayogopamā
 56 Hetūpamā
- 57-61(ab) Upamādosas
- 61(cd)-62 declare that Upamā occurs when there is intention on the part of the Speaker to refer to Dharma only
- 63-64 enumerate or list words which are expressive or suggestive of Upamā.
- 65-86 Rūpaka
- 65 Definition of Rūpaka
 66 Samastarūpaka
 67 Vyasta-rūpaka
 68 Samasta-Vyasta-rūpaka
 69 Sakala-rūpaka
 70 Avayava-rūpaka
 71 Avayavi-rūpaka

- 72 Ekāvayava-rūpaka (Dvyavayava-rūpaka,
tryavayava-rūpaka)
- 73 Yukta-rūpaka
- 74 Ayukta-rūpaka
- 75 Visama-rūpaka
- 76 Saviśesana-rūpaka
- 77 Viruddha-rūpaka
- 78 Hetu-rūpaka
- 79 Upamā-rūpaka
- 80 Vyatireka-rūpaka
- 81 Āksepa-rūpaka
- 82 Samādhāna-rūpaka
- 83 Rūpaka-rūpaka
- 84 Tattvāpahnuti-rūpaka
- 85-86 The author states that 33 divisions of Upamā and 20 divisions of Rūpaka have been described. The divisions of these two Alankāras are infinite. Only a few of them are illustrated here.
- 87-90 Āvṛtti
- 87 Āvṛtti and its three varieties
- 88 Arthāvṛtti
- 89 Padāvṛtti
- 90 Ubhayāvṛtti
- 91-97 Hetu
- 91 Definition of Hetu

- 92 Hetu-alambhāra is manifold being based on
the statement of Kāraṇa or Jñāpaka-hetu
- 93 Nirvartyakāravaiṣaya-hetu
- 94 Abhāvarūpa-nirvartyavaiṣaya-hetu
- 95 Vikārya-vaiṣaya-kāraka-hetu
- 96 Prāpyavaiṣaya-kāraka-hetu
- 97 Jñāpaka-hetu
- 98-118 Dīpaka
- 98 Definition of Dīpaka
- 99 Ādivarti-jātipada-dīpaka
- 100 Ādivarti-Kriyāpada-dīpaka
- 101 Ādivarti-guṇapada-dīpaka
- 102 Ādivarti-dravyapada-dīpaka
- 103 Ādivarti-Samjñāpada-dīpaka
- 104 Madhyavarti-jātipada-dīpaka
- 105 Madhyavarti-Kriyāpada-dīpaka
- 106 Madhyavarti-guṇapada-dīpaka
- 107 Madhyavarti-dravyapada dīpaka
- 108 Madhyavarti-Samjñāpada-dīpaka
- 109 Antyavarti-jātipada-dīpaka
- 110 Antyavarti-Kriyāpada-dīpaka
- 111 Antyavarti-guṇapada-dīpaka
- 112 Antyavarti-dravyapada-dīpaka
- 113 Antyavarti-Samjñāpada-dīpaka
- 114 Mālādīpaka
- 115 Viruddhārtha-dīpaka

- 116 Ślistārtha-dīpaka
 117 Ekārtha-dīpaka
 118 Antyakriyā-dīpaka The author states that this variety is illustra'ed here, once more, on account of "Bhāva-Camatkāra"
- 119-126 Utpreksā
 119 Definition of Utpreksā
 120 Words expressive of Utpreksā
 121 Vācyā-and Pratiyamāna-Utpreksā, Vācyā-Utpreksā-defined
 122 Pratiyamāna-Utpreksā-defined
 123 alludes to 56 and 46 divisions of Vācyotpreksā and Pratiyamānotpreksā respectively
 124 Their illustrations should be known from other works Here only the two primary and main divisions are described.
 125 illustrates Vācyotpreksā
 126 gives another illustration of Vācyotpreksā, the author states that following his predecessors he too does not give any illustration of Pratiyamānotpreksā
- 127-137 Arthāntaranyāsa
 127 Definition of Arthāntaranyāsa
 128 Visvavyāpi-arthāntaranyāsa
 129 also an example of Visvavyāpi-arthāntaranyāsa

- 130 Viśeṣastha-arthāntaranyāsa.
 131 Śliṣṭa-arthāntaranyāsa.
 132 Viruddha-arthāntaranyāsa.
 133 Ayukta-arthāntaranyāsa.
 134 Yukta-arthāntaranyāsa.
 135 Yuktāyukta-arthāntaranyāsa
 136 Viparyaya-arthāntaranyāsa
 137 States that there are other divisions, also of
 this Arthāntaranyāsa, their examples should
 be known from other works.
- 138-146 Vyatireka
 138 Definition of Vyatireka.
 139 Eka-vyatireka.
 140 Ubhaya-vyatireka
 141 Sāksepa-vyatireka
 142 Sahetu-vyatireka
 143 Ādhikyopeta-bheda-lakṣaṇa-vyatireka.
 144 Sadrśa-vyatireka
 145 Another illustration of Sadrśa-vyatireka.
 146 Sajāti-vyatireka
- 147-149 Vibhāvanā
 147 Definition of Vibhāvanā
 148 Kāranāntarakalpanā-vibhāvanā
 149 Svabhāva vibhāvanā
- 150-174 Āksepa
 150 Definition of Āksepa (Three Divisions).

- 151 Atitākṣepa.
 152 Vartamānākṣepa.
 153 Anāgatākṣepa.
 154 Dharmākṣepa
 155 Dharmyākṣepa.
 156 Kāraṇākṣepa
 157 Kāryākṣepa.
 158 Anujñākṣepa
 159 Prabhutvākṣepa.
 160 Anādarākṣepa
 161 Āsīrvacanākṣepa
 162 Sācivyākṣepa.
 163 Yatnākṣepa
 164 Paravaśākṣepa
 165 Upāyākṣepa.
 166 Rosākṣepa
 167 Anukrośākṣepa,
 168 Anuśayākṣepa.
 169 Ślistākṣepa
 170 Samśayākṣepa
 171 Arthāntarakṣepa.
 172 Hetvākṣepa
 173 Dharmākṣepa is again illustrated on account
 of "Bhāva-Camatkāra".
 174 Other divisions of Ākṣepa should be known .
 (from other works) by the wise.

- 175-179 Atiśayokti.
 175 Definition of Atiśayokti.
 176 illustrates Atiśayokti
 177 Sarṅśayātiśayokti.
 178 Niścayātiśayokti.
 179 Adbhutātiśayokti or Virodhātiśayokti
- 180-181 Sūkṣma
 180 Definition of Sūkṣma.
 181 illustrates Sūkṣma.
- 182-185 Samāsokti-
 182 Definition of Samāsokti.
 183 Samānaviśesana-bhinnā-viśeṣya-samāsokti
 184 Bhinnābhinnā-viśesana-samāsokti,
 185 Apūrvā-samāsokti. This Alamkāra should
 be described by another name, viz,
 Anyāpadeśa.
- 186-188 Lava (Leśa or Nindā stuti).
 186 Definition of Lava
 187 Vacogopana-leśa,
 188 Cestāprakāśana-leśa
- 189-191 Krama
 189 Definition of Krama,
 190 Illustrates Krama.
 191 Another example of Krama
- 192-194 Udātta
 192 Definition of Udātta

- 193 Illustrates *Buddhi mahattva-Udātta*.
- 194 Illustrates *Aisvaryamahattva*
- 195-200 *Apahnava* (= *Apahnuti*)
- 195 Definition of *Apahnava*.
- 196 *Svarūpāpahnava*
- 197 Another example of *Svarūpāpahnava*
- 198 Still another example of *Svarūpāpahnava*.
- 199 *Viśayāpahnava*
- 200 States that *upamāpahnava* has already been described under *Upamā*, and that the wise should detect from among stanzas other divisions
- 201-202 *Preyas*
- 201 Definition of *Preyas*
- 202 illustrates *Preyas*.
- 203 207 *Virodha*.
- 203 Definition of *Virodha*.
- 204-206 illustrate *Śabdakrtavirodha*.
- 207 illustrates *Arthakṛta-virodha*.
- 208 220 *Rasavat*
- 208 Definition of *Rasavat*
- 209 *Śingārākhyā*
- 210 *Yuddhavīra-rasākhyā*.
- 211 *Dānavīra-rasākhyā*.
- 212 *Dharmavīra-rasākhyā*.
- 213 *Karunākhyā*

- 214 Bībhatsākhyā
 215 Hāsyaākhyā
 216 Adbhutākhyā.
 217 Bhayānakākhyā.
 218 Raudrākhyā.
 219 Śāntarasākhyā.
 220 Speech attains to the state of Rasa on account
 of these nine Rasas, according to others,
 however, eight Rasas excluding Śānta.
- 221-222 Ūrjasvī.
 221 Definition of Ūrjasvī.
 222 illustrates Ūrjasvī.
- 223-225 Aprastuta-prasāṃsā.
 223 Definition of Aprastuta-prasāṃsā
- 224-225 illustrate Aprastuta-prasāṃsā.
- 226-232 Viśeṣokti
 226 Definition of Viśeṣokti
 227 Guṇavaikalya-viśeṣokti
 228 Jātivaikalya-viśeṣokti.
 229 Kriyāvaikalya-viśeṣokti.
 230 Dravyavaikalya-viśeṣokti.
 231 Hetu-viśeṣokti.
 232 States that there are other divisions of
 Viśeṣokti. The wise should conceive of
 them.

- 233-237 Tulyayogitā.
 233 Definition of Tulyayogitā.
 234 Two divisions of Tulyayogitā based on Stuti and Nindā.
 235 Stutipara-tulyayogitā.
 236 One more illustration of Stutipara-tulyayogitā
 237 Nindāpara-tulyayogitā
- 238-239 Paryāyokta
 238 Definition of Paryāyokta
 239 illustrates Paryāyokta.
- 240-244 Sahokti
 240 Definition of Sahokti
 241 Gunasahabhāvākathana-Sahokti
 242 Kriyāsahabhāvākathana-Sahokti
 243 gives an alternative definition of Sahokti
 244 illustrates Sahokti as defined in v243 and designates it Kāryakārana-sahajanma-Kathana-Sahokti
- 245-247 Parivṛtti (two divisions)
 245 Definition of Parivṛtti
 246 Sadrśārtha-parivṛtti
 247 Visadrśārtha-parivṛtti
- 248-249 Samāhita (= Samādhi)
 248 Definition of Samāhita
 249 illustrates Samāhita.

- 250-260 Śluṣṭa (= Ślesā)
- 251 Abhinnaśluṣṭa (= Śleṣa)
- 252 Bhinnaśluṣṭa (= Śleṣa)
- 253 States that Śleṣa accompanying Vyatireka and other Alankāras has already been shown. A few other Ślesas are described hereafter.
- 254 Kriyāka-abhinna-ślesā (= Abhinna-kriyā-ślesā)
- 255 Aviruddha Kriyāślesā
- 256 Viruddhakriyāślesā
- 257 Sanīyama ślesā
- 258 Niyamanīślesā
- 259 Aviruddha ślesā
- 260 Upamā-ślesā
- 261-263 Nidarśana (= Nidarśanā)
- 261 defines Nidarśana (two kinds)
- 262 Prasasta-nidarśana
- 263 Aprasasta-nidarśana
- 264 267 Vyājastuti
- 264 defines Vyājastuti
- 265 illustrates Vyājastuti
- 266 Śluṣṭa Vyājastuti
- 267 States that Vyājastuti has infinite varieties.
- 268-270 Āśīh
- 268 defines Āśīh

- 269-270 illustrate Āśīh
 271-273 Samuccaya
 271 defines Samuccaya.
 272 Atyukṛsta samuccaya
 273 Atyapakṛsta Samuccaya
 274-275 Vakrokti
 274 defines Vakrokti
 275 illustrates Vakrokti
 276-279 Anumāna (three divisions)
 276 defines Anumāna
 277 Vartamāna-Sādhyā-gocara
 278 Atīta-sādhyā-gocara
 279 Bhāv-sādhyā-gocara
 280-281 Visama
 280 defines Visama
 281 illustrates Visama
 282-283 Avasara
 282 defines Avasara
 283 illustrates Avasara
 284-285 Prativastūpamā
 284 defines Prativastūpamā.
 285 illustrates Prativastūpamā The author adds
 a remark "according to some this Alankāra
 is included in Upamā"
 286-287 Sāra
 286 defines Sāra

- 287 illustrates Sāra.
- 288-289 Bhrāntimān
- 288 defines Bhrāntimān
- 289 illustrates Bhrāntimān. The author remarks that this Alankāra is, according to some, the same as Mohopamā.
- 290-293 Saṁśaya
- 290 defines Saṁśaya.
- 291-292 illustrate Saṁśaya.
- 293 Defines Niścayānta Saṁśaya. The author remarks that, according to some, Saṁśaya and Niścayānta-Saṁśaya are the same as Saṁśayopamā and Nirnayopamā respectively.
- 294-295 Ekāvalī
- 294 defines Ekāvalī
- 295 illustrates Ekāvalī.
- 296-297 Parikara.
- 296 Defines Parikara.
- 297 illustrates Parikara.
- 298-300 Parisaṁkhyā
- 298 defines Parisaṁkhyā.
- 299-300 illustrate Parisaṁkhyā. The author remarks that it is, according to some, the same as Sanyama-śleṣa.
- 301-304 Prasānottara (three kinds)
- 301 defines Prasānottara

- 302 Vyakta–Prašnottara.
 303 Vyaktaprasna–Gūdhottara.
 304 Vyaktagūdhottara–Prašnottara.
 305–308 Saṁhāra.
 305 defines Śaṁhāra.
 306–307 illustrate Saṁhāra.
 308 states that Saṁhāra is two-fold 1 When there exists the relation of “the principal and the subordinate” and 2, When there is “the state of equal prominence” between the Alaṁkāras constituting Saṁhāra
 309–310 Conclusion
 309 The author states how he has completed this compendium of Alaṁkāras although their scope is vast
 310 The author expresses his benediction that the fame of King Nrsiṁha (Kāmīrāja) should continue to live through his Kāvya

CHAPTER X

**Nature of Dosas and the Circumstances in which they
 turn out to be Gunas**

- 1 A poem free from Dosas leads to fame.
 2–4 enumerate 15 Pada-dosas.

- 5-33 define and illustrate these Paḍadoṣas.
- 5-6 Asamartha.
- 7 Śrutikaṭu.
- 8-9 Nirarthaka.
- 10-11 Avācaka
- 12 Cyutasamṣkrṭi
- 13-14 Aprayukta.
- 15-16 Grāmya.
- 17-20 Aślīla (three kinds).
- 21-22 Neyārtha.
- 23 Klišṭa
- 24-25 Sandigdha
- 26-27 Anucitārtha.
- 28-29 Avimrsta-vidheyāṁśa.
- 30-31 Viruddhamatikṛt.
- 32-33 Apratīta.
- 34 points out how these Doṣas pertain also to parts of a word
- 35-39 illustrate a few of these Doṣas pertaining to parts of a word
- 40-43 enumerate 22 Vākya-doṣas.
- 44-45 Upahataluṭpa-vīsarga
- 46-50 Hatavṛtta
- 51-52 Garbhita
- 53-54 Samkīrṇa
- 55-56 Nyūnapada

- 57-58 Kathitapada
 59-60 Prasiddhi-hata
 61-63 Akrama
 64-68 Visandhi
 69-70 Pratikūla-varna
 71-72 Asthānastha-pada
 73-74 Asthānastha-samāsa
 75-76 Adhikapada
 77-78 Rasa- cyuta
 79-80 Samāpta-punarātta
 81-82 Anabhihita-vācya
 83-84 Aprastutārtha
 85-86 Amata-parārtha
 87-88 Ardhāntaraika-vācaka
 89-91 Bhagna-prakrama
 92-94 Abhavanmata-yoga
 95-96 Patatprakarsa
 97-100 enumerate 21 Artha-dosas
 101-142 define and illustrate these Arthā-dosas
 101-102 Apu-ta
 103 104 Kasta
 105-107 (ab) Sandigdha
 107(cd)-108 Vyāhata
 109-110 Grāmya
 111-112 Duskrama
 113-114 Vyarthikṛta

- 115-116 Ahetu
 117-118 Punarukta
 119-120 Aślīla
 121-122 Sākāṅkṣa
 123-124 Prasiddhi-Viruddha
 125-126 Vidyā-viruddha
 127-128 Ukta-viruddha
 129-130 Sanyama
 131-132 Aniyama
 133-134 Viśeṣa-parivṛtta
 135-136 A viśeṣa-parivṛtta
 137-138 Vidhyānuvāda-vivṛtta
 139-140 Iyakta-punaḥsvikṛta
 141-142 Sahacarabhīna
 143-166 illustrate and explain how, in certain circumstances Pada-dosas, Vākya-dosās and Artha-dosās turn out to be Guṇas. The circumstances in which Srutikatū, Asamartha, Klīṣṭa, Neyārtha, Nirarthaka, Aślīla, Sandigdha Apratīta, Nyūnapada, Adhika-pada Punarukta, Nirhetu (Ahetu) these Dosās cease to be so and, in fact, turn out to be Guṇas
 167-176 Under the word Prasiddhi (occurring in the Prasiddhi-viruddha dosa) are included other things also which are not found in

- nature but are Prasiddha according to Kavi-samaya (poetic conventions)
- 177-180 enumerate Rasa-dosas
- 181-186 Rasābhāsa and Bhāvābhāsa
- 187-190 illustrate Svasabdagrahana
- 191 illustrates Kāsta-Kalpanā
- 192 illustrates Pratikūlavibhāvādi-grahana
- 193 The author here directs that the reader should refer to the poetic compositions for Rasa-Dosas (those illustrated here and others mentioned in vv178-179 (viz, Punah punah dīptih, Ākāśa (= Akānda) prathana Ākāśa (= Akānda) Cheda Angasya ativistrīḥ, Angino ananusandhānaḥ Prakrti-viparyayah Anangasyābhūdhānaḥ.
- 194-197 In conclusion, the author addresses King Kāmīrāja in glowing terms and wishes him well.

श्रीअनन्तनाथाय नमः । निदिधनमस्तु ।

वर्णगणफलनिर्णयो नाम

प्रथम परिच्छेद.

जयति ससिद्धकाव्यालापपद्माकरेऽय
 वरगुणयुतजीवन्मुक्तिपुस (प्रियो य ।
 मुमधुमधु) रवाणीसारनिकवाणरम्प्रो
 जिनपतिकलहसश्चारुसंतीति^१पक्ष्मा ॥ १ ॥
 अमन्दानन्दमदोहपीयूषरसदायिनीम् ।
 स्तवीमि शारदा दि(व्या) ^२ज्ञानैकफलशालिनीम् ॥ २ ॥
 समन्तभद्रादिमहाकवीश्वरे
 कृतप्रबन्धोज्ज्वलसत्सरोवरे ।
 लसद्द्रसालकृतिनीरपङ्कजे
 सरस्वती क्रीडति भावबन्धुरे ॥ ३ ॥
 श्रीमद्विजय^३कीर्तीन्दो सूक्तिमदोहकौमुदी ।
 मदीयचित्तमताप हृत्वानन्द^४दद्यात्परम् ॥ ४ ॥
 श्रीमद्विजयकीर्त्याख्यगुरुराजपदाम्बुजम् ।
 मदीयचित्तकासारे स्थेयात् सशुद्धधीजले ॥ ५ ॥
 मलयानिलसकाशो गुणसौरभवर्धक ।
 सतापहृज्जनानन्द सुजनो^५ जीवताञ्चिरम् ॥ ६ ॥

१. वक्ष्य, २ ज्ञानफल, ३ कीर्तीन्द्रो., ४. मदीय च स्म, ५. दद्यात्,
 ६ देवता ।

गुणवर्मादिकर्नाटकवीना मूक्तिसचय ।
 वाणीविलास^१ देयात्ते रमिकानन्ददायितम् ॥ ७ ॥
 राजनीतिमहाशास्त्रनिरूपितफलप्रदाम् ।
 नानातटाककासारनदीवनविभूषिताम् ॥ ८ ॥
 सदे (व) पुरसकाशनानानगरभासुराम् ।
 जिनराजमहाधर्मश्रावकोत्तमराजिताम् ॥ ९ ॥
 अष्टादशमहाश्रेणीभूषिता श्रीमतीतराम् ।
 पश्चिमाणवपर्यन्ता दशा सर्वमुखप्रदाम् ॥ १० ॥
 श्रीमद्भू रतराजेन्द्रनामचक्रधरोपम ।
 श्रीवीरनरसिंहाख्यवङ्गभू(मी)श्वरो महान् ॥ ११ ॥
 पालयत्यमला^२ बङ्गवाटीपुरममन्विताम् ।
 कादम्बवशजनितानेकभूमीशपालिताम् ॥ १२ ॥
 तस्यानुजो^३ गुणाधीश पाण्ड्यवङ्गनरेश्वर ।
 सत्येन रामचन्द्रोऽभूद्धर्मेण भरतेश्वर ॥ १३ ॥
 रत्नत्रयमहाधर्मरक्षको राजशेखर ।
 महाकविजन^४ स्तूयमानसत्कीर्ति(ना)यक ॥ १४ ॥
 सोऽपि श्रीपाण्ड्यवङ्गोऽय जिनपादाब्जषट्पद ।
 अनुक्रमागता भूमि पूर्वोक्ता रक्षति स्म वै ॥ १५ ॥
 तस्य श्रीपाण्ड्यवङ्गस्य भागिनेयो गुणार्णव ।
 विट्टलाम्बामहादेवीपुत्रो राजेन्द्रपूजित ॥ १६ ॥
 श्रीकामिराजवङ्गोऽभून्नाम्ना नृपतिकुञ्जर ।
 वैरिसदोहगन्धेर्भ^५ घटा(क)ण्ठीरवोपम ॥ १७ ॥

१ देयाते, २ वङ्गवाडी I have sanskritised as बङ्गवाटी,
 ३ गुणादी पाण्ड्य, ४ स्तूय मानसत्कीर्ति यक, ५ कामिराय I
 have sanskritised as कामिराज throughout the text
 ६ घटा ठिरवो ।

क्रमागतामिमा भूमिं पश्चिमाम्बोधिभूषिताम् ।
 श्रीकामिराजवङ्गेन्द्र पालयत्यमलश्रियम् ॥ १८ ॥
 स राजा काव्यगोष्ठीषु सभाजनविभूषित ।
 अपृच्छद्द्वितयं नाम्ना कविताशक्तिभामुरम् ॥ १९ ॥
 काव्यस्य लक्षण किं वा वर्णंशुद्धिञ्च (की)दृशी ।
 रसभावौ कथभूतौ नेतृभेदाश्च कीदृशा ॥ २० ॥
 कीदृश्यलकृती रीति कीदृग्वृत्तिश्च कीदृशी ।
 कीदृग्दोषो गुण कीदृक् पृच्छति स्मेति मा नृप ॥ २१ ॥
 इत्थ नृपप्रार्थितेन मयालकारसग्रह ।
 क्रियते सूरिणा नाम्ना शृङ्गारार्णवचन्द्रिका ॥ २२ ॥
 अदोष सगुणो रीतिवृत्तिशय्यारसान्वित ।
 सालकार सपाकञ्च शब्दार्थरचनोत्तम ॥ २३ ॥
 समुद्रनगरीशैलमुधाकरदिवाकर- ।
 (पङ्)तुंजलकेलीना वर्णनाभिरलकृत ॥ २४ ॥
 मभोगविप्रलम्भाभ्या मधुपानै कुमारकै (? रतोत्मवै) ।
 विवाहैर्मन्त्रदूताभ्या प्रयत्नेन विभूषित ॥ २५ ॥
 सग्रामनायकैश्वर्यवर्णनाभिर्विभूषित ।
 मनोज्ञभावसदर्भ कवीश्वरनिरूपित ॥ २६ ॥
 धर्मार्थकाममोक्षाख्यसत्फलाना प्रकाशक ।
 महानु ॥ २७ ॥
 विधुप्रबन्धसज्जोष्य बुधे काव्य प्रकीर्तितम् ।
 रसभावज्ञलोकाना प्रमोदाय प्रकल्पते ॥ २८ ॥

१ श्रीकामोकाय, २. स राजा का गोष्ठीषु । ३ ते त्रिभेदाश्च,
 ४ किदृग्दोषो गुणा किदृक्पृच्छति, ५. Could the line be :
 सभोग विप्रलम्भाभ्या कुमारोदयवर्णनैः ? ६. विधुप्रबन्धो य ।

तत् काव्यं त्रिविधं प्रोक्तं पद्यं गद्यं च मिश्रितम् ।
 उक्तादिच्छन्दसा बद्धं पद्यकाव्यं निरूपितम् ॥ २९ ॥
 गद्यकाव्यं तु वाक्यानां मूलालङ्कृतमीरितम् (समुच्चय इतीरितम्) ।
 गद्यपद्योभयं प्रोक्तं मिश्रकाव्यं बुधोत्तमं ॥ ३० ॥
 उत्तमं मध्यमं प्रोक्तं जघन्यं त्रिविधं पुनः ।
 प्रत्येकमिति तत् काव्यं नवधा सप्रवर्तते ॥ ३१ ॥
 उत्तमं ध्वनिभिर्यत्नमव्यक्तं मध्यमं मतम् ।
 ध्वन्यर्थशून्यं काव्यं तु जघन्यं परिकीर्तितम् ॥ ३२ ॥
 आगीरलङ्कृतं वस्तुनिर्देशपरिभूषितम् ।
 नमस्कृतिममेतं वा तत् काव्यं मुखमुच्यते ॥ ३३ ॥
 एतत्काव्यमुखे वर्णगणशुद्धिं प्रकीर्त्यते ।
 तथा कवेर्नायकस्य जाघटीति महाशुभम् ॥ ३४ ॥
 तदभावेऽनिष्टफलं कविनायकयोर्भवेत् ।
 तस्माद्वर्णगणानां तु शुद्धिरुक्ता बुधैर्यथा ॥ ३५ ॥
 अकारादिक्षकारान्ता वर्णास्तेषु शुभावहा ।
 केचित् केचिदनिष्टाख्यं वितरन्ति फलं नृणाम् ॥ ३६ ॥
 ददात्यवर्णं मप्रीतिमिवर्णो मुदमुद्वहेत् ।
 कुर्यादुवर्णो द्रविणं ततः स्वरचतुष्टयम् ॥ ३७ ॥
 अपख्यातिफलं दद्यादेव सुखफलावहा ।
 इन्द्रविन्दुर्विमर्गाम्स्तु पदादौ सभवन्ति नो ॥ ३८ ॥
 कखगघाञ्च लक्ष्मीं ते वितरन्ति फलोत्तमाम् ।
 दन्ते चकारोऽपख्यातिं छकारं प्रीनिसौख्यदम् ॥ ३९ ॥
 मित्रलाभं जकारोऽज्यं विधत्ते भीभृतिद्वयम् ।
 झं करोति टठौ खेददुःखे द्वे कुरुत क्रमात् ॥ ४० ॥

१ °द्यादेव, २ विदत्तेऽस्मिन् ।

शोभाकरो डकारोऽयमशोभाफलदस्तु ङ ।
 णकारो भ्रमण दत्ते तकार. सुखदायक ॥ ४१ ॥
 १थो युद्धदो दधौ सौख्यफलो नस्तु प्रतापद ।
 पो भय फस्तु सतोष (? फस्त्वसतोष) बो मृत्यु
 क्लेशान तु भ ॥ ४२ ॥
 दाह क्रमान्मकारो विघत्ते श्रीकरस्तु य ।
 दाहकृद्रेफवर्णस्तु लवौ व्यसनदायकौ ॥ ४३ ॥
 शस्तनोति मुख षस्तु खेद मस्तु सुख क्रमात् ।
 दाहदो हस्तु कवर्णो ददाति व्यसन फलम् ॥ ४४ ॥
 क्षस्तु सर्वसमृद्धीडद्यफलदानक्रियान्वित ।
 सम (? सर्व) वर्णफल प्रोक्तमेव प्रत्येकत क्रमात् ॥ ४५ ॥
 मुखे काव्यस्य वर्णाना सयोगस्त्यज्यता बुधै ।
 शुद्धवर्णोऽन्यवर्णेन युक्तो दु फलदो भवेत् ॥ ४६ ॥
 विपनामेति कर्पूर तैलयुक्त यथा भुवि ।
 क्षकारस्तु प्रयोक्तव्य काव्यादौ सत्फलावह ॥ ४७ ॥
 वर्णाना शुद्धिरित्युक्ता गणशुद्धि प्रकीर्त्यते ।
 दीर्घोऽनुस्वारयुक्तो वा विसर्गान्ति स्वरस्तथा ॥ ४८ ॥
 द्वित्वाक्षरसमेतो वा परतो गुरुच्यते ।
 इतरो लघुरुक्तोऽय म्वर छन्दोविशारदै ॥ ४९ ॥
 स्वरो लघुरपि प्रोक्तो विकल्पेन गुरुर्बुधै ।
 पादान्ते यदि वर्तेत पद्याना द्विविधात्मनाम् ॥ ५० ॥
 गुरुणा लघुना ताभ्या व्याप्ता वा गदिता गणा ।
 अष्ट वा पञ्च वा तेषा प्रत्येक लक्षण यथा ॥ ५१ ॥

१ छोयुद्धदो दधौ, २ अतौ व्यसनदायका, ३. शस्तु हति, ४ भेदं,
 ५ युक्तं दु फलदो, ६ काभ्यदौ ।

त्रिगुरुर्भगण प्रोक्तस्त्रिलघुर्नगणो मत ।
 यगणो लघुमानादौ तगणोऽन्त्यलघुर्मतः ॥ ५२ ॥
 रगणो लघुमान्मध्ये जगणो मध्यसद्गुरु ।
 सगणोऽन्त्यगुरु प्रोक्तो भगणो गुरुगदित ॥ ५३ ॥
 अष्टावृते गणा प्रोक्ता प्रत्येक त्रिषुवर्णका ।
 वर्णवृत्ते प्रयोक्तव्या कवितानिपुणैर्वृद्धैः ॥ ५४ ॥
 चतुर्मात्रागणा पञ्च प्रत्येक गदिता वृद्धैः ।
 मात्रावृत्ते तु^१ ते ज्ञेयास्तेषा लक्षणमुच्यते ॥ ५५ ॥
 द्विगुरुर्भगण प्रोक्तो नगणश्च चतुर्लघु ।
 भगणो जगणो यश्च सगणो वर्णवृत्तवत् ॥ ५६ ॥
 यस्तास्तु न मन्त्यत्र पञ्चमात्रात्मकत्वत ।
 क्वचित् सन्ति विशेषोक्ते सभवादिति बुध्यताम् ॥ ५७ ॥
 यगणो जलरूपोऽय धनकृद्भगणोऽनल ।
 भयदाहकरस्तस्तु गगन श्रीकरो मत ॥ ५८ ॥
 भगण सुखकृत्सौम्यो जो भानू रोगदायक ।
 वायव्य सगणो दत्ते क्षयरूप फलं सदा ॥ ५९ ॥
 शुभदो मगणो भूमिर्नगणो गौर्धनप्रद ।
 एव गणफल प्रोक्त शुभाशुभविभेदत ॥ ६० ॥
 देवतावाचिशब्दाना भद्राद्यर्थप्रकाशिनाम् ।
 शब्दाना निरवद्यत्व काव्यादौ गणवर्णत ॥ ६१ ॥
 गणवर्णफल प्रोक्त समान कविभि कृते ।
 काव्ये सर्वत्र बोद्धव्य गद्यपद्योभयात्मके ॥ ६२ ॥

१ तु वद्ज्ञेया^१, २ सुखकृत्सौम्यो, ३ भानो ।

एवं रम्यकवीश्वरे कृतिमुखे निर्दिष्टनिर्दोषकै-
 वर्णेश्चारुगणोत्करैर्विलसिते काव्ये सरोजाकरे ।
 श्रीमद्वीरनृसिंहरायनृपते कीर्तिस्त्वदीयामला
 मत्पत्यागगुणोद्भवा विजयता सा राजहसीसमा ॥६३॥

इति परमजिनेन्द्रवदनचन्द्रविनिर्गतस्याद्वादचन्द्रिकाचकोरविजयकीर्ति-
 मुनान्द्रचरणाब्जचञ्चरीकविजयवर्णविरचिते श्रीवीरनरसिंह-
 कामिराजबङ्गनरेन्द्रशरदिन्दुसनिभकीर्तिप्रकाशके शृङ्गा-
 रार्णवचन्द्रिकानाम्नि अलङ्कारसंग्रहे वर्णगणफल-
 निर्णयो नाम प्रथम परिच्छेद ।
 श्री ॥ श्री जिनाय नम ॥

इति वर्णगणफलनिर्णयो नाम प्रथम परिच्छेद ।



काव्यगतशब्दार्थनिश्चयो नाम

द्वितीय. परिच्छेद

प्रतिभाशक्तिसपन्नो व्युत्पत्त्यभ्यासभूषित ।
 अष्टादशम्यलार्थानां वर्णनानिपुण कवि ॥१॥
 अथवा शक्तिनैपुण्यकविशिक्षात्रयान्वित ।
 रसभावपरिज्ञानगुणाढ्य कविरुच्यते ॥२॥
 त्यज्यते गृह्यते शब्दोऽर्थो वा तावत्पुन पुन ।
 येन यावद्बुचि स्वस्य रौचिक स कविर्भवेत् ॥३॥
 शब्दडम्बरमात्रार्थी वाचिक कविरुच्यते ।
 अर्थवैचित्र्यमात्रार्थी सोऽयमार्थ कविर्भवेत् ॥४॥
 शब्दार्थद्वयचित्रार्थी शिल्पिक कविरुच्यते ।
 शब्दार्थमृदुताकारी मूर्द्धवानुगनादभाक् ॥५॥
 वाच्यवाचकसबन्धिगुणदोषविदा वर ।
 महाकवीनां मार्गज्ञो नानाशास्त्रार्थकोविद ॥६॥
 विवेकीति कवि प्रोक्तो दिव्यालकारयोजने ।
 तत्परो भूषणार्थीति नाम्ना कविस्ताहृत ॥७॥
 इति सप्तविधा प्रोक्ता कवय कविपुङ्गवै ।
 कविप्रयुक्तवाक्यानां चतुर्धार्थं प्रवर्तते ॥८॥
 मुख्योऽर्थो लक्ष्यनामापि गौणाख्यो व्यङ्ग्यनामक ।
 महाकवीन्द्रे सत्काव्ये प्रयुक्तोऽर्थश्चतुर्विध ॥९॥

१ येन यावद्बुचि स्वस्य स कवी रौचिको भवेत् । २. मूर्द्धवानुगना-
 दुभाक् ।

साक्षात् संकेतविषयो मुख्योऽर्थः प्रणिगद्यते ।
 जातिः क्रिया गुणो द्रव्यमिति सोऽपि चतुर्विधः ॥१०॥
 अश्व-गो-गज-वृक्षादि-शब्दा जातिप्रकाशका ।
 क्रियाभिधायिका याति गच्छतीत्यादयो मता ॥११॥
 शुक्लकृष्णहरिद्रक्तेकिर्मीरादिर्गुणो भवेत् ।
 दण्डिकुण्डलिचैत्रादि-द्रव्यमित्यभिधीयते ॥१२॥
 मुख्यार्थं बाधिते मुख्यसबन्धयर्थोऽपि लक्ष्यते ।
 'अन्यार्थत्वेन य सोऽय लक्षणेत्यभिधीयते ॥१३॥
 लक्ष्यवाचकशब्दस्य लक्षणाशक्तयस्त्रिधा ।
 जहत्यजहती स्वार्थं जहत्यजहतीति च ॥१४॥
 यत्र स्वार्थं परित्यज्य शब्दोऽन्यत्र प्रवर्तते ।
 तत्सबन्धयुते प्रोक्ता सा जहल्लक्षणा बुधैः ॥१५॥
 'कौमुद वर्धयत्यत्र राजा नीतिविदा वर ।
 घोषो वसति गङ्गायामित्युदाहरण मत्तम् ॥१६॥
 अपरित्यज्य मुख्यार्थं शब्दोऽन्यत्र प्रवर्तते ।
 तत्सबन्धयुते यत्र सा जहल्लक्षणेतरा ॥१७॥
 प्रविशन्ति महादुर्गं कुन्ताश्चापानि शक्तयः ।
 खेटखड्गाश्च रक्षार्थमित्युदाहरण स्मृतम् ॥१८॥
 शब्दो जहाति मुख्यार्थं न जहात्यपि यत्र सा ।
 जहत्यजहती प्रोक्ता लक्षणा कविकुञ्जरैः ॥१९॥
 व्रजन्ति शिविका मार्गं व्रजन्ति च्छत्रिणोऽपि च ।
 व्रजन्त्यान्दोलिका प्रोक्तमित्युदाहरण बुधैः ॥२०॥
 'शिविका-दोलिका-च्छत्रशब्दैः स्वार्थप्रकाशकैः ।
 अन्येषां शिविकान्दोलच्छत्रित्वमिह लक्ष्यते ॥२१॥

१ किमारु०, २. मुख्यार्थत्वेन, ३ कापुदं, ४ शपानि ५. शिविका, दोलिका छत्रोन् ।

मुख्यबाधे निमित्ते च फले चारोप्यते बुधे ।
 योऽर्थोऽभेदेन भेदेन स गौणो विदुषा मत ॥२२॥
 सिंहो नृपतिरित्यत्र गौणोऽभेदेन समत ।
 राजा सिंह इव प्रोक्तो भेदो गौणो बुधोत्तमै ॥२३॥
 मुख्यार्थाल्लक्ष्यतो गौणाद्बुधो योऽर्थं प्रतीयते ।
 स व्यङ्ग्यो ध्वनिरित्युक्त कलाशास्त्रविशारदं ॥२४॥
 कौमुद वर्धयत्यत्र राजेत्युक्ते प्रतीयते ।
 प्रजोपकारिता राज्ञ सा व्यङ्ग्य इति बुध्यताम् ॥२५॥
 अभिधा लक्षणा गौणी व्यञ्जना च चतुर्विधा ।
 शब्दाना शक्तिरित्युक्ता पुरातनकवीश्वरै ॥२६॥
 अभिधाशक्तिमाश्रित्य नानार्थान् व्यञ्जयन्ति ये ।
 शब्दास्ते नियतार्थेषु नियम्यन्ति नियामकै ॥२७॥
 नियमाकरणे काव्येऽनिष्टार्थाना प्रतीतित ।
 असदर्थप्रसगाख्यदोषदुष्टा कृतिर्भवेत् ॥२८॥
 ते के नियामका ब्रूध्वमिति प्रश्ने नियामका ।
 सयोगादय इत्युक्ता गुणशालिकवीश्वरै ॥२९॥
 सयोगविप्रयोगौ विरोधितासाहचर्यकालाश्च ।
 अर्थं प्रकरण लिङ्ग शब्दान्तरसनिधिश्च सामर्थ्यम् ॥३०॥
 औचित्यव्यक्तिदेशाश्च गदितास्तु स्वरादय ।
 कविप्रयुक्तशब्दानामर्थभेदप्रकाशका ॥३१॥
 सचक्रो हरिरित्यत्र चक्रयोगात् प्रतीयते ।
 अचक्रो हरिरित्यत्र तद्वियोगाच्च माधव ॥ ३२॥
 राजा कमलविरोधीत्युक्ते चन्द्रो विरोधतो ज्ञात ।
 अर्कं कुमुदविरोधीत्युक्ते तत एव कारणाद् भानु ॥३३॥
 जिष्णुभीमाविति प्रोक्ते साहचर्यात् परस्परम् ।
 पार्थपार्थाग्रजौ ज्ञातौ कवितानिपुणैर्बुधै ॥३४॥

भातीन्दीवरमित्युक्ते कालोऽर्थस्य प्रकाशक ।
 दिवसे यदि नीरेज रात्रौ चेद्रुत्पल स्मृतम् ॥३५॥
 सप्ताङ्गभासुरो राजेत्यर्थो नृपतिबोधक ।
 अर्जुन समरे पार्थज्ञान प्रकरणादभूत् ॥३६॥
 नर कपिध्वज इति लिङ्गात् पार्थोऽवगम्यते ।
 इन्द्र शचीश इत्यन्यशब्दाद्वासवनिश्चय ॥३७॥
 नीलकण्ठो नरीनर्ति शक्तिवर्षर्तुबोधिका ।
 'अत्रास्ते नृपतिर्जातिमौचित्यात् सिंहविष्टरम् ॥३८॥
 अब्जोऽब्ज राजतीत्युक्ते चन्द्रोऽम्भोज प्रतीयते ।
 पुनपुसकलिङ्गाख्यव्यक्तिभ्या कविकुञ्जरै ॥ ३९ ॥
 गगने राजते राजा देशाच्चन्द्रो विनिश्चित ।
 गानस्वरादिरर्थस्य गमकोऽपि न काव्ययुक् ॥ ४० ॥
 आदिशब्देन चेष्टादिगृह्यतेऽर्थप्रकाशक ।
 उदाहरणमेतस्य ज्ञातव्य बुद्धिशालिभि ॥ ४१ ॥
 एव शब्दगतार्थनिश्चययुतैर्धूमत्कवीन्द्रं कृते
 काव्यव्योम्नि तिरस्कृतारिगुणतारालिप्रभे निर्मले ।
 भो भो वीरनृसिंहरायनृपते ते सत्प्रतापो रवि
 कुर्वन्वैरिनिकायकैरवगणम्लानि सदा वर्तताम् ॥ ४२ ॥
 २ति परमजिनेन्द्रवदनचन्द्ररविनिर्गतस्याद्वादचन्द्रिकाचकोरविजय-
 कीर्तिमुनीन्द्रचरणाऽज्जञ्चरीकविजयवर्णविरचिते श्रीवीर-
 नरसिंहकाभि राजवङ्गनरेन्द्रशरदिन्दुसनिभकीर्तिप्रकाशके
 शृङ्गारार्णवचन्द्रिकानाम्नि अलकारसग्रहे काव्यगत-
 शब्दार्थनिश्चयो नाम द्वितीय परिच्छेद ।
 काव्यगतशब्दार्थनिश्चयो नाम द्वितीय परिच्छेद ।

१. अत्रासे नृपतिज्ञातं, २ वीवान् ।

रसभावनिश्चयो नाम

तृतीय. परिच्छेदः

निरवद्यवर्णगणयुतमपि काव्य निर्मलार्थशब्दयुतम् ।
 निर्लवणशाकमिव तन्न रोचते नीरसं सता मनसे ॥ १ ॥
 अत कारणतोऽस्माभिरुच्यते रसलक्षणम् ।
 पूर्वशास्त्रानुसारेण भावभेदविशेषितम् ॥ २ ॥
 चित्तस्य वृत्तिभेदो य परिणामापराख्यक ।
 स्थिरत्वं प्राप्तवान् सोऽय स्थायिभावो निगद्यते ॥ ३ ॥
 रतिहामशोककोपोत्साहभयाख्यस्तथा जुगुप्साख्य ।
 विस्मयशमाभिघ स स्थायिभावो हि नवभेद ॥ ४ ॥
 विभावैरनुभावैश्च मात्त्विकैर्व्यभिचारिभि ।
 बुध्यमानैस्तु मुव्यक्त स्थायिभावो रसो भवेत् ॥ ५ ॥
 एव लक्षणयुक्तोऽय रसो नवविध स्मृत ।
 शृङ्गारो हास्यनामा च करुणाख्योऽपि रौद्रक ॥ ६ ॥
 वीरो भयानको यश्च बीभत्सोऽद्भु त इत्यपि ।
 शान्तनामा च ते सर्वे रसभेदा निरूपिता ॥ ७ ॥
 भावैश्चतुर्भि पूर्वोक्तेर्व्यज्यमाना रतिर्यदा ।
 तदा कवीन्द्रै शृङ्गाररस इत्यभिधीयते ॥ ८ ॥
 एवमन्ये स्थायिभावा भावैर्व्यक्ता रसा स्मृता ।
 स्वर्णं वह्नियुत याति रमभाव यथा भुवि ॥ ९ ॥
 काव्येषु ते विभावाद्या श्रूयमाणा रस नृणाम् ।
 श्रोतृणा पोषयन्त्यत्र रसभावार्थवेदिनाम् ॥ १० ॥

दृश्यमाना नाटकेषु ते भावा जनयन्त्यलम् ।
 प्रेक्षकाणां रस सर्वं नाट्यशास्त्रार्थवेदिनाम् ॥ ११ ॥
 भुज्यमानाश्च भोक्तृणां ते रस पोषयन्त्यलम् ।
 भावयन्ति रस ये च ते भावा गदिता बुधैः ॥ १२ ॥
 भावाश्चतुर्विधा प्रोक्ता कवितागुणशालिभिः ।
 विभावा अनुभावाश्च सार्विका व्यभिचारिणः ॥ १३ ॥
 भावयन्ति विशेषेण ये रस ते विभावका ।
 आलम्बोद्दीपनत्वेन ते विभावा द्विधा मताः ॥ १४ ॥
 आलम्ब्य य रसोत्पत्तिं सोऽयमालम्बनो मतः ।
 उद्दीप्यते रसो येन स चोद्दीपनसंज्ञकः ॥ १५ ॥
 भावका रसमुत्पन्नं चित्तस्थं भावयन्ति यैः ।
 भावैस्ते गदितास्सिद्धिरनुभावाश्शरीरजा ॥ १६ ॥
 रसिकानां मनोवृत्तिं सत्त्वमित्यभिधीयते ।
 सत्त्वसजनिता भावा सात्त्विका परिकीर्णिता ॥ १७ ॥
 स्वेदकम्पनरोमाञ्चलयस्तम्भविवर्णता ।
 विकारस्वरता चाश्रु प्रणीत सात्त्विकाष्टकम् ॥ १८ ॥
 स्थायिभावाण्ये भावा सचरन्त्यूर्मिसनिभा ।
 ये तेष्वनियता भावा व्यभिचार्यभिधानका ॥ १९ ॥
 सशङ्खौ ग्लानिनिर्वेदौ जाड्यहर्षौ धृतिश्रमौ ।
 दैन्याग्दयत्रामचिन्तेष्यमिषेर्गर्वमदा स्मृतिः ॥ २० ॥
 मरणं सुप्तिनिद्रावबोधव्रीडाविषादकाः ।
 व्याध्यपस्मारचापल्यमतिमोहौत्सुक्यास्तथा ॥ २१ ॥
 अवहित्थालस्यवेगौ तर्कोन्मादौ कवीश्वरैः ।
 एते सचारिभावा हि त्रयस्त्रिंशत्प्रकीर्तिता ॥ २२ ॥

१ चित्तस्थं सा भवति वै ।

दृश्यत्वाद् रसभावाना नटे काल्पनिको रस ।
 सामाजिके तात्त्विकस्तु रसो निजरसस्मृते ॥२३॥
 भुवने रसिका लोका रसान् स्वाभाविकानलम् ।
 भुञ्जते निजकर्मानुमारेण बहुधा सदा ॥२४॥
 रमानामिति सर्वेषा सामग्री गदिता मया ।
 शृङ्गाररममामग्री विशेषेण निरूप्यते ॥२५॥
 आलम्बनविभावोऽत्र शृङ्गाराख्यरमे स्मृत ।
 कान्ताया कामुको लोके कामुकस्य तु कामिनी ॥२६॥
 वसन्तोद्यानकासारशुकध्वनिपिकस्वरा ।
 शिखिताण्डवजीमूतध्वनिहमविकूजनम् ॥२७॥
 चक्रवाकरतिक्रीडाचञ्चरीकालिगुञ्जनम् ।
 मलयानिलमचारश्चन्द्रतापविलासनम् ॥२७॥
 इन्द्रगोपस्य पतन वन्दनादिविलेपनम् ।
 उद्दीपनविभावोऽत्र शृङ्गारे ज्ञायता बुधै ॥२९॥
 अनुभावास्तु शृङ्गारे कामुकस्याङ्गसभवा ।
 कामुकीकायजाता वा विकारा परिकीर्तिता ॥३०॥
 अपाङ्गलोकन प्रीतिकरसूक्तिविलासनम् ।
 भ्रूलताक्षेपण कर्णपूरोत्पलविवाहनम् ॥३१॥
 रशनाबन्धन वामचरणाघातन स्मितम् ।
 नीवीविस्र सन नाभिजघनोरुविमर्शनम् ॥३२॥
 आलिङ्गन कुचद्वन्द्वविमर्दनरतिक्रिये ।
 एतेऽनुभावा कथ्यन्ते शृङ्गारे कविकुञ्जरै ॥३३॥
 कान्ताकामुकयोरत्र दर्शने स्पर्शनेऽथवा ।
 सात्त्विका स्वेदरोमाञ्चवैवर्ण्यस्तम्भनादय ॥३४॥

योज्या सचारिभावाश्च शृङ्गारेऽत्र विशारदै ।
 ग्लानिनिर्वेदनिद्रावबोधशङ्कामदादय ॥३५॥
 सामग्रीमबलम्ब्येमा जात शृङ्गारनामक ।
 सभोगो विप्रलम्भश्च द्विविधो रस उच्यते ॥३६॥
 कान्ताकामुकयो सूक्तिविलासस्पर्गनादिभि ।
 मिथ सबन्धरूपोऽत्र सभोग कथ्यते बुधै ॥ ३७ ॥

अस्योदाहरणम्—

जातीकन्दुकताडन सरसहु कारस्वरोल्लासन
 काञ्चीभूषणबन्धन कृतककोपाविद्धकेशग्रह ।
 भ्रूविक्षेपणवर्जन कपटरम्याक्रोगन शासन
 श्रीरायक्षितिपस्य मोहनकर कान्ताकृत चेष्टितम् ॥ ३८ ॥
 प्रच्छन्तो वा प्रकाशो वा सभोगो द्विविधो मत ।
 प्रकाशो गणिकास्त्रीणामन्यस्त्रीणा परो भवेत् ॥ ३९ ॥
 पूर्वानुरागो मानात्मा प्रवास करुणाभिध ।
 चतुर्धा विप्रलम्भ स्याद् वक्ष्यते तन्निदर्शनम् ॥ ४० ॥
 सभोगविप्रलम्भौ तौ कान्ताकामुकयोरिह ।
 सयुक्तायुक्तयोर्वाच्यौ यथासख्य बुधोत्तमै ॥ ४१ ॥
 कान्ताया कामुकस्यापि रत्युत्कर्षेण भाविता ।
 अवस्था दश वर्तन्ते तासामुद्देशलक्षणे ॥ ४२ ॥
 नयनप्रीति सक्ति मनस सकल्पजागरौ तनुता ।
 विषयद्वेषो लज्जाविनाशन मोहमूच्छने मरणम् ॥ ४३ ॥
 रमणी रमणो यत्र रमणी रमण भृशम् ।
 द्रष्टुमिच्छति सा प्रोक्ता चक्षु प्रीतिर्दशा बुधै ॥ ४४ ॥
 कादम्बनाथ रमणी रतिनाथवश्या
 सौघाग्रवर्तिमणिनिर्मितविष्टरस्था ।

बाह्यालिभूमिगतजातितुरङ्गमाया-

रूढ भवन्तमतिचारु विलोकते स्म ॥ ४५ ॥

रमण्या रमणस्यापि यत्र चिन्ता पुनः पुनः ।

प्रतिकृत्यादिना तेन सा मनःसक्तिरुच्यते ॥ ४६ ॥

कादम्बक्षितिनाथ कामवशगाराम गता कामिनी

दृष्ट्वा पल्लवमञ्जरी मरसिजं नीलोत्पल मल्लिकाम् ।

भृङ्गी कोमलचारुकीरवचन सत्कोकिलानां स्वर

त्वापुष्पास्त्रसम मुहुर्मुहुरल सचिन्त्य लीनाभवत् ॥ ४७ ॥

मनोरथयुतस्वान्ते कान्ताया कामुकस्य वा ।

प्राप्तिसकल्पन यत्र स सकल्पो मतः सताम् ॥ ४८ ॥

कादम्बनाथमदन निजचित्तगेहे

कृत्वा मनोजधरणीश्वरराज्यलक्ष्मी ।

आलिङ्गन मधुरचुम्बनमङ्घ्रिघात

सकल्प्य भावरतिमेति वियुक्तकान्ता ॥ ४९ ॥

यत्र कान्तस्य कान्ताया अलाभे तस्य चिन्तनम् ।

तस्या वा चिन्तनं नित्यं स जागर इति स्मृतं ॥ ५० ॥

कादम्बक्षितिनायकस्य विरहे तच्चिन्तया नायिका

सयुक्ता दरनिद्रयापि रहिता चन्द्रातपं पीडिता ।

कीरोक्त्या कलकण्ठमोहनरवैर्भृङ्गीकदम्बस्वनै-

रुद्याने शिखिना विलासघटनैर्जागति मोमुह्यते ॥ ५१ ॥

पत्युर्वा नायिकाया वा प्राप्यभावात्कृशीकृता ।

यत्र ज्वरेण कामस्य तनुः स्यात्तनुता मता ॥ ५२ ॥

आयल्लके नृपतिकुञ्जररायबङ्ग

कामज्वरेण कृशता मृगलोचनागात् ।

चान्द्री कलेव रमणी तव सा विभाति

नीरेजनालगततन्तुरिवाथवालम् ॥ ५३ ॥

यत्र न क्षमते स्त्री वा पतिर्वा कामवर्धनम् ।

भाव न रोचते ताभ्या विषयद्वेषक स हि ॥ ५४ ॥

कामाग्निप्रशमार्थमालिनिकरैरानीयमान सती

चूताशोकलसत्प्रवालनिचय दृष्ट्वा भय गच्छति ।

बुद्ध्या मन्मथबाणजालमिति सा चान्द्री मरीचि मनो-

भ्रान्त्याकायजमल्लिकाशर इति श्रीरायपुष्पायुध ॥५५॥

अदृष्ट्वा गौरव यत्र मान त्यजति नायिका ।

नायको वा त्रपानाश कथितो रसिकै म च ॥ ५६ ॥

मन्दानिलेन मकरन्दरसेन मत्त-

भृङ्गीस्वरेण शुककोकिलनि स्वनेन ।

चन्द्रातपेन शिखिताण्डवडम्बरेण

त्वा यातुमिच्छति सती विमदा नृपेन्द्र ॥ ५७ ॥

यत्र पत्यु स्त्रिया वा वा चित्तोन्मादो भ्रमादसौ ।

मोह इत्युच्यते सद्भि कलाशास्त्रविशारदै ॥ ५८ ॥

चन्द्रातप पिबति चुम्बति पल्लवालि

चन्द्रोदये निजपदेन निजाकृतिं सा ।

सताडयत्युरुगुण सहकारभृज

श्लिष्यत्यहो तव सती भ्रमतो नरेन्द्र ॥ ५९ ॥

यत्र कामस्य सतापात् कामिनी रमणोऽथवा ।

न जानाति कमप्यर्थं सा मूर्च्छा गदिता बुधै ॥ ६० ॥

पुष्पास्त्रबाणपतन क्षमते न सोढु

या सा सती तव वियोगवशात् प्रयान्ती ।

मूर्च्छा पटे लिखितमन्मथकामिनीव

भात्यद्य ता मदनराज नृपेन्द्र रक्ष ॥ ६१ ॥

म्रियते यत्र रमणी रमणो वाप्यलाभत ।
 द्वयोरन्यतरस्यात्र मरण तत् प्रकीर्तितम् ॥ ६२ ॥
 कादम्बनाथ तव पुण्यफल किमत्र
 तस्या पुरातनसुकर्मफल किमत्र ।
 कामस्य बाणनिवहो दशमीभवस्था
 ता नायिका नयति नो खलु रक्ष रक्ष ॥ ६३ ॥
 ज्ञातभावचतुष्केण नीयते व्यक्तरूपताम् ।
 हासाख्यस्थायिभावो यो हास्यनामा रसो मत ॥ ६४ ॥
 आलम्बनविभावोऽत्र रसे हास्ये मतो बुधे ।
 विदूषकजनो निन्द्यपदार्थनिवहोऽथवा ॥ ६५ ॥
 विदूषकस्य भाषा वा तदाकारस्य विक्रिया ।
 उद्दीपनविभावोऽत्र निन्द्यदोषगणोऽथवा ॥ ६६ ॥
 चक्षुर्विकाशो देहस्य चलनादी रसाच्च ये ।
 रमभोक्तृनरे प्रोक्ता अनुभावा विशारदै ॥ ६७ ॥
 विस्वरत्वाश्रुवैवर्ण्यस्वेदादि मात्त्विको मत ।
 औत्सुक्यगर्हचापल्यश्रमा सचारिणो मता ॥ ६८ ॥
 उत्तमो मध्यमो लोके जघन्यस्त्रिविधो मत ।
 हास्यनामरसस्तत्र स्मित हसितमुत्तमे ॥ ६९ ॥
 ततो विहमित मध्ये तथोपहमित मतम् ।
 अन्त्येऽवहसित चात्र रसेऽतिहसित मतम् ॥ ७० ॥
 विकमितगण्ड त्वीषल्लक्ष्यदन्त मृदुस्वनम् ।
 शिर कम्प साश्रुकम्प विक्षिप्ताशेषदेहकम् ॥ ७१ ॥
 एतेषा लक्षण प्रोक्त यथामख्यमित परम् ।
 उदाहरणमेतस्य रसस्य प्रोच्यते मया ॥ ७२ ॥

१. रसादये । २. अन्त्येन हसित ।

श्रीरायक्षितिनायकस्य समरे ता वैजयन्ती परे
 दृष्ट्वा भीतिवशात् पतन्ति कतिचिद्भावन्ति मूर्च्छन्ति च ।
 ता दृष्ट्वा स्मयते हसन्ति विहसन्त्यन्ये परे चेतरे
 केचिच्चोपहसन्ति चावहसन कुर्वन्ति हास परम् ॥ ७३ ॥
 शोकाख्यस्थायिभावो यो व्यक्तो भावचतुष्कत ।
 करुणाख्यरस सोऽत्र प्रोच्यते कविपुगवै ॥ ७४ ॥
 इष्टानिष्टविनाशाप्तजातत्वात् करुणो द्विधा ।
 नष्ट वानिष्टयुक्त वा वस्त्वालम्बनमुच्यते ॥ ७५ ॥
 स्वजनाक्रन्दन बन्धुदर्शनादि निरूप्यते ।
 उद्दीपनोऽनुभावस्तु नि श्वासरुदितादिक ॥ ७६ ॥
 विस्वरत्वाश्रुपौतादि सात्त्विको व्यभिचारिण ।
 विषादबाध्यदीनत्वमृत्तिचिन्तादय स्मृता ॥ ७७ ॥
 कादम्बक्षितिपेन भीकरमहासग्रामभूमौ हत
 श्रुत्वा वैरिगण तदीयवनिता शोकाब्धिपार गता ।
 हारालम्बिमनोज्ञमौक्तिकगण नीरेजरागव्रज
 रायक्षमापतिकीर्तिविक्रमसम मुञ्चन्ति दिङ्मण्डले ॥ ७८ ॥
 रायक्षमापतिना भयकरमहायुद्धे विपक्षव्रज
 जित्वानीय सशृङ्खल जडमिम कारागृहे बन्धितम् ।
 श्रुत्वा तद्वनिता परा शुचमिता केशावलि श्यामला
 श्रीरायस्य कृपाणवल्लिसदृशी मुञ्चन्ति मूर्च्छन्ति च ॥ ७९ ॥
 क्रोधाख्यस्थायिभावोऽय व्यक्तो भावचतुष्टयात् ।
 रौद्र सोऽपि रसो द्वेधा मात्सर्यद्वेषजन्मत ॥ ८० ॥
 आलम्बनविभावोऽस्य मात्सर्यद्वेषगोचर ।
 उद्दीपनस्तु तद्भाषा तच्चेष्टादिक उच्यते ॥ ८१ ॥

१ हतादि ।

अनुभावस्तु विक्षेपो भ्रुवा लोचनरक्तता ।
 ऊरुह्मनोष्ठचलनप्रमुख पङ्क्तिर्कीर्तित ॥ ८२ ॥
 सात्त्विक स्वेदरोमाञ्चद्विस्वरत्वादिको मत ।
 सचारी द्वेषगर्वोद्यभावोऽपि प्रणिगद्यते ॥ ८३ ॥
 श्रीरायश्मापशक्ति पटनरगमरे भूरिदोर्दण्डचार्वी
 ज्ञात्वा वैरिदक्षिणीणा अपि निजहृदयोपात्तमात्सर्यदोषा ।
 अस्माक साम्यभाजो नहि नहि भुवने कर्णपार्थादियो वा
 मूले तिष्ठन्तु के वा समरधुरमहा गर्वमेन वदन्ति ॥ ८४ ॥
 घोरश्रयुद्धरङ्गे समरदुग्मह वैरिभूपालवर्ग
 दृष्ट्वा कादम्बनाथा दिशि दिशि विकिरन् कोपवह्निस्फुलिङ्गम् ।
 कल्पान्तद्वाद्वदेव प्रकटितमहिमा शत्रुभूमिभ्वराणा
 महार साधु कृत्वा विलसति भुवने युद्धरङ्गत्रिणेत्र ॥ ८५ ॥
 उत्साहस्थायिभावोऽत्र व्यक्तो वीररगो मत ।
 भावश्चतुर्भि रस त्रिविध एनरुच्यते ॥ ८६ ॥
 दानवीरदयावीरयुद्धवीरप्रकारभाक् ।
 सत्पात्र दीनपुरुषो वैरिलोको यथाक्रमम् ॥ ८७ ॥
 आलम्बनविभावस्नुहीपन क्रमतो मत ।
 दानस्नवनदीनोक्तिरयुद्धभेरिस्वरादिक ॥ ८८ ॥
 अनुभाव क्रमाच्चिन्नप्रमत्ति शस्त्रमग्रह ।
 सात्त्विको गेमहर्षादि सचारी प्रोच्यतऽधुना ॥ ८९ ॥
 गर्वहर्षमहाक्राधदृन्यादिवह्निभेदभाक् ।
 बुध्यन्ता कविताप्रौढगुणभाग्भि कवीश्वरे ॥ ९० ॥
 यद्दानाद्धनदा भवन्ति कतिचित् केचिच्च कर्णा परे
 जायन्त मुग्धनायकास्त्रिभुवन व्याप्नोति कीर्ति परा ।
 कल्पानोकहृकर्णरामनृपतीन् हित्वा यशस्काग्मिनी
 य भूप श्रयते स रायनृपति श्रीदानवीरो भुवि ॥ ९१ ॥

दीनानाथजनान् विलोक्य हृदये दुःखाग्निदग्धान् बहून्
 कारुण्यामृतभासुर परिलसद्दानेन पीनेन वै ।
 रक्ष रक्षमतीव याति न हि यस्तृप्तिं परां चेतसि
 श्रीरायक्षितिनायकं स भुवने कारुण्यजीरो भवेत् ॥ ९२ ॥
 य दृष्ट्वा प्रलयान्तभैरवमिमं दोर्दण्डचण्ड नृप
 वैरक्षमापगणा भयज्वरमिता धावन्ति मूर्च्छन्ति च ।
 नीर यान्ति तरु श्रयन्ति तृणकं चुम्बन्ति वल्मोकक
 चारोहन्ति स रायबङ्गनृपतिं सग्रामवीरो भुवि ॥ ९३ ॥
 भयाख्यस्थायिभावोऽत्र व्यक्तो भावचतुष्टयान् ।
 भयानकरसस्तस्यालम्बभाव प्ररूपित ॥ ९४ ॥
 निर्घातिव्याघ्रसर्पारिभल्लूकेभहरिव्रज ।
 उद्दीपनो घनस्तस्य गर्जनादि प्रकीर्तित ॥ ९५ ॥
 अनुभावोऽत्र वैवर्ष्यस्वेदकम्पादिको मत ।
 स एव सात्त्विको भाव सचारी तु प्रकीर्त्यते ॥ ९६ ॥
 सन्नमत्राममोहोरुदीनभावादिभेदभाक् ।
 एते चतुर्विधा भावा योज्या काव्यविशारदै ॥ ९७ ॥
 युद्धे रायनरेन्द्रहस्तकलितं खङ्गोरुकालोरग
 दृष्ट्वा भीतिवशाद्विपक्षधरणीनाथा प्रकम्प गता ।
 धावन्तो गिरिगङ्गारास्थितमहाघोरान्धकार श्रिता-
 स्नास्तत्रापि भयं नयन्ति वनिता दिव्याङ्गसत्कान्तय ॥ ९८ ॥
 जुगुप्सास्थायिभावोऽयं व्यक्तो बीभत्सनामक ।
 रमो जुगुप्स्यवैराग्यहेतुजन्मा द्विधा मत ॥ ९९ ॥
 आलम्बनविभावोऽत्र जुगुप्स्योऽर्थो मनःप्रिय ।
 उद्दीपनस्तु दुर्गन्धद्रुष्टदोषादिको मत ॥ १०० ॥

१ उद्दीपनं हनं ।

अनुभावोऽस्य वक्त्रस्य नासिकायाश्च कूणनम् ।
 वेगप्रभृतिक चोक्त पुलकादिस्तु मात्त्विक ॥ १०१ ॥
 निर्वेगोद्वेगकोपादि सचारी परिकीर्त्यते ।
 इति भावचतुष्क तु योज्य सत्कविकुञ्जरै ॥ १०२ ॥
 श्रीरायक्षितिपेन घोरममरे जित्वा विनि कासिला
 देगाद् वैरिनुपा निजेष्टरमणीयुक्ताश्चरन्तोऽनिशम् ।
 सर्वाङ्गव्रणपूयजर्जरतकाष्टाङ्गा जुगुप्स्या जना-
 वर्तन्तेऽ गतिका दरिद्रमनुजा भिक्षाटने तत्परा ॥१०३॥
 श्रीरायवगभूपतिनिर्जितगात्रवगणस्य कष्ट वै ।
 दृष्टवते लोकेऽसौ जनाय कि रोचते मपत् ॥ १०४ ॥
 विम्मयस्थायिभावस्तु भावैर्व्यक्तोऽद्भुतो मन ।
 जनचेतश्चमत्कारि वस्त्वालम्बनमुच्यते ॥ १०५ ॥
 अहोवचनमित्यादिर्भावस्तूहीपनो मत ।
 अनुभावस्तु दृष्ट्यास्यकपोलस्फुरणादिक ॥ १०६ ॥
 रोमाञ्चस्वेदभावादि मात्त्विक परिकीर्तित ।
 हर्षसभ्रमभावादि सचारी तु निगद्यते ॥ १०७ ॥
 श्रीरायक्षितिपस्य राजसदन तत्राद्भुता सत्सभा
 तत्र स्थापितविष्टर रुचिकर तत्र स्थित भूपतिम् ।
 तद्देह तदनुनभूषणगण तत्कान्तिजाल पर
 तद्व्याप्त जनता विलोक्य परमा चित्रीयते सनतम् ॥१०८॥
 शमाख्यम्यायिभावोऽयं विभावादित्तुष्ट्यात् ।
 व्यक्त शान्तरम प्रोक्तो गुणशालिकवीश्वरे ॥ १०९ ॥
 आलम्बनविभावस्तु पञ्चाना परमेष्ठिनाम् ।
 स्वरूप निजरूप वा निश्चयव्यवहारत ॥ ११० ॥
 उहीपनास्तु स्याद्वादवेदिसभापणादय ।
 सर्वत्र समभावादिरनुभाव प्रकीर्तित ॥ १११ ॥

पुलकस्तम्भभावादि सार्विक' परिकीर्तित' ।
 सचारिभावो निर्वेदधृतिमत्यादिको मत' ॥ ११२ ॥
 श्रीरायक्षितिनाथपालितमहादेशे कवीन्द्रस्तुते
 योगीन्द्रा जिनतत्त्वबोधमहिता सम्यक्त्वरत्नाकरा ।
 रागद्वेषविमुक्तशान्तमनसश्चारित्रपूज्याङ्गका-
 ध्यायन्त परमात्मतत्त्वममल श्राम्यन्ति मौख्यास्पदम् ॥११३॥
 रसलक्षणमत्रोक्त रसभेदोऽपि निश्चित ।
 स्थायिभावादिसामग्री रसाना कथिता मया ॥ ११४ ॥
 इत पर रसाना तु वर्णस्तदधिदेवता ।
 कार्यकारणभावश्च विरोधोऽप्यविरोधिता ॥ ११५ ॥
 निरूप्यते जगत्ख्यात कादम्बाम्बुधिचन्द्रिर ।
 शृणु राय महीनाथ काव्यगोष्ठिविशारद ॥ ११६ ॥
 स्यादिन्दीवरवर्णस्तु रसशृङ्गारनायक ।
 तस्याधिदेवता लोके वासुदेव' प्रकीर्त्यते ॥ ११७ ॥
 सुधाधवलवर्ण स्याद्रसो हास्याभिधानक ।
 लोकेऽधिदेवता तस्य विघ्नराजो निरूपित ॥११८॥
 कषायवर्णता याति करुणाख्यो रसो भुवि ।
 तस्याधिदेवता प्रोक्ता श्राद्धदेव कवीश्वर' ॥११९॥
 जपाकुसुमवद् रक्तवर्णो रौद्रो रसो मत ।
 तस्याधिदेवता लोके रुद्रनामा निरूप्यते ॥१२०॥
 गौरवर्णेन बाभाति लोके वीररसोऽनिशम् ।
 तस्याधिदेवता लोके शतमन्यु प्ररूप्यते ॥१२१॥
 भयानकरसोऽप्यत्र धूम्रवर्ण प्रकथ्यते ।
 तस्याधिदेवता लोके महाकालोऽनुमन्यते ॥१२२॥
 रसो बीभत्सनामा च नीलजीमूतसनिभ ।
 तस्याधिदेवता लोके नन्दिनामा निबुध्यताम् ॥१२३॥

अद्भुताख्यरसो लोके हेमवर्णेन राजते ।
 तस्याधिदेवता लोके विघाता प्रणिगद्यते ॥१२४॥
 शान्तनामरसो लोके शुद्धस्फटिकवर्णभाक् ।
 तस्याधिदेवता लोके परब्रह्म प्रकाश्यते ॥१२५॥
 शृङ्गाराज्जन्म हास्यम्य करुणो रौद्रजन्मभाक् ।
 अद्भुतो जायते वीगद् बीभत्साच्च भयानक ॥१२६॥
 इतरम्माद्रमाज्जन्म नास्ति शान्तस्य शान्तता ।
 उत्तरो वा रसो लोके जायते न कदाचन ॥१२७॥
 शृङ्गारस्य विरोधी हि बीभत्स कथ्यते बुधै ।
 भयानकविरोधी तु लोके वीररसो भवेत् ॥१२८॥
 अद्भुतो रौद्रवैरी तु करुणो हास्यबाधक ।
 शान्तस्य केनचिन्नास्ति मित्रत्व वा विरोधिता ॥१२९॥
 नानाभावमनोज्ञभावविलसन्तारावलीराजिते
 नानारम्यरसौघचारुतरसज्ज्योत्स्नावलीभासिते ।
 सत्काव्ये गगने नृसिहनृपते कादम्बवशाम्बुधे
 भो भो धीर भवान् मनोज^१ विलसत्कीर्तिश्च ते वर्धतात् ॥१३०॥

इति रसभावनिश्चयनामा तृतीय परिच्छेद ।

१ वीररसो । २ °विलसत्कीर्ती च रुद्रायता ।

नायकभेदनिश्चयो नाम

चतुर्थं परिच्छेद

गुण्यभावे गुणो नास्ति यद्वन्नेतुरसभवे ।
रमभावा जगत्यत्र सभवन्ति कदापि न ॥१॥
यतस्तनो नायकस्य नायिकायाश्च लक्षणम् ।
तद्भेदाश्च निरूप्यन्ते तन्निश्चयफलात्थिनाम् ॥२॥
जनानुराग प्रियवादिभावो वाग्मित्वशौचे विनय स्मृतिश्च ।
कुलीनतास्थैर्यदृढत्वमाना माधुर्यशौर्ये नवयौवन च ॥३॥
उत्साहो दक्षता बुद्धिस्त्यागस्तेज कला मति ।
धर्मशास्त्रार्थकारित्व प्रज्ञा नेतृगुणा इमे ॥४॥
एतद्गुणविशिष्टोऽय नायक कथ्यते बुधै ।
स नायक पुन प्रोक्तश्चातुर्विध्ययुतो भवेत् ॥५॥
धीरोदात्तस्तथा धीरलालितो धीरशान्तक ।
धीरोद्धत इति ख्याताश्चत्वारो नायका भुवि ॥६॥
क्षमासामर्थ्यगाम्भीर्यदयागुणविराजित ।
आत्मश्लाघामानशून्यो धीरोदात्तो मत सताम् ॥७॥
राजसर्वज्ञकल्पोऽय रायबद्धमहीपति ।
महासमुद्रदेशीयो भूमिदेश्यो विराजते ॥८॥
भोगे कलाया लोलो यश्चिन्तातीतसुखोदय ।
मन्त्र्यपितात्मसिद्धिश्च स्याद्धीरललितो मृदु ॥९॥
श्रीरायबद्धरमणो निजकामिनीना-
मालोकन दृढतर परिरम्भण च ।

वाणीविलासमधरामृतचारुपान
 कुर्वन् महारुचिरसौधतले सदास्ते ॥१०॥
 विवेकशौचसौभाग्यसुप्रसन्नत्वभूषित ।
 विलासरसिको धीरशान्त इत्युच्यते बुधै ॥११॥
 कादम्बनाथ परिपालितरम्यराज्ये
 केचिद् विलासरसिकास्सुभगा प्रसन्ना ।
 नित्य विवेकगुणभासुरमूर्तयस्ते
 स्वेष्टाङ्गनासु कमनीयतरा रमन्ते ॥१२॥
 मायामात्सर्यचण्डत्वचलचित्तसमन्वित ।
 आत्मस्तुतिपरो मानी धीरोद्धत इतीरित ॥१३॥
 सप्ताम्भोनिधिपानक कुलगिरिवातस्य सचालन
 दिग्दन्तिव्रजकम्पन गगनतारानीकनिस्फालनम् ।
 एषामात्मविलासन प्रकटित तेऽमी वय दुर्दमा
 इत्येव वदतो रिपूञ्जयति तान्^१ श्रीरायभूमीश्वर ॥१४॥
 चत्वारो नायका एते रसेषु नवसु क्रमात् ।
 अवस्थाभेदत सर्वे वर्तन्ते गुणशालिन ॥१५॥
 एषा चतुर्णा नेतृणा धीरोदात्तादिभेदिनाम् ।
 शृङ्गाराख्यारसे प्रोक्ता प्रत्येक चतुरात्मता ॥१६॥
 अनुकूल शठो धृष्टो दक्षिणो नायका मता ।
 शृङ्गागख्यरसे सिद्धिश्चत्वारो गुणराजिना ॥१७॥
 एकस्या नायिकाया य सक्तचित्तो न बुध्यते ।
 अन्यस्त्रोसगम मोऽत्रानुकूलो नायको मत ॥१८॥
 विचकिलकुसुमाना सौगभे मग्नभृङ्ग
 परकुसुमैपराग याति नेवात्र तद्वत् ।

१ तास्त्रीरायं, २ मद्गुली ।

सुरतमधुरकेल्यां नायिकाया प्रसक्तो
 न हि परवर्नितानां संगम याति राय ॥१९॥
 एकस्या रागशून्योऽपि सराग इव भासते ।
 सलापादिविशेषेण य सोऽपि शठ उच्यते ॥२०॥
 कादम्बनाथ वचनं सुदयासम ते
 ज्योत्स्नासमानमवलोकनचैष्टित च ।
 तन्मल्लिकादिवरदानमिदं च चित्त
 कार्यं न दृष्टमिति वक्ति वधू शठ त्वाम् ॥२१॥
 दृष्ट्वान्यकामिनीसङ्गचिह्नोऽपि वितथ वदेत् ।
 वैयात्येन स घृष्ट स्यान्नायक कथितो बुधै ॥२२॥
 नमनवचनदम्भो मास्तु मास्तु त्वदीय
 कपटमिदमनेक दृष्टमत्यन्तदृष्टम् ।
 तव सकलशरीरेऽन्याङ्गनासगचिह्न
 सर सर वरकान्ता रायबङ्गं ब्रवीति ॥२३॥
 एकाङ्गनालोलचित्तं समभावेन वर्तते ।
 अन्याङ्गनासु स प्रोक्तो दक्षिणो नायको बुधै ॥२४॥
 ऋटित दुर्बोधं च पद्यस्यास्य चरणद्वयं यथा पादटिप्पण्या लिखितम्
 कर्पूराणि वितीर्य चारुरमणीवृन्दाय दूतीजना
 श्रीरायो नृपकुञ्जरं प्रहितवान् साहित्यरत्नाकर ॥२५॥
 इदमपि दक्षिणनायकनिर्णयं—
 नीरेज वरमल्लिका किसलय चूतस्य नीलोत्पल
 कङ्कालिस्थितपल्लव निजमहामाहात्म्यससूचकम् ।

१ चित्र, २ रौरागापरमादिवर्णविलसन्नमानि * समुदर्यकान्ताममहा-
 त्कस्तूरिरागाक्षर ।

दत्वालीजनपञ्चकस्य हि करे कान्ताजनेभ्यो मुदा
 श्रीरायो वरदक्षिण प्रहिनवान् शृङ्गारदुग्धाम्बुधि ॥२६॥
 धीरोदात्तादिनेतृणा शृङ्गारे षोडशात्मनाम् ।
 उत्तमादिविभेदेन प्रत्येक त्रिविधात्मता ॥२७॥
 शृङ्गाराम्यरमे नेत्रभेदा लोके निरूपिता ।
 अष्टसन्धोत्तराश्चत्वारिंशत्सन्ध्या कवीश्वरै ॥२८॥
 एतेषा नायकाना तु महाया उनायका ।
 विदूषक पीठमर्दो विटो नागरिको मता ॥२९॥
 नायकस्य^१ प्रसंगे च नानाहासकरो मत ।
 विदूषक मता^२ लोकव्यवहागादिविच्च य ॥३०॥
 नायकोक्तेषु कार्येषु पटुर्नायकमद्गुणात् ।
 किञ्चिन्न्यूनगुण प्रोक्त पीठमर्दो बुधोत्तमै ॥ ३१ ॥
 नायकाना चित्रवृत्तेरानुकूल्यपरो विट ।
 नानाकलाप्रौढियुक्तो मतो नागरिको बुधै ॥ ३२ ॥
^३लुब्धाधीरोद्धता ये च स्तब्धा पापपरायणा ।
 ते पुनर्नायकाभासा पुरुषा प्रतिनायका ॥ ३३ ॥
 पूर्वोक्ताना नायकाना योवने तु गुणाष्टकम् ।
 मत्त्वसजातमित्युक्त्तमधुना तन्निरूप्यते ॥ ३४ ॥
 तेजो विलामो माधुर्य शोभा स्थाय्य गभीरता ।
 औदार्य ललित चेति गुणाष्टकमिति स्मृतम् ॥ ३५ ॥
 प्राणाभावेऽपि पुरुषो धिक्कारादिपराभवम् ।
 क्षमते जानु नो यत्तत्तेज प्रोक्त विशारदै ॥ ३६ ॥

१ प्रसङ्गे ह, २ व्यवहारादि विध, ३ लुब्धादिरोद्धता
 ए च स्तब्धा, ४ तेषु नर्नायकाभासा ।

सधैर्यं गमनं दृष्टिं सधैर्यां स्मितभाषणम् ।
 विलासाख्यगुणं प्रोक्तं गुणोद्भासिकवीश्वरैः ॥ ३७ ॥
 महत्यपि च सक्षोभे सूक्ष्मा चर्चां करोति यत् ।
 तन्माधुर्यं गुणं पुमां बुध्यतां बुधमत्तमैः ॥ ३७ ॥
 शोभायां दक्षता शौर्यं स्पर्धां नीचैर्गुणाधिकैः ।
 उद्योगाच्चलनाभावस्थिरत्वविघ्नकोटिभिः ॥ ३९ ॥
 यत्प्रभाववशात् पुंसि विकृतिर्न कदाचन ।
 तद्गाम्भीर्यं सतामिष्टजगत्त्रयमनोहरम् ॥ ४० ॥ *
 यत्प्राणानपि तद्वापि प्रियोक्त्या सज्जनानलम् ।
 सत्करोति तदौदार्यं लोकोत्तरगुणो मतम् ॥ ४१ ॥
 शृङ्गाराकृतिचेष्टा तु सहजा कोमला बुधैः ।
 ललिताख्यगुणो लोके कथ्यते गुणशालिभिः ॥ ४२ ॥
 लक्षणनायकानां हि प्रतिपाद्याधुना पुनः ।
 नायिकालक्षणतासां भेदोऽपि च निरूप्यते ॥ ४३ ॥
 सामान्यनायकप्रोक्तविनयादिगुणान्विता ।
 नारी तु नायिका प्रोक्ता सार्पि नारी चतुर्विधा ॥ ४४ ॥
 स्वकीया परकीयाप्यनूढा साधारणा स्मृता ।
 अनूढा परकीयैव इत्येकेषां मते त्रिधा ॥ ४५ ॥
 धर्मार्थकामयुक्तानां स्वकीया नायिका नृणाम् ।
 अन्यास्तु नायिका लोके मता केवलकामिनाम् ॥ ४६ ॥
 त्रिवर्णनायकेनेय देवतागुरुमाक्षिका ।
 उपात्ता नायिका स्वीया सदाचारक्षमायुता ॥ ४७ ॥
 शीलार्जवधैर्यशौर्यलज्जायुक्ता पतिव्रता ।
 त्रिवर्गसाधिका लोके स्वकीया ललनोत्तमा ॥ ४८ ॥

१. त्रिवर्ति° । २. शीलार्जवव्रतितरा शौर्य° ।

कादम्बेश्वररायश्चित्तो(?)रुपधाकरे
 हसी वीरनृसिहरायकृतसद्धर्मम्बुधे कौमुदी ।
 राज्ञी पट्टकृताभिषेकमहिता कन्दर्पकान्तोपमा
 कान्ता शीलवती सती मधुरवाक् श्यामासमा राजते ॥४९॥
 अनुरागवता केनचित् पुमा स्वीकृता तु या ।
 स्वयमप्यनुरक्ता च सानूढा नायिका मता ॥ ५० ॥
 यथा दुष्यन्तनृपतेर्नायिका सु शकुन्तला ।
 तथा लोकानुसारेण सानूढा परिकीर्तिता ॥ ५१ ॥
 परकीयाप्यनूढेव ज्ञातव्या विद्यते नयो ।
 ईषद्भेद स्वय रक्तानूढा नायकमिच्छति ॥ ५२ ॥
 परकीया मखीवाचा याति नायकसन्निधिम् ।
 इति केचिद्ब्रह्मन्त्येके न हि भेदस्तयोरिति ॥ ५३ ॥

तद्यथा—

परेण परिणीता च परकीया मता पुन ।
 अनूढा कन्यका चापि परकीया प्रकीर्तिता ॥ ५४ ॥
 परेण परिणीता तु नास्ति मुख्यरसे क्वचित् ।
 अनूढा कन्यका प्रोक्ता गौणमुख्यरसे यथा ॥ ५५ ॥
 परपरिणीता नायिका मुख्यरसे उदाहर्तुमयोग्या । अनूढा
 कन्यका तु गौणमुख्ये च रसे उदाहर्तुं योग्येत्यर्थ ।
 मनसिजनृपरूप रायबङ्ग सुधाब्धि
 तदमलगुणराश्याकर्णनाद् राजकन्या ।
 मदनकदनबाणे पीडिता कामयन्ते
 नुतरतिसमरूपा दिव्यलावण्यभाज ॥ ५६ ॥

१ काय ममा राजते । २ सनिवाचा ।

कलाप्रौढियुता शैयंराजिता दम्भपण्डिता ।
 वेश्या साधारणा प्रोक्ता नायिका विदुषा बरे ॥ ५७ ॥
 दातैव नायकस्तस्या न हि कश्चित् परो भुवि ।
 रक्तेव सदने पुसि निर्धन वजयेन्नरम् ॥ ५८ ॥
 कादम्बनाथनृप चारुमहासमृद्ध-

वेश्याजना रतिसमानमनोज्ञरूपा ।
 कामैन्द्रजालिककृताद्भुतमोहविद्या-
 कल्या विभान्ति कुमुमास्त्र शरौघदेश्या ॥ ५९ ॥
 स्वकीया नायिका मुग्धा मध्या लोके तथा मता ।
 प्रगल्भेति त्रिधा सिद्धस्तासा लक्षणमुच्यते ॥ ६० ॥
 नवीनयौवना नारी नवमन्मथविक्रिया ।
 वक्रा सुरतलीलाया मुग्धा किञ्चिद् रुषा युता ॥ ६१ ॥
 आस्य नापि ददाति चुम्बनविधौ स्वाङ्ग निजालिङ्गने
 नो धत्ते नवमन्मथग्रहयुता लज्जाभरात् कुप्यति ।
 क्षेत्रारम्भसमानयौवनयुता कन्या नवोढा सती

रायक्षमापतिनायकस्य जनयत्युल्लासन चेतसि ॥ ६२ ॥
 उत्पन्नयौवनोद्भूतकामा मध्या च नायिका ।
 रतिक्रियापरवशा न जानाति किमप्यसौ ॥ ६३ ॥
 चुम्बन्त परिरम्भण दृढतर कुर्वन्तमङ्गोद्भव
 श्रीराय निजनायक परमसतोष नयन्ती सती ।
 शृङ्गाराम्बुधिकौमुदी रतिमुखाम्भोधौ निमग्ना पर
 नो जानाति सुखातिरेकवशागा केलि^३ परा कामपि ॥ ६४ ॥
 अत्यन्तयौवनात्यन्तकामा नायकवक्षसि ।
 लीनेव सुरतारम्भे प्रगल्भा पारतन्त्र्यभाक् ॥ ६५ ॥

१. महासवेश्याजनारति । २ शवाष । ३ केशि ।

श्लिष्यन्त स्मररायनायकवर स्पृष्ट्वा प्रगल्भा सती
 मोहोद्रेकवशान् पर परवशा केलीविधौ राजते ।
 लक्ष्मीर्वक्षसि वा स्मरेशलिखित तज्जीव(? सज्जीव)चित्र रते
 शृङ्गाराम्बुधिजातनिश्चलतरा श्रीकल्पवल्लीव सा ॥६६॥
 धीरात्वधीरा लोके हि धीराधीरेति सा मता ।
 त्रिविधा नायिका मध्या गुणशालिकवीश्वरं ॥ ६७ ॥
 उपहासयुता या च वक्रवाचा स्वनायकम् ।
 खेदयेत्सापराध सा मध्या धीरा प्ररूप्यते ॥ ६८ ॥
 श्रीराय ते नभसि वक्षसि कौमुदीय
 भाले वरे मकरिका वरवज्रमस्ति ।
 तत्पुण्यमत्र महदस्ति तथा फल च
 तत्रैव तिष्ठ न तु मा स्पृश याहि याहि ॥ ६९ ॥
 सापराध निजेश या वचसा कर्कशेन हि ।
 रुदती भेदयेत् सा त्वधीरा मध्या मता यथा ॥ ७० ॥
 श्रीराय निजगेहमागतमिम दृष्ट्वा मनीत्यब्रवी-
 न्नाथात्रागमन नवीनमिदमाश्चर्यं च पुण्य मम ।
 मौकिनक विचकिलमृगगन्धवज्र त्वया
 धन्याह मुकृती त्वमेव भुवने नेत्राश्रुवारान्विता ॥ ७१ ॥
 प्रगल्भा नायिका त्रेधा धीराधीरे पुनस्तथा ।
 धीराधीरेति कथिता नेतृनिश्चयकोविदे ॥ ७२ ॥
 कृतापराध सुरते नायक दु खयेद् रूपा ।
 या च या वादरेणास्ते सावहित्था सकोपना ॥ ७३ ॥
 तादृश प्रति भर्तार सावशा वा प्ररूप्यते ।
 प्रगल्भधीरा भुवने कामसिद्धान्तवेदिभि ॥ ७४ ॥

कोपालिङ्गतलोलकेन वचसा मर्मस्पृशा मालती-
 मालाघातनलीलया निजपतिं भीतिं नयन्ती सती ।
 श्रीरायं निजकामिनी तममल हारं गृहे नागसे (? गृहेऽनागत)
 कोपं भावजपूज्यराज्यसदन(?) चित्तेऽकरोत्कोविदा ॥ ७५ ॥
 श्रीराये गृहमागते हरिलसस्पीठ प्रदाय स्वयं
 ताम्बूल हरिचन्दन विचकिलं कर्परसारोच्चयम् ।
 सा कान्ता चतुरङ्गचारुकलया केलीर्विधिं कुर्वती
 नानालीजनसंनिधौ गतरति कोप कृतार्थं व्यधात् ॥ ७६ ॥
 निजेश तर्जनं कृत्वा सताडयति यां वधूः ।
 अधीरा सा प्रगल्भा च नायिका परिकीर्तिता ॥ ७७ ॥
 कौपान्नायिकया निजेगनृपति श्रीरायबङ्गो गृही
 मालत्या कृतमालया श्रुतिगतैः श्रीकर्णपूरैरपि ।
 वामेनाङ्घ्रितलेन रोधनयुजा सताडयमानो हसन्
 शान्तस्तोषपरं कृती सुकृतिनामग्रेसरो जायते ॥ ७८ ॥
 वक्रवाच सोपहासा या ब्रूते रमणी क्रुधा ।
 धीराधीरा प्रगल्भा सा नायिका कथिता बुधे ॥ ७९ ॥
 श्रीराय भो नगसि पश्यसि दैन्यवाच
 ब्रूषे मनोजतरवस्तुततीमुदासी (?) ।
 सत्यं तथैव भुवने न च कोऽपि दोषो
 दृष्टस्तथापि यमपाटिजनस्य कोप (?) ॥ ८० ॥
 त्रिभेदसयुता मध्या प्रत्येक द्विविधा पुन ।
 ज्येष्ठा चेति कनिष्ठा च षड्विधाभूत् सता मते ॥ ८१ ॥
 एव प्रगल्भा कथिता षड्विधा कविपुङ्गवै ।
 ज्येष्ठाकनिष्ठयोरत्र दृष्टान्तं प्रतिपाद्यते ॥ ८२ ॥

१. मम पाटि ।

कासार जललीलया परिगते दृष्टो रमण्या नृपः
 श्रीरायो जलसेवनं परिलसद्वन्त्रेण कृत्वा सतीम् ।
 भञ्जन्ती मरसीजले भयवशात्कृत्वा परा कामिनी
 चुम्बित्वाघरपानं सज्जलधौ तन्तन्यते मञ्जनम् ॥ ८३ ॥
 चुम्ब्यमाना नारी ज्येष्ठा । इतरा कनिष्ठा ।
 नायिकालक्षणं तासां भेदं चोक्त्वाधुना पुनः ।
 तामामष्टाववस्थास्ताः प्ररूप्यन्ते भृशं मया ॥ ८४ ॥
 स्वाधीनपतिका नारी काचिद्वासकसज्जिका ।
 कलहान्तरिता काचिद्विप्रलब्धा परा मता ॥ ८५ ॥
 विरहोत्कण्ठिता काचिन् काचित् प्रीषितभर्तुका ।
 खण्डिता रमणी काचित् काचिदन्त्याभिमारिका ॥ ८६ ॥
 यस्यां सामीप्यमाश्रित्य यदधीनं पतिं सदा ।
 स्वाधीनपतिका नारी सा प्रोक्ता रसकोविदैः ॥ ८७ ॥
 काञ्चीनारी नृपतितिलको रायबङ्गं सदालं
 स्वारुह्याङ्कं पिबति मधुरं चाघरं प्रेक्षतेऽङ्गम् ।
 तत्सलापं निशमयति वै सौरभं जिघ्रतीदं
 स्पृष्ट्वा स्पृष्ट्वा वरकुचयुगं मोदते कामतन्त्रं ॥ ८८ ॥
 प्रियस्यागमनं श्रुत्वा मुदा भूषणभूषिता ।
 या नारी सा स्तुता लोके सता वासकसज्जिका ॥ ८९ ॥
 श्रीरायागमनोत्सुका रतिसमा नारी मनोहारिणी
 मालकाररसोरुवृत्तिगुणसद्गीतिप्रभावान्विता ।
 नानावर्णनया कवीन्द्रकृतया युक्ता सशय्या सदा
 सार्थां सुक्तिविलासिनीं गतमलां चारुं प्रबन्धायते ॥ ९० ॥
 आगतं नायकं कोपात्तिरस्कृत्य तदर्थिनी ।
 या दुःखपीडिता सात्र कलहान्तरिता यथा ॥ ९१ ॥
 १ सङ्घर्षः । २ सशय्याः सदा ।

भो भो निष्ठुरभाषिणि प्रियतमे श्रीरायबङ्ग-पति-
 निर्धतो रतिनाथव्याहृतकरोऽप्यज्ञानदोषात्त्वया ।
 दुःखं त्वं विदधासि चेत् पुनरसौ नायाति पुण्याम्बुधि,
 शेषस्त्रीसरसीजचारुनिकरे श्रीराजहसायते ॥ ९२ ॥
 नागते नायके मेहं सकेतविषयं यदा ।
 तदावमानिता नारी विप्रलब्धा मता यथा ॥ ९३ ॥
 सरसमधुरवाणीभाषिता नायकेन
 तदमलवचनेऽहं प्रत्ययं साधु कुर्वे । *
 उरुतरसमयालीप्रापिता तेन दूति
 नहि नहि मम नाथ प्रत्ययो नापि कुत्र ॥ ९४ ॥
 असत्यरहिते नाथे विलम्बनयुते सति ।
 उत्कण्ठा कुरुते या सा विरहोत्कण्ठिता मता ॥ ९५ ॥
 श्रीराये निजनायके रतिपतौ कालं चिरं नागते
 नारी चन्द्रमसं न पश्यति मनोजातेष्टचापेहया ।
 नारीवृन्दवचं शृणोति न कलकण्ठानां स्वराणां धिया
 द्रष्टुं नेच्छति कौमुदी विचकिला (? विचकिता) सारोर्खाण-
 भ्रमात् ॥ ९६ ॥
 देशान्तरं गते नाथे या नारी मानसी व्यथाम् ।
 करोति सा मता लोके बुधैः प्रोषितभर्तुका ॥ ९७ ॥
 राये दिग्विजयाय सैन्यकलिते याते स्वकीया सती
 स्नानं मुञ्चति भूषणं च मलिनं गृह्णाति चीनाम्बरम् ।
 माला चन्दनलेपनं परिलसत्कस्तूरिकाचित्रकं
 त्यक्त्वा गायति वीणया निजपते सौभाग्यमाला पराम् ॥ ९८ ॥
 ज्ञातमन्मथचिह्ने या नारीर्ष्यां विदधाति सा ।
 खण्डिता रमणी प्रोक्ता नायके रसिकोत्तमे ॥ ९९ ॥

मनसिज तव कार्यं मन्मथो वेत्ति सर्व-
 महमपि तव काये गोपिते वेद्मि किञ्चित् ।
 अनिकटनिवासी वामपादोऽर्पितोऽस्या
 विलसदरुणवर्णो दृश्यते राय साक्षात् ॥ १०० ॥
 नाथ सरति या नारी दूती वा सारयत्यसौ ।
 प्रोक्ताभिसारिका लोके नायिकाभेदवेदिभि ॥ १०१ ॥
 बञ्चित्वात्मीयलोक या पति गच्छति सागसम् ।
 सा रायबङ्गभूमीशशासनाद्भूतिमृच्छति ॥ १०२ ॥
 रसप्रकरणं प्रोक्तश्चतुर्धा विप्रलम्भक ।
 पूर्वानुरागो मानश्च प्रवास करुणात्मक ॥ १०३ ॥
 वियुक्तनायकस्यासौ वियुक्ताया स्त्रियोऽपि च ।
 शृङ्गारो विप्रलम्भाख्यो वक्तव्यो वदता वरै ॥ १०४ ॥
 नवीनालोकनाज्ञातरागयोरवितृप्तयो ।
 पूर्वानुरागो दम्पत्योरवस्था परिकीर्त्यते ॥ १०५ ॥
 अन्यस्त्रीसगमादीर्ष्या विकारो मान उच्यते ।
 परदेश गते नाथे प्रवासो विरहात्मक ॥ १०६ ॥
 अनुरक्तस्य नाथस्य नायिकायाश्च तादृश ।
 एकस्य मरणे जात शृङ्गार करुणात्मक ॥ १०७ ॥
 खण्डिताया नायिकाया शृङ्गारो मान उच्यते ।
 प्रोषितप्रियनारोपु प्रवास परिकीर्तित ॥ १०८ ॥
 कलहान्तरिता या वा विप्रलब्धा च या सती ।
 विरहोत्कण्ठिता या च तासु पूर्वानुरागक ॥ १०९ ॥
 परलोक गते नाथे कामिन्या वा प्ररूप्यताम् ।
 अवशिष्टजने सद्भि शृङ्गार करुणात्मक ॥ ११० ॥

१ अनिकटनिवासी वामपादापितोऽस्या ।

आसा स्त्रीणा सखी दासी लिङ्गिनी प्रतिवेशिनी ।
 धात्रेयी शिल्पिका कारुर्दूत्य. प्रोक्ता स्वय तथा ॥ १११ ॥
 भो भो राय मनोजपातकमहो क्रूरेण सपीडयते
 नारी मुञ्चति वाग्विलाससरणी घत्ते तनुत्व तनो ।
 आहारोऽपि न रोचते भ्रमवशा त्वद्भावचित्र दृशा
 दृष्ट्वाऽर्जलङ्गति चुम्बति त्वरितमागत्येह ता रक्षतात् ॥ ११२ ॥
 पूर्वोक्तनायिकाना तु यौवने सत्त्वसभवा ।
 अलङ्कारा प्ररूप्यन्ते विंशति कविकुञ्जरै ॥ ११३ ॥
 भावहावौ तथा हेला शोभा कान्तिश्च दीप्तिका ।
 मधुरत्व तथा चोक्न प्रागल्भ्य च वदान्यता ॥ ११४ ॥
 धैर्यं लीला विलासश्च विच्छित्तिर्विभ्रमस्तथा ।
 किलकिञ्चित्तमप्युक्त तथा मोट्टायित तथा ॥ ११५ ॥
 अथ कुट्टमित चोक्त बिम्बोको ललित तत ।
 विहृत परिकीर्त्यन्ते लक्षणानि पृथक् पृथक् ॥ ११६ ॥
 एषामाद्यास्त्रयो देहसभवा. कथितास्तत ।
 सप्तालङ्कृतयो गीतास्तत स्वाभाविका दश ॥ ११७ ॥
 चित्तवृत्तिविशेषोऽय कन्दर्पविकृतिच्युत ।
 सत्त्व तस्याद्यविकृतिर्भावो मन्मथयोगिनी ॥ ११८ ॥
 भाविहावाद्यलङ्कारमाधनीभूत उच्यते ।
 भावोऽय सर्वशृङ्गाररसहेनुञ्च कोविदै ॥ ११९ ॥
 जात्यश्वारूढराय पुरस्मरणगत राजकन्या विलोक्य
 भ्रूविक्षेपाक्षिलौल्य कुसुमशरशराघातमपीडयमाना ।
 मन्द मन्द स्वचेतो विशदपि नवपुष्पायुधाश्चारुरूपा
 रम्यन्ते मनोज्ञप्रकटितनिजलावण्यभाजो गृहाग्रे ॥ १२० ॥

१ त्वरितागत्य प्राण रक्षतात् ।

चित्तशृङ्गारभूतोऽयं भ्रूलोचनविकारकृत् ।
 भाव एव बुधैलंकि हावालङ्कार उच्यते ॥ १२१ ॥
 आस्येन्दुनिर्गतमनोहरचन्द्रिकाभै
 पुष्पेषुबाणसदृशंस्तरलं कटाक्षै ।
 शृङ्गारभावगमकैर्नृपरायबङ्ग
 नारी भवन्तमवलोक्य सुखाब्धिगाभूत् ॥ १२२ ॥
 शृङ्गारगमको हावो यः सुस्पष्टः प्रवर्तते ।
 स एव हेला विबुधे कथ्यते गुणराजिते ॥ १२३ ॥
 चकोरीसदृशीदृष्टिकटाक्षायतजिह्वया ।
 रमण्या तव रायेश रूपं पेपीयतेऽमृतम् ॥ १२४ ॥
 रूपोपभोगतारुण्यै शरीरालकृति कृता ।
 या सैव शोभा गदिता महाकविमतानुगै ॥ १२५ ॥
 तरुण्या रूपसौन्दर्यं स्मरचेतोहर वरम् ।
 दृष्ट्वा चित्रीयते रायो भूषणापेक्षया विना ॥ १२६ ॥
 मनोरागेण निबिडा सैव शोभा निगद्यते ।
 कान्ति स्त्रीणां मनोज्ञाशालिनीनां बुधोत्तमै ॥ १२७ ॥
 आरामकुञ्जगतमुग्धमती बिभेति
 ध्वान्ते गते निजकटाक्षमयूखजालं ।
 पादाब्जचारुनखदीधितिभिश्च राय-
 बङ्गान्विता मुरतकेलिविद सकाशात् ॥ १२८ ॥
 विस्तारं याति या कान्ति सैव दीप्तिर्भता सताम् ।
 पुष्पायुधमहासेनादेश्यस्त्रीषु प्रवर्तते ॥ १२९ ॥
 श्रीरायबङ्गसहिता गुरुतुङ्गसौध-
 मारुह्य मारतरुणीनिभकोमलाङ्गी ।
 सिंहासने स्थितवती निजदेहदीप्त्या-
 काशं प्रकाशयति चारुतडिल्लतेव ॥ १३० ॥

अवर्णनीयवस्तुना सबन्धेऽपि प्रवर्तते ।
यद्द्रव्यत्वं तदेवात्र माधुर्यं प्रतिपादितम् ॥ १३१ ॥

नृपतितिलकराये कोपिते कोमलाङ्गी
मलिनवसनयुक्ता रम्यता नो जहाति ।

घनकृतवरण्यं कौमुदी सत्कला वा
शितितनुमदनो वा रम्यता नो जहाति ॥ १३२ ॥

मनोवचनकायेभ्यं समुत्पन्नभयस्य या ।

प्रगल्भता निवृत्तिः सा ज्ञातव्या बुधकुञ्जरं ॥१३३॥

मनोवचनकायजनितभीतिरहितं कलाशास्त्रप्रयोगचातुर्यं प्रागल्भ्य-
मिति भाव ।

यद्गानं परमामृतं श्रुतिहर श्रुत्वा मुदा कोकिलो
रौति प्राप्तसुखं शुकोऽपि वचन श्रुत्वा यदीय प्रियम् ।

ब्रूते सूक्तिमिमां यदीयनटनं दृष्ट्वा शिखी नृत्यति

स्वात्मानन्दसमन्विता जयति सा श्रीरायकान्ता सती

॥ १३४ ॥

आयासे सति कामिन्या बहावपि गुणोत्तम ।

विनयोत्कर्षं औदार्यमुच्यते कविनायकै ॥१३५॥

नवकेलिविनोदेन श्रान्ता पानीयलीलया ।

तन्वी विमुक्तनिद्रापि रायशय्या न मुञ्चति ॥१३६॥

चापल्यरहिता चित्तवृत्ति स्थिरतराथवा ।

तरुणीजनसबद्धा या सा धैर्यं निरूप्यते ॥१३७॥

रायनाथस्य रागे या यादृशी रमणी तु सा ।

कोपेऽपि तादृशी जाता महादेवीपदे स्थिता ॥१३८॥

१ लौति श्रातसुख सुखोपि ।

क्रियाविशेषैरधिकैर्मनोहरतरंरपि ।
 नायकाभिनयो लीला नायिकाविहितो यथा ॥१३९॥
 हसति वसति चास्ते लोकते याति दत्ते
 गदति नदति शेते याचते राजतेऽलम् ।
 लिखति पिबति भुङ्क्ते रोदिति^१ मोदते च
 नृपतितिलकरायो यादृशस्तादृशी सा ॥१४०॥
 दृष्टे निजेशे कामिन्या देहसजनितो भृशम् ।
 क्रियाद्यतिशय प्रोक्तो विलासो रसिकैर्यथा ॥१४१॥
 रायेश स्मरसनिभ स्मरसख क्षीराब्धिचन्द्र मुदा
 दृष्ट्वा स्विद्यति कम्पते सृतिकर धैर्यं च मुञ्चत्यहो ।
 उत्कण्ठा मनुते न नौति सरसालोक शरच्चन्द्रिका—
 मकाश रमणीमनोजनशठो कन्दर्पसिद्धान्तवित् ॥१४२॥
 तरुणीकायदेशे स्वीकृता स्वल्पाप्यलक्रिया ।
 करोति जनतानन्द या सा विच्छित्तिरुच्यते ॥१४३॥
 किसलययुतकर्णा मल्लिकाकुङ्मलौघं
 कृतरुचिकरहारा मालतीसृग्विभूषा ।
 मलिनवसनयुक्ता माघवी कन्दुकेन
 विहरति रमणी या साकरोद्रायसौख्यम् ॥१४४॥
 आयात नायक श्रुत्वा संभ्रमेण मुदा मती ।
 अस्थाने भूषण धत्ते यत्तद्विभ्रम उच्यते ॥१४५॥
 आगच्छन्त निजेश रतिपतिसदृश रायबङ्ग निशम्य
 प्रोद्भिन्नानन्दमूर्ति परवशगमनादञ्जनैर्लप्यकण्ठा ।
 पीनोत्तुङ्गस्तनाग्रे मृगमदतिलकालकृता भालभागे
 हारालकारयुक्ता रतिसमरमणी चास्ता^३मूर्तिरास्ते ॥१४६॥

१ रोदते, २ मस्तेन नोति, ३ नूर्तिचित्ते ।

कृताश्रूणां शङ्कादीनां सांकर्यं रमणीजने ।
 किलकिञ्चित्तमित्युक्तं शृङ्गाररसकोविदे ॥१४७॥
 कादम्बनाथमदनेन सुधाधरेऽल
 सपीडिते मधुरचुम्बनपानपूर्वम् ।
 तन्वी तनोति मुदमश्रु च तर्जनं च
 सीत्कारताडनविनोदपदप्रहारात् ॥१४८॥
 नाथस्य चित्रे वस्त्रे च प्रतिमाभरणादिषु ।
 नाथभावेन या बुद्धिः सा मोट्टायितमुच्यते ॥१४९॥ *
 स्मृत्वा निजेश स्वाङ्गस्य भङ्गो जृम्भणपूर्वकः ।
 पृष्ठादिनमनादिर्वा मोट्टायितमुदगोरितम् ॥१५०॥
 रायरूपपटी दृष्ट्वा तन्वी मोहेन चुम्बति ।
 आलिङ्गति च रायेन्द्र इति मत्वा प्रमोदिनी ॥१५१॥
 आलीजनेन नृपकुञ्जररायबद्धे
 सर्वाणिके मनसि तत्स्मरणं विधाय ।
 गात्रं विवर्तयति बाहुयुगं च तन्वी
 चक्रं करोति मदनग्रहपीडिता सा ॥१५२॥
 आलिङ्गने चुम्बनादौ कृते वा जीवितेशिना ।
 अन्तरङ्गे मुखं बाह्ये रोषं कुट्टमितं यथा ॥१५३॥
 आलिङ्ग्य चुम्बति नृपे सति रायबद्धे
 नारी मनोजसुखवार्धिगतापि चित्ते ।
 हस्तेन कम्पनयुतेन निवारयन्ती
 रोषं करोति पुलकालिविराजमाना ॥१५४॥
 गर्वगौरवमालम्ब्य तरुण्यानादरं कृतं ।
 जीवितेभ्यो स बिम्बोकं कथ्यते रसिकैर्जनैः ॥१५५॥

आगत्य रायनृपतौ निजपादयुग्मे
 नत्वापराधमखिल रमणि क्षमस्व ।
 इत्युक्तिमात्तविनया वदति प्रवीणा
 मर्मज्ञया वनितया न कृत कटाक्ष ॥१५६॥
 शरीरावयवव्यास स्निग्धकोमलतायुत ।
 तरुणीजनसंबन्धी ललित प्रतिपाद्यते ॥१५७॥
 भ्रूविक्षेप किसलयमृदु वाग्विलास सुमार्भं
 नेत्रालोक कुवलयनिभ पादपङ्केजयानम् ।
 चन्द्रौपम्य मधुरहसनं कौमुदीसाम्ययुक्तं
 कृत्वा कान्ता जनयति मुदं रायभूमीश्वरस्य ॥१५८॥
 वक्तु योग्यमपि स्वान्तस्स्थित नारी निजेशिना ।
 न ब्रूते लज्जया यत्तद्विहृत परिभाषितम् ॥१५९॥
 उद्याने प्रीतियुक्ता विमलसलिलसत्क्रीडनेच्छापि कान्ता
 प्रासादारोहरक्ता मधुरतरलसत्कन्दुकक्रीडनेच्छा ।
 दोलालीलामनीषा सुकविकृतमहाकाव्यगोष्ठीप्रसक्ता
 न ब्रूते व्रीडया या मुदमनयदिमा तन्मनोज्ञो निजेश ॥१६०॥
 विनयादिगुणा प्रोक्ता नेतृसाधारणा हरा ।
 गुणाष्टकं च दृष्टान्तास्तेषामूह्या विवेकिभि ॥१६१॥
 यथोचित नायकोक्तभावहावादयो गुणाः ।
 तेषामुदाहृतिर्ज्ञेया नायकेऽपि विशारदे ॥१६२॥
 भो भो वीरनुसिहराय नृपते लोकत्रये सन्ति ये
 नेतारो बहवश्च तेऽपि सुलभाश्चेतोहरा नो सताम् ।
 नानावाग्मिकवीश्वरस्तुतिपदानेकोरुकीर्त्तिप्रथ
 धीरोदात्ततया प्रसिद्धपुरुषो लोके भवानेव वै ॥१६३॥
 इति नायकभेदनिश्चयो नाम चतुर्थं परिच्छेद ।

१. गाणाष्टक, २. श्चेतोहरी ।

दशगुणनिश्चयो नाम

पञ्चमः परिच्छेदः

गुणरीतिवृत्तिशय्यापाकाना लक्षणं मया ।
तल्लक्षणार्थिना नृणा बोधाय प्रतिपाद्यते ॥ १ ॥
निर्गुणा रमणी लोके यथा सद्भिर्न पूज्यते । *
निर्गुण काव्यबन्धोऽपि तथा नाच्यं कवीश्वरै ॥ २ ॥
अतो गुणा प्रकीर्त्यन्ते पूर्वशास्त्रानुसारत ।
कामिराय नराधीश श्रूयता भवताघुना ॥ ३ ॥
सुकुमारत्वमौदार्यं श्लेषः कान्तिः प्रसन्नता ।
समाधिरोजो माधुर्यमर्थव्यक्तिस्तु साम्यकम् ॥ ४ ॥
एते दशगुणा प्रोक्ता दश प्राणाश्च भाषिता ।
यथासख्य मया तेषा लक्षण प्रतिपाद्यते ॥ ५ ॥
श्रुतिचेतोद्वयानन्दकारिणा कोमलात्मनाम् ।
वर्णाना रचनान्यास सौकुमार्यं निरूप्यते ॥ ६ ॥
श्रीरायबङ्गक्षितिनायकस्य कीर्तिविशाला वरचन्द्रिकैव ।
न चेत् त्रिलोकीजनचित्तजातं सतापजालं क्व निराकरोति ॥ ७ ॥
अर्थचारुत्वगमक पदान्तरविराजितम् ।
पदाना यदुपादानं तदौदार्यं मतं यथा ॥ ८ ॥
शब्दानामभिधेयानां गुणोत्कर्षा यदाथवा ।
तदौदार्यं मतं लोके तदुदाहरणं यथा ॥ ९ ॥
कादम्बनाथस्य मदान्धशूरक्षोणीधरोत्तुङ्गमहागजेन्द्र ।
दिग्दन्तिनैरावतनामकेन स्पर्धा विधत्ते जगदद्भुतोऽसौ ॥ १० ॥
१ °जाता, २ गुणोत्कर्षाय योऽथवा, ३ दिगन्तिनैरावत° ।

परस्पर प्रयुक्तानि स्यूतानीव पदानि वै ।

निबिडानि प्रवर्तन्ते यत्र स श्लेष उच्यते ॥ ११ ॥

यस्योत्तुङ्गविशालकीर्तिविसर दृष्ट्वा जगन्मोदते
क्षीराब्धिर्दिगिभो महाघवलिमा व्योमापगाबन्धुरा ।

नानाकारविचित्रशारदमहामेधावलीप्रोल्लस-

त्कैलासाचलभूतिसारमिति ता मत्वा जगज्जृम्भितम् ॥१२॥

अल्पप्राणाक्षराण्येव निबिडानि पदानि वै ।

यत्र स श्लेष इति वा केचिल्लक्षणमूचिरे ॥१३॥

तदुदाहरणमिदम्—

उल्लसन्ती त्वदीयेय कीर्तिश्रीर्मूर्तिराजिनी ।

जगद्वृत्तिकवीन्द्राणा सूक्तिजाले प्रकाशते ॥१४॥

प्रयुक्तो लौकिकार्थोऽपि यथा भवति सुन्दर ।

सा कान्तिरुदिता सद्भिः कलागमविशारदै ॥१५॥

अथवा पदबन्धस्योज्ज्वलत्व कान्तिरुच्यते ।

उदाहरणमेतस्या गीयते शृणु भूपते ॥१६

उपवनजलकेलीमक्नकान्ताजनाना

करकृतजलसेक मौधधारानिषेक ।

विगलितकचबन्धान्मालतीमालिकाया

विगलनमर्ततोष रायबङ्गे व्यदन्त ॥१७॥

प्रयुक्तम्य पदस्यार्थो यत शीघ्र प्रतीयते ।

पदेन वा प्रसन्नोऽर्थो यत्र सा वा प्रमन्नता ॥१८॥

भो रायबङ्ग कीर्तिस्ते शरदभ्रविलासिनी ।

व्योमगङ्गाप्रवाहाभा बम्भ्रमीति जगत्त्रये ॥१९॥

१ * भूरिसारमिति का मत्वा ।

अन्यवस्तुगुणारोपोऽन्यत्र योज्यं प्रकीर्तित ।
 स समाधिरिति ज्ञेयः कवितागुणकोविदे' ॥२०॥
 आरोपादन्यधर्मस्य प्रकृतार्थस्य गौरवम् ।
 समाधिरुच्यते सद्भिरिति वा लक्षण मतम् ॥२१॥
 श्रीरायस्य यशोऽमित कुसुमित त्यागाम्भसा तेजसा-
 नल्प तत्फलित विवेकगुणतो ध्वस्तश्च कल्पद्रुम ।
 खङ्गोऽय नैरकालराहुरमलस्तद्विक्रमस्तुङ्गत
 सूक्ति सारमुधा प्रतापतपनो लोकत्रये द्योतते ॥२२॥
 पद्ये समासबाहुल्य गद्ये वा हृद्यमुच्यते ।
 ओजो गुण कलाशास्त्रविशारदकवीश्वरै ॥२३॥
 रङ्गत्तुङ्गतरङ्गसगविलसद्गम्भीर^१ शङ्खध्वनद-
 म्भोराशिसमानभीकरमहासेनासमूहाद्भुत ।
 बन्दिब्रातविनूयमानगुणसन्दोहप्रभावोज्ज्वल
 सग्रामाङ्गणराजमानतुरगो जेजीयते राजराट् ॥२४॥
 सरसो यत्र शब्दश्च सरसोऽर्थोऽपि जायते ।
 तन्माधुर्यमिति प्रोक्तं कर्णानन्दविधायकम् ॥२५॥
 सरसवचनलोला चारुलीला कटाक्षा
 मधुरहसनचञ्चद्वक्त्रनीरेजशोभा ।
 मदगजगतिराजपादपङ्केजयुग्मा
 रतिसमवरकान्ता रायतोष तनोति ॥ २६ ॥
 अर्थानियत्वमित्युक्ते सुखगम्यत्वमुच्यते ।
 कष्टकल्पनया शून्यमर्थव्यक्तिस्तदेव हि ॥२७॥
 श्रीरायकीर्तिजालेन व्याप्त जगदिद सदा ।
 शरच्चन्द्रिकया व्याप्तमिवाभाति मनोहरम् ॥२८॥

१ 'धर्मप्रकृतार्थस्य, २ वर', ३ शुभद्दिदाम्भो' ।

मृदुस्फुटोभयाकारवर्णविन्यासशालिनः ।
 बन्धस्य साम्य समता कथ्यते कविकुञ्जरैः ॥२९॥
 श्रीरायबङ्गकान्ताया वदन चन्दिरायते ।
 हासो ज्योत्स्नायते नेत्रयुग्म नीलोत्पलायते ॥३०॥
 एतैर्गुणैर्भामुरकाव्यबन्धं महाकवीना मृदु वाग्बिलासम् ।
 श्रुत्वा गुणौघ परिभाष्य चित्ते श्रीरायबङ्गेन्द्र मुद प्रयाहि ॥३१॥

इति दशगुणनिश्चयो नाम पञ्चम परिच्छेदः ।



रीतिनिश्चयो नाम

षष्ठः परिच्छेदः

रीतिशून्या यथा कस्या न मान्या धरणीतले ।
तथा काव्य रीतिशून्य न मान्य रसिकर्जनैः ॥१॥
रीतीनां लक्षण तस्माद् वर्ण्यते भेदसगतम् ।
शृणु रायन्नराधीश काव्यसारविशारद ॥२॥
माधुर्यादिगुणोपेतपदाना घटनात्मिका ।
रीतिरित्युच्यते सा च चतुर्भेदा सता मता ॥३॥
वेदभी-गौडिका-लाटी-पाञ्चालीति चतुर्विधा ।
इय रीतिश्च काव्यस्य स्वरूपमिति बुध्यताम् ॥४॥
शब्दाश्रितप्रसादादिगुणवैशिष्ट्यसभवात् ।
रीते काव्यस्वरूपत्व निश्चित कविपुङ्गवैः ॥५॥
प्रसादादिगुण पेता समासरहिताथवा ।
समस्तद्वित्रपदका स्वल्पघोषाक्षरावली ॥६॥
वर्गद्वितीयबहुला वेदभी रीतिरिष्यते ।
उदाहरणमेतस्या कथ्यते शृणु धीघन ॥७॥
छत्र सित दण्डयुत धृत ते सनीलरत्न कृपराय भाति ।
सचञ्चरीक खरदण्डमब्ज सित यथा राज्यपदस्य चिह्नम् ॥८॥
ओज कान्तिगुणोपेता महाप्राणाक्षरान्विता ।
अत्यद्भुत (?अत्युद्भूट)समासा च गौडी रीतिरितीष्यते ॥९॥
कल्पान्तानिलवेगधूर्णितचलत्तुङ्गोरुभृङ्गावली-
राज-द्वीकरशीकरान्वितमहाडिण्डीरफिण्डाकरः ।

श्रीमद्भूरिमहासमुद्रसमसेनानीकसंभूतधू-
 लिजालस्थगिताशुमालिकिरणो जेजीयते रायराट् ॥१०॥
 सुकुमारत्वमाधुर्यकान्त्योजोगुणसयुता ।
 पञ्चषट्पदसक्षिप्ता पाञ्चाली रीतिरुच्यते ॥११॥
 नानारत्नविराजमानमुकुटो हारावलीभूषितो
 राजद्राजकदम्बपूजितपदो गाम्भीर्यवीर्यान्वित ।
 त्यागोपात्तविशालकीर्तिविसर सिंहासनाधीश्वरो
 जीयाद् वीरनृसिंहरायनृपति संसारसारोदय ॥१२॥
 उक्तरीतित्रययुता भूरिद्वित्वाक्षराच्युता ।
 अल्पघोषाक्षरा लाटी वृत्ति कोमलतायुता ॥१३॥
 गङ्गातुङ्गतरङ्गशारदधनक्षीराब्धिचन्द्रातप
 श्रीराजद्वरकीर्तिभासुरगुणो गम्भीरचित्तस्मर ।
 नानावाग्मिकवीश्वरस्तुतगुण सर्वज्ञकल्पो महान्
 श्रीवीरो नरसिंहबङ्गनृपतिर्जीयाद्धरित्रीतले ॥१४॥
 शृङ्गार करुण शान्तो हास्यो मधुरतागुण ।
 ओजोगुणयुता शेषा रसा पञ्च निरूपिता ॥१५॥
 प्रसादगुणसयुक्ता रसा सर्वे नव स्मृता ।
 शेषा सप्तगुणा योज्या यथायोग विशारदं ॥१६॥
 रीतिनीरेजपण्डंढमहाकाव्यसरोवरे ।
 कुरु केलीविधि राजहसदेशीयरायराट् ॥१७॥
 इति रीतिनिश्चयो नाम षष्ठ परिच्छेद ।



वृत्तिनिश्चयो नाम

सप्तमः परिच्छेदः

वृत्तिशून्यो न सूत्रार्थो नृणा चेतसि भासते ।
वृत्तिरिक्त तथा काव्य रसिकाय न रोचते ॥१॥
वृत्तीना लक्षण तासा भेदोऽपि प्रणिगद्यते ।
शृणु कादम्बदुग्धाब्धिजातकौस्तुभ रायराट् ॥२॥
सरसार्थौघसदभलक्षणा वृत्तिरिष्यते ।
कैशिक्यारभटी भारती मता सात्वती बुधे ॥३॥
अत्यन्तकोमलार्थाना शृङ्गाररसयोगिनाम् ।
करुणाख्यरसे वाचा सदर्भो वायु कैशिकी ॥४॥
अत्यन्तकर्कशार्थाना रौद्रबीभत्सयोगिनाम् ।
सदभरूपारभटी वृत्तिरुक्ता कवीश्वरे ॥५॥
हास्यशान्ताद्भुतरसोपेतार्थाना पृथक् पृथक् ।
ईषन्मृदूना सदर्भो भारतीवृत्तिरुच्यते ॥६॥
ईषत्काठिनवाच्याना सदभं सात्वतीष्यते ।
भयानकेन वीरेण रसेन सह योगिनाम् ॥७॥
शृङ्गारकरुणौ लोकेऽत्यन्तकोमलता गतौ ।
अत्यन्तकाठिनौ रौद्रबीभत्सौ रसनामकौ ॥८॥
हास्य शान्तोऽद्भुतश्चेति स्वल्पकोमलता गता ।
ईषत्काठिन्यसपृक्तौ मतौ वीरभयानकौ ॥९॥
चतसृणा वृत्तीना क्रमेण निदर्शनानि निरूप्यन्ते ।

१. तस्या, २. करुणाख्यरसेदाना ।

कैशिकी यथा —

शृङ्गारसारतरुणीजनकोमलाङ्ग-
 सर्वस्वचारुवमवृन्दवसन्तकल्प ।
 नारीकटाक्षशरजालविताड्यमान
 श्रीरायनायकवर सुकृतीति भाति ॥१०॥

भारभटी यथा —

घण्टाटङ्कारभीकृद्रणपटुतरगन्धेभविभ्राजमान
 कोपाजापेन राजत्प्रलयगतमहावह्निकीलाभकेन ।
 धिक्कुर्वन् वैरिवर्गं गुरुविपिनसम शाकिनीढाकिनीभ्यो
 दत्त्वा रक्तास्थिमज्जाबहुपललबलिं भाति रायो रणाग्रे ॥११॥

भारती यथा—

कीर्तिस्तेऽप्यतिलङ्घते जगदिदं गम्भीरिमा वारिर्ध
 हस्त कल्पतरु पराक्रमगुण कण्ठीरव धीरता ।
 स्वर्णाद्रि नयजालमुग्रभरत सत्य च भीमाग्रज
 रूप मन्मथभूभुज मृदुवच पीयूषपिण्ड नृप ॥१२॥

सात्वती यथा—

सग्रामाङ्गणभूतले प्रलयकालाग्निस्फुलिङ्गाकृति-
 क्रोधाडम्बररक्तलोचनयुग श्रीरायचक्रेश्वरम् ।
 दृष्ट्वा वैरिनृपा भयज्वरवशान्मूर्च्छन्ति केचित् परे
 दानन्ति प्रतपन्ति यान्ति शरण वल्मीकवीराधिकम्(?) ॥१३॥
 अत्यन्तकोमलार्थार्थेऽल्पप्रौढसदभलक्षणा ।
 मध्यमा कैशिकी सर्वरससाधारणा मता ॥१४॥

१ नयजालमुदधभरत ।

ईषन्मृदुसदभप्यतिप्रौढार्थगोचरा ।

मध्यमारभटी सर्वरससाधारणा स्मृता ॥१५॥

शब्दगतप्रसादमाधुर्यादिदशगुणाश्रितानामर्थविशेषनिरपेक्षाणा वेद-
भ्यादिरीतीनामर्थविशेषापेक्षविशिष्टकैशिक्यादिवृत्तिभ्यो भेदो द्रष्टव्यः ।

असयुक्तमृदुवर्णबन्धोऽतिमृदुसदभं । सयुक्तकोमलवर्णबन्ध ईष-
न्मृदुसदभं । अविकटपरुषवर्णबन्ध ईषत्प्रौढसंदभं । प्रागुक्तसदभं-
चतुष्टयस्य लक्षणचतुष्टयं ज्ञातव्यम् ।

सद्वृत्तिबालविलसद्भ्रूगणप्रभावे

सत्काव्यबन्धगगने तव कीर्तिचन्द्र ।

लोकस्य तापहरणे चतुरो मनोज्ञ

कादम्बनाथ चिरकालमय विभातु ॥१६॥

इति वृत्तिनिश्चयो नाम सप्तम परिच्छेदः ।



शय्यापाकनिश्चयो नाम

अष्टमः परिच्छेद

अशय्या कामकेली वा कृतिर्लोके न शोभते ।

यतस्ततो बुधैर्वाच्य शय्यालक्षणमुत्तमम् ॥ १ ॥

पदानामानुगुण्य वान्योन्यमित्रत्वमुच्यते ।

यत् सा शय्या कलाशास्त्रनिपुणैर्विदुषा बरे ॥ २ ॥

कादम्बेश्वररायबङ्गनृपते सत्कीर्तिजाल मह-

ल्लोकाभोगविराजित कविजनै क्षीराब्धिरित्बुच्यते ।

कल्पानोकहपुष्पमम्बरनदीनीहारजाल हर-

स्तत् सर्वं सदृश न तेन तदिदं तस्योपमा गच्छतु ॥ ३ ॥

अपूर्वं भोज्यमप्यत्र नि पाक नैव रोचते ।

अपाककाव्यबन्धोऽपि तत् पाको निरूप्यते ॥ ४ ॥

चतुर्विधानामर्थानां गाम्भीर्यं पाक उच्यते ।

द्राक्षापाको नालिकेरपाकोऽपि द्विविधो मत ॥ ५ ॥

आलम्ब्य शब्दमर्थस्य द्राक् प्रतीतिर्यतोऽजनि ।

स द्राक्षापाक इत्युक्तो बहिरन्त स्फुरद्रस ॥ ६ ॥

आलम्ब्य शब्दमर्थस्य द्राक्प्रतीतिर्यतो न हि ।

स नालिकेरपाक स्यादन्तर्गूढरसोदय ॥ ७ ॥

द्राक्षापाको यथा—

रायनाथमनोज्ञाङ्गे लावण्यममृतोपमम् ।

आलकनेन तरुणी पीत्वा पोत्वा प्रमोदते ॥ ८ ॥

१. नालिकेरपाकश्च ।

नालिकेरपाको यथा—

चन्द्र दृष्ट्वा सरोज विकसति मधुरं नीलनीरेजयुग्मं
 सकोच याति कोकद्वयममितसुखं याति राहुश्च याति ।
 भृङ्गीसकाशमन्दै तिमिरमभिमुखं याति बालातपश्च
 श्रीराय कामतन्त्री मनसिजनूपतन्त्रस्य जानाति तत्त्वम् ॥९॥
 शय्याविरेजसयुक्ते पाकपानीयभासुरे ।
 काव्यपद्माकरे रायकीर्तिहसो विराजताम् ॥ १० ॥

इति शय्यापाकनिश्चयो नाम षष्ठम परिच्छेदः ।

अलंकारनिर्णयो नाम

नवमः परिच्छेदः

स्त्रीरूप निरलंकार न विभाति यथा भुवि ।
 तथा काव्य ततो ब्रूहि नानालंकारसग्रहम् ॥ १ ॥
 काव्याङ्गभूतौ शब्दार्थौ श्रिताश्चित्रोपमादय ।
 अलंकारा प्रकीर्त्यन्ते काव्यचारुत्वहेतवः ॥ २ ॥
 काव्यशोभाकर काव्यधर्मोऽलंकार उच्यते ।
 काव्यप्रयुक्तशब्दार्थान्समालम्ब्य प्रवृत्तिमान् ॥ ३ ॥
 शब्दार्थयोरलंकारौ द्विविधौ परिकीर्तितौ ।
 यमक चित्रवक्रोक्तिरनुप्रासश्चतुर्विध ॥ ४ ॥
 शब्दालंकृतय प्रोक्ता अर्थालंकृतय पुन ।
 स्वभावोक्त्यादिभेदेन बहुधा प्रतिपादिता ॥ ५ ॥
 गम्भीरामलसूक्तिरत्नविलसत्सत्कीर्तिफेनाम्बुधे
 वैरिध्वान्तविघातदक्षसकलोपायाम्बुजश्रीकर ।
 भानो भासुररूपचारुललनारत्युत्सवानन्दकृत्-
 कन्दर्पाङ्गुतभूषणानि शृणु भो श्रीरायबङ्गप्रभो ॥ ६ ॥
 विहाय शब्दालंकारमर्थालंकार उच्यते ।
 अर्थमाश्रित्य काव्यस्य चारुत्व जनयत्यसौ ॥ ७ ॥
 स्वभावोक्त्युपमे रूपकावृत्ती हेतुदीपके ।
 उत्प्रेक्षार्थान्तरन्यासौ व्यतिरेकविभावने ॥ ८ ॥
 आक्षेपातिशयो सूक्ष्मसमासौ च लवक्रमौ ।
 उदात्तापह्नुती प्रयोविरोधौ रसवत्तथा ॥ ९ ॥

ऊर्जस्व्यप्रस्तुतस्सोत्रे विशेषस्तुल्ययोगिता ।
 पर्यायोक्त सहोक्तिश्च परिवृत्ति समाहितम् ॥ १० ॥
 श्लिष्टं निदर्शनं व्याजस्तुतिराशीस्समुच्चयः ।
 वक्रोक्तिरनुमान च विषमावसरौ तथा ॥ ११ ॥
 प्रतिवस्तूपमा सार भ्रान्तिमत्सशयौ तथा ।
 एकावली परिकर. परिसंख्या ततः परम् ॥ १२ ॥
 प्रश्नोत्तरं संकरश्च समुद्देश. कृत क्रमात् ।
 एतेषा लक्षण लक्ष्य प्रोच्यते च यथाक्रमम् ॥ १३ ॥
 येन रूपेण यद्वस्तु वर्तते तस्य वस्तुन ।
 तेन रूपेण कथन स्वभावोक्ति प्रकीर्त्यते ॥ १४ ॥
 सक्रिय निष्क्रिय वस्तु यथा जगति वर्तते ।
 तथा तद्रूपकथन जातिरित्युच्यतेऽथवा ॥ १५ ॥

सक्रियवस्तुजात्युदाहरणं यथा—

कारुष्योपेतचित्त सकलजनतते पालको धैर्यशाली
 राजद्राजाधिराजोत्करमणिमुकुटप्रोल्लसत्पादपद्म ।
 राज्यश्रीभारधारी सकलगुणगणोद्भासिपञ्चाङ्गामन्त्र
 सिद्धीशो रायबद्धक्षितिपतिरधुना भाति शक्तित्रयाढ्य ॥१६॥
 हरिनीलच्छविभासुरा वनगजोदीर्णोरुमुक्तावली-
 कृतदिव्याभरणा वरालिनिभधम्मिल्लास्ता मृगीलोचना ।
 वरक्षिण्टीकृतमालिका निजकराश्लिष्टात्मजातोत्करा
 वररायावनिप किरातवनिता पश्यन्ति दूरादिमा. ॥ १७ ॥

हीनेषु त्रस्तेषु बालादिषु च विशेषतो रम्या जातिरिति द्वितीय-
निदर्शनम् ।

निष्क्रियोदाहरणं यथा—

अय श्रीरायभूमीशस्त्रिवर्गकलितो महान् ।
 शूरो धीरो महात्यागी राजनीतिविशारदः ॥ १८ ॥
 आरामे रायबङ्गस्य कोकिला श्यामविग्रहा ।
 मधुरस्वरसपूक्ता वसन्ते चित्तहारिणः ॥ १९ ॥
 कलकण्ठजातिस्वभाववर्णनम् ।
 चुम्बति स्पृशति प्राणनायिकां जिघ्रति क्षणम् ।
 पिबति प्रेक्षते गाढमालिङ्गति च रायराट् ॥ २० ॥
 क्रियास्वभाववर्णनम् ।
 रतौ रायमहीनाथे सुखमन्तातिग महत् ।
 काममिद्धान्तविज्ञान कामिनीचित्तरञ्जकम् ॥ २१ ॥
 कलाज्ञानकामसुखगुणस्वभाववर्णनम् ।
 कोटीरगजितो हारदिव्यकुण्डलभूषित ।
 सिंहासनसमारूढो रायबङ्गो विराजते ॥ २२ ॥
 किरीटहारादि विशिष्टद्रव्यम्बभाववर्णनम् । जातिक्रियागुण-
 द्रव्यस्वभावापेक्षया जात्यलंकारश्चतुर्विधः । पक्षान्तरमिदम् ।
 येनोपमीयते यत्र यत्किञ्चिद्येन केनचित् ।
 प्रकारेणोपमा सा तस्या भेदोऽय प्रतन्यते ॥ २३ ॥
 कादम्बनाथ सा कीर्तिर्धवला कौमुदीव ते ।
 प्रतापमण्डल रक्त भाति वालार्कविम्बवत् ॥ २४ ॥
 धावत्यरक्तत्वघर्माभ्यामुपमेति धर्मोपमा ।
 श्रीरायभूप कीर्तिस्ते शारदी कौमुदीव सा ।
 तेजोमण्डलमुद्याति बालभास्करबिम्बवत् ॥ २५ ॥
 अत्र धर्मनिरूपणं न कृतमिति उपमानोपमेयवस्तुमात्रकथनाद्
 वस्तुपमा ।

महाभागस्य रावस्य कामं दोग्धि महान्करः ।
 कामधेनुरिवाशेषजगदानन्ददायिनः ॥ २६ ॥
 कामधेनौ कामदोहकृत्त्वप्रसिद्धिः । विपर्यसिन हस्ते निरूप्यत इति
 विपर्यासोपमा ।

कादम्बनाथ कीर्तिस्त्रे शारदी कौमुदीव सा ।
 शारदी कौमुदी भाति त्वत्कीर्तिरिब विष्टये ॥ २७ ॥
 परस्परोत्कर्षसिनी चान्योन्योपमा ।

श्रीराय कीर्तिजाल ते तुल्यं क्षीराब्धिनैव तत् । *
 अन्येन केनचित् साम्यं न प्रयाति जगत्त्रये ॥ २८ ॥
 परवस्तुसादृश्यं व्यावृत्तेनियमोपमा ।

कादम्बेश्वर कीर्तिस्त्रे चन्द्रातपसमाभवत् ।
 अस्ति चेत् सदृश वस्तु तत्समापि विराजताम् ॥ २९ ॥
 अन्यसादृश्यसम्बन्धनादनियमोपमा ।

इन्दुमन्वेति कीर्तिस्त्रे कान्त्या चाह्लादनेन च ।
 भानुमन्वेति तेजस्त्रे महिमा रागतोऽपि च ॥ ३० ॥
 आह्लादनकान्तिमहत्त्वारुणत्वधर्मसमुच्चयात् समुच्चयोपमा ।
 श्रीराय भवत कीर्तिविशाला भवदाश्रया ।
 सुधाकराश्रया ज्योत्स्ना भिदैवेय न चेतरा ॥ ३१ ॥
 भेदान्तरनिरासेन अतिशयोपमा ।

त्वत्कीतविव धावत्य न कौमुद्या तदस्ति चेत् ।
 शारदाभ्राभ्रगङ्गादावपि श्रीराय विद्यते ॥ ३२ ॥
 साधारणधावत्यस्य अन्यथाकल्पनादुत्प्रेक्षोपमा ।
 शारदी कौमुदी सप्तबार्धिं यदि विलङ्घ्यते ।
 वर्तते यदि नित्यं सा घत्ता कीर्तेस्तवोपमाम् ॥ ३३ ॥

१ *निमित्तेनियमोपमाः ।

सप्तवाधिलङ्घननित्यवर्तनस्य असंभविन कथनादद्भुतोपमा ।

चकोरनिकरो दृष्ट्वा त्वत्कीर्तिरिति कौमुदीम् ।

उपेक्ष्य भवतः कीर्तिं याति ज्योत्स्नेति विभ्रमात् ॥ ३४ ॥

मोहोपमा ।

सकलङ्क सुधाशु किं किं साकाशं यशस्तव ।

कम्पते जनताचित्तमिति श्रीरायभूपते ॥ ३५ ॥

सशयोपमा ।

इन्दुना जीयते पुण्डरीकं त्वत्कीर्तिरेव तत् ।

सकलङ्केन्दुजयिनी पुण्डरीकं यतस्तत् ॥ ३६ ॥

निर्णयोपमा ।

धवला श्रीमती सर्वजनसंतापहारिणी ।

कादम्बराय कीर्तिस्ते राजते कौमुदी यथा ॥ ३७ ॥

श्लेषोपमा ।

साम्बरराजं विभाति (च) कौमुद्यत्यन्तर्वाधिनो भाति [?] ।

रायनृप कौमुदी वा कीर्तिस्ते सर्वदा भुवने ॥ ३८ ॥

उपमानोपमेययोः सदृशरूपशब्दवाच्यत्वात् सतानोपमा ।

क्षीराब्धिना समानापि कीर्तिस्ते शीतभानुना ।

क्षीराब्धिं पीडितो देवैः सकलङ्क सुधाकरः ॥ ३९ ॥

निन्दोपमा ।

क्षीराब्धिरमृतस्थानं चन्द्रं सतापहृत् सदा ।

क्षीराब्धिचन्द्रौ त्वत्कीर्त्या सदृशौ रायं धीधनः ॥ ४० ॥

प्रशसोपमा ।

१. In Kāvyaḍarsa's this variety of Upamā is known as Samānopamā (v) सन्दानोपमा, शरूपीया)

क्षीरवाराशिना तुल्या त्वत्कीर्तिरिति मे मन ।

आचिख्यासति दोषो वा गुणो वा भवतु प्रभो ॥४१॥

आचिख्यासोपमा ।

पुण्डरीक चन्द्रबिम्ब त्वद्यशस्त्रितय प्रभो ।

परस्परविरुद्धं भो भाति कादम्बरायराट् ॥४२॥

विरोधोपमा ।

भुवनव्यापिनी कीर्तिं भवदीया सदातनीम् ।

पुण्डरीकं न शक्नोति जेतु तादृक् क्रमोज्जितम् ॥४३॥

प्रतिषेधोपमा ।

त्वत्कीर्तिं स्वाङ्गसजाता क्षीराब्धिजनितो विधु ।

तथापि सम एवेन्दुर्नाधिको रायभूपते ॥४४॥

चटूपमा ।

न कौमुदीय कीर्तिस्ते न भानुस्तेज एव हि ।

न राहु खड्ग एवाय प्रचण्डतरविक्रम ॥४५॥

सुव्यक्तसादृश्यसंभवात्तत्त्वाख्यानोपमा ।

क्षीराब्धिशारदाभ्रादिवस्तूनामुपमा सदा ।

विलङ्घ्य भूरिकीर्तिस्ते घत्ते स्वेनैव तुल्यताम् ॥४६॥

असाधारणोपमा ।

क्षीराब्धिशरदिन्द्रादिश्वेतवस्तुप्रभावति ।

एकत्रमिलितेवेय कीर्तिस्ते राय राजते ॥४७॥

वृत्तिरिय कदापि नाभूदिति अभूतोपमा ।

अमावास्यातिथौ रात्रौ शारदी चन्द्रिका यथा ।

कलौ काले तथा भाति कीर्तिस्ते रायमन्मथ ॥४८॥

असभावितोपमा ।

शरच्चन्द्रनभोगङ्गाशारदाभ्रपयोर्णवान् ।

अन्वेति हारनीहारौ कीर्तिस्ते रायकायज ॥४९॥

बहूपमा ।

शरदिन्दोरिवोत्पन्ना जनितेव पयोम्बुधे ।

शरदभ्रादिवोद्भूता कीर्तिस्ते भाति रायराट् ॥५०॥

विक्रियोपमा ।

इन्दी ज्योत्स्नेव दुग्धाब्धौ चन्द्रो वा दुग्धवारिधि ।

धरायामिव कीर्तिस्ते भाति श्रीरायभूपते ॥५१॥

मालोपमा ।

श्रित्वा रायनृप भाति कीर्तिलोकत्रये भृशम् ।

श्रित्वा सुधाकर व्योम्नि कौमुदीव सुनिर्मले ॥५२॥

वाक्यार्थेन कश्चिद्वाक्यार्थो यद्युपमीयते सा वाक्यार्थोपमा । सा पुनर्द्विविधा एकेवशब्दा अनेकेवशब्दा इतीयमेकेवशब्दा वाक्यार्थोपमा ।

इन्दोरिव नृमिहस्य कीर्ति ज्योत्स्नामिवामलाम् ।

चकोरीव विलोक्यासौ जनता याति समदम् ॥५३॥

इयमनेकेवशब्दा वाक्यार्थोपमा ।

नृसिहराय कीर्तिस्ते जगत्येकैव राजते ।

एक एव नभोमार्गो ननु भाति सुधाकर ॥५४॥

इबादिशब्दप्रयोगाभावेऽपि साम्यप्रतीतिरस्तीति प्रतिवस्तूपमा ।

आह्लादनाय देवाना ज्योत्स्ना वसति चन्द्रे ।

नृलोकवर्तिजीवाना कीर्ति कादम्बभूपतौ ॥५५॥

एकक्रियाविधौ अधिकेन हीन सदृशीकृत्य कथन तुल्ययोगोपमा ।

रूपेणाङ्गजवत्कलायुततया शीताशुबत्तेजसा

तीक्ष्णेनार्कवदद्भुतोन्नततया देवाद्विवत् सपदा ।

देवाधीशवदुद्धतविक्रमतया पञ्चास्यवद्राजते

गाम्भीर्येण समुद्रवज्जयति स. श्रीरायबङ्गो भुवि ॥५६॥

हेतूपमा ।

उद्वेगो विदुषा यत्र नास्ति तत्रोपमा मता ।
लिङ्गस्य वचनस्यापि भेदे हीनेऽधिकेऽपि च ॥५७॥
शारदाभ्रमिवापूर्वा कीर्तिस्ते चन्द्रिका इव ।
भवानिव महामेरुस्त्व सुरेन्द्र इवासि भो ॥५८॥

चतुर्णामेक इलोकः ।

उद्वेगो यदि वर्तेत भिन्नलिङ्गादिके सति ।
तत्रोपमा न वक्तव्या कलागमविशारदे ॥५९॥
बलाकेव शरच्चन्द्रो वेशन्त इव नारिधि ।
भ्रामस्वामीव देवेन्द्र प्रदीपो भानुबिम्बवत् ॥६०॥
एतादृशी सभासद्भिर्न वक्तव्या कदाचन ।
धर्ममात्रविवक्षायामुपमा कीर्त्यते बुधे ॥६१॥
शृगालवत्पुरालोकी मुनिराजो विराजते ।
अकृतावासको लोके फणीव मुनिसत्तम ॥६२॥
यथेववाद्यव्ययानि कल्प्यादिप्रत्ययास्तथा ।
अब्जास्यादिसमासश्च निभादिसमवाचकाः ॥६३॥
उपमालकृतावेते शब्दा वाच्या कवीश्वरे ।
स्पर्धते हसतीत्यादि शब्दा वाच्याश्च कोविदेः ॥६४॥
यत्रोपचर्यतेऽभेद उपमानोपमेययो ।
तद्रूपकमलंकारस्तस्य भेदः प्रतन्यते ॥६५॥
कान्ता त्राटङ्कचक्रं विरचितकबरीबन्धकान्तारदुर्गं
लावण्याम्भस्सुदुर्गं घनकुचगिरिदुर्गं नखोदारखड्गम् ।
चक्षुर्लीलावलोकामितनुतशरजाल लसद्दृष्टिकेतु
कन्दर्पालापमन्त्रो विलसति चतुरो रायकन्दर्परौज्ये ॥६६॥

समस्तरूपकम् ।

श्रीरायो जलधि सुधाशुरमृत मेरुः सुरानोकहो
भानु सिद्धरसो मनोजनृपतिश्चिन्तामणिर्देवराट् ।
भोगीन्द्रः सुरधेनुरम्बरमिद काले कलौ सर्वदा
भूत्वा तीर्थकरोऽपि सर्वजनतानन्दाय सर्वर्ताम् ॥६७॥

व्यस्तरूपकम् ।

कामिन्या पदपङ्कजेद्धमधुपो वक्त्राब्जसर्वार्धिता-
म्बोधिस्त्व वरनाभिचारुसरसि श्रीराजहस सदा ।
अङ्कालाननिबद्धभावजगजस्तुङ्गस्तनाद्रिस्थित-
व्याधोऽपाङ्गनिरीक्षणेषुविलसल्लक्ष्योऽसि बङ्गप्रभो ॥ ६८ ॥

समस्तव्यस्तरूपकम् ।

श्रीरायस्य मुखेन्दुस्ते (? इच) स्मितज्योत्स्नाविराजित ।
कस्तूरीतिलकाङ्कद्वो भाति सूक्तिसुधारस ॥ ६९ ॥

स्मितादिषु ज्योत्स्नादित्त्व मुखे च चन्द्रत्वमारोप्य तद्योग्यस्थान-
विन्यासादेतत् सकलरूपकम् ।

स्मितज्योत्स्ना मुख धत्ते कस्तूरीतिलकाङ्कनम् ।
सूक्तिपीयूषसार ते कादम्बेश्वर रायराट् ॥ ७० ॥

मुखस्यावयवाना स्मितादीना ज्योत्स्नादिष्वारोपाद् अवयविनो
मुखस्यानारोपाद् अवयवरूपकम् ।

मुखेन्दुस्ते जनानन्द करोति भ्रूविराजित ।
विशालनेत्रो निटिल धरन् श्रीरायभूपते ॥ ७१ ॥

अत्र भ्रूनेत्रनिटिलानामवयवानामनारोप अवयविनो मुखस्य चन्द्र-
त्वारोपाद् अवयविरूपकम् ।

१, व्यादोपाग, २ मुखदत्ते ।

मुखं विशालनेत्रं ते कपोलादर्शभासुरम् ।

दृष्ट्वा रज्यति लोकोऽत्र रायकादम्बनायक ॥ ७२ ॥

अत्र मुखस्यावयविनोऽनारोपाद् एकस्यावयवस्य कपोलस्य दर्पणत्वा-
मारोप्य नेत्रस्यानारोपाद् एकावयवरूपकम् । एवं द्वयवयरूपक
श्रवणवयरूपकमित्यादि योज्यम् ।

स्मितज्योत्स्नाविलास ते चारुनेत्रचकोरकम् ।

दृष्ट्वा मुखं मुदं याति नारीवृन्दं नृसिंहं भो ॥ ७३ ॥

अत्र ज्योत्स्नाचकोराणां सगे सति युक्तरूपकमिदम् । *

नारीजनो मुखं दृष्ट्वा नेत्रेन्द्रीवरभासुरम् ।

स्मितचन्द्रिकया युक्तं मोदते तव रायराट् ॥ ७४ ॥

अत्र चन्द्रिकेन्द्रीवरयोरयोगाद् अयुक्तरूपकमिदम् ।

मुखेन्दुना कपोलाक्षिभ्रूयुगाधरशालिना ।

त्वं रूपकेतुर्नारीणां करोषि रतिसमदम् ॥ ७५ ॥

अवयविनो रूपणादवयवानां रूपणारूपणाद् विषमं रूपकम् ।

कादम्बनाथं लोकेऽत्र भवानेव विराजते ।

जगन्मोहकरापूर्वरूपभासुरमन्मथ ॥ ७६ ॥

विशेषणविशिष्टमन्मथारोपणात्सविशेषणरूपकम् ।

रायप्रतापभानुस्ते न मील्यति कैरवम् ।

अस्मत्पतिविभूत्यञ्जणञ्च सकोचयत्यहो ॥ ७७ ॥

भानुकार्यस्य अकरणदर्शनादितरकार्यस्य करणदर्शनाच्च विरुद्धरूपकम् ।

तुङ्गत्वेन महामेरुर्मन्मथो रूपसंपदा ।

विभूत्या सुरराजोऽसि रायकादम्बनायक ॥ ७८ ॥

तुङ्गत्वादिहेतुना कनकाचलादिरारोप्यत इति हेतुरूपकम् ।

अतिरक्तं बालभानुं विडम्बयति गर्वतः ।

तेजोभानुरयं रक्तो भवतो रायभूपते ॥ ७९ ॥

तेजोभानुबालभान्वोर्गौणमुख्ययोः साधर्म्यदर्शनादुपमा रूपकम् ।

अरुण पद्मिनी तेजोभानुर्बीर श्वियं तत्र ।
 आनन्दयति रक्तोऽसौ कदाचित्सर्वदाप्यवम् ॥ ८० ॥
 अनयोर्भन्वोर्वैधर्म्यदर्शनाद् व्यतिरेकरूपकम् ।
 तेजोभानुस्समो भानुर्यदि तापविधानतः ।
 ततोऽन्योऽपि ततस्तस्य न सवादी तवाधिप ॥ ८१ ॥
 भानुसाम्यप्रतिषेधादाक्षेरूपकम् ।
 कटाक्षचन्द्रिकापीय परसतापहारिणी ।
 सतापयति मा देव मत्पाप तव रात्राट् ॥ ८२ ॥
 आक्षेपस्य समाधानकरणात् समाधानरूपकम् ।
 सत्कीर्तिचन्द्रिकाहार धृत्वा दिक्कामिनीरति ।
 श्रीरायचन्द्रकन्दर्पं श्रुत्वा गामति गामति ॥ ८३ ॥
 रूपकरूपकम् ।
 नाय राय 'सुधासूतिर्नेयं कीर्तिश्च कौमुदी ।
 नेद तिलकमङ्गोऽयं नाधरो बटपल्लवसु ॥ ८४ ॥
 रायनृपत्वादिक निवर्त्य चन्द्रादित्वेन रूपणात् प्रकटीकृतगुणातिशय
 तत्त्वापह्नुतिरूपकम् ।
 त्रयस्त्रिंशत् समाख्याता उपमालकृतेभिदा ।
 विशती रूपकस्यापि भेदा प्रोक्ता मया पुनः ॥ ८५ ॥
 अन्तो नास्ति विकल्पानामुपमारूपकद्वये ।
 द्विङ्मात्र कथित शेषो विचार्या बुद्धिशालिभि ॥ ८६ ॥
 उक्तस्य पुनरुक्ति स्याद्बहुधावृत्तिरीरिता ।
 अर्थावृत्तिः पदावृत्तिरुभयीति त्रिधा मता ॥ ८७ ॥
 अर्थावृत्तिर्यथा -
 रुवन्ति कोकिला कीरा वदन्ति मधुपा वने ।
 वदन्ति राजहसाश्च रणन्ति श्रीधरेक्षितुः ॥ ८८ ॥
 १. श्रीधरेक्षितुः ।

पदावृत्तियंथा -

श्रीरायक्षितिनाथकीर्तिवनिता भाति त्वदीया भृश
सप्ताम्बोधिषु भाति सर्वगगने सर्वत्र दिग्मण्डलं ।
भाति क्षमासु च भाति भाति सकले स्वर्गेऽप्यधोविष्टे
भातीय कविराजचारुवचने भातीयमत्यद्भुता ॥८९॥

उभयावृत्तियंथा -

क्रीडयत्यङ्गनालोको भवान् नृपगृहे सदा ।
गुहामु क्रीडयत्यद्य नारीवर्गं रिपुत्रज ॥९०॥

एतदावृत्यलकारत्रय दीपकालकारस्थान एव समतम् ।

हिनोति कार्यं व्याप्नोति ज्ञाप्य वा हेतुरुच्यते ।
उत्पत्तिसाधनत्वेन ज्ञप्तिमाधननोऽपि वा ॥९१॥

कारकज्ञापकौ हेतु उत्पत्तिज्ञप्तियोग्यौ ।
यत्रोच्येते स हेत्वाख्योऽलकारोऽनेकधा मत ॥९२॥

हरिचन्दनहारेण मल्लिकामालया युत ।
प्रीतिं करोति नारीणां शृङ्गारार्णवचन्द्रमा ॥९३॥

निर्वर्त्यकारकविषयहेत्वलकार ।

आरक्तमालतीमालातिलकाभरणोज्ज्वल ।
मालिङ्ग्य नायिका नाथश्चिन्ताभावाय कल्पते ॥९४॥

अभावरूपनिर्वर्त्यविषयहेत्वलकार । पूर्वो भावविषय ।

रूपातिशयसपन्नो नुतदक्षिणनायक ।
रायबद्धो व्यथान् स्त्रीणां मन कौतूहलान्वितम् ॥९५॥

विकार्यविषयकारकहेत्वलकार ।

इक्षुचापसमाकार कामसिद्धान्तवेद्यसौ ।
रावबद्धोऽवनीनाथो नारीरूपं प्रपश्यति ॥९६॥

प्राप्यविषयकारकहेत्वलकार ।

तव पल्लववज्रेण^१ मुक्तेनार्धमुधाशुना ।

मन सुबोधमित्येव नायिका वक्ति नायकम् ॥९७॥

ज्ञापकहेत्वलकार ।

जातिक्रियागुणद्रव्यसज्ञाभेदाभिधायिना

आदिमध्यान्नवृत्तेन पदेवैकत्रवर्तिना ।

वाक्यार्थनिर्णयो यत्र भवेत्तद्दीपक मत

बहुधा वर्तमानस्य तस्य लक्ष्य प्रतन्यते ॥९८॥

काकिला रणन कृत्वा नृसिंह मोदयन्त्यलम् ।

खेदयन्ति च कान्ताया खण्डिताया मन परम् ॥९९॥

आदिवर्तिजानिपददीपकालकार ।

चरन्ति मदनोद्याने नृसिंहरमणीजना ।

त्वद्वैरियनितालोका विपिनेषु गुहासु च ॥१००॥

आदिवर्तिक्रियापददीपकालकार ।

रक्त कादम्ब्रनाथेऽस्मिन् कामिनीना मनो भृशम् ।

प्रजाना मित्रलोकाना चिन्त च विदुषामपि ॥१०१॥

आदिवर्तिगुणपददीपकालकार ।

हारेण रायबङ्गस्य कण्ठस्थेन मनो हृतम् ।

नारीजनस्य शीनाशोर्मयूखोऽपि तिरस्कृत ॥१०२॥

आदिवर्तिद्रव्यपददीपकालकार ।

चैत्रेण सेवकेनासौ रायबङ्गो विनम्यते ।

पश्चाद्राजाधिलोकस्य वार्ता मस्यग्निरूप्यते ॥१०३॥

आदिवर्तिसंज्ञापददीपकालकार ।

आरामे रायबङ्गस्य नृत्य कुर्वन्ति केकिन ।

प्रेक्षकाणा जनाना च जनयन्ति मनोमुदम् ॥१०४॥

मध्यवर्तिजातिपददीपकालकार ।

रायबङ्गमनोजात नारीलोको विलोकते ।

दिदृक्षावशतो गत्वा देवनारीजनोऽपि च ॥१०५॥

मध्यवर्तिक्रियापददीपकालकार ।

सत्कीर्त्या रायबङ्गस्य नृलोको धवलीकृत ।

पाताललोकमर्वस्वमूर्ध्वलोकोऽपि भासुर ॥१०६॥

मध्यवर्तिगुणपददीपकालकार ।

कादम्बनायको हारभूषितो नृपरायराट् ।

आस्ते सिंहासने दिव्ये पूज्यते च नरेश्वरे ॥१०७॥

मध्यवर्तिद्रव्यपददीपकालकार ।

कादम्बेशेन रायेण डित्थोऽय परिपालित ।

अन एव निजावासे स्थित्वा दीर्घ प्रमोदते ॥१०८॥

मध्यवर्तिमज्ञापददीपकालकार ।

कादम्बरायमदनाद्ब्रह्महिच्छानवामिन ।

वदन्ति मवुरालाप फल चुम्बन्ति ते शुका ॥१०९॥

अन्त्यवर्तिजातिपददीपकालकार ।

कादम्बरायभूनाथ कुमुमायुवमनिभम् ।

दृष्ट्वा मुद स्वकीयोऽपि परकीयोऽपि ढौकते ॥११०॥

अन्त्यवर्तिक्रियापददीपकालकार ।

कादम्बरायनाथस्य सत्कीर्त्या विमलात्मना ।

जायते मानवाना च स्वर्गिणामपि सत्सुखम् ॥ १११ ॥

अन्त्यवर्तिगुणपददीपकालकार ।

सिंहासने महारत्नकीलिते प्रतिभासते ।

क्रीडत्याराममदोहे हारालकृतरायराट् ॥ ११२ ॥

अन्त्यवर्तिद्रव्यपददीपकालकार ।

कादम्बनाथ रायेन्द्र लोकेते प्रणमत्यपि ।

नानादेशगता वार्तां ब्रूते रम्या कपिध्वज ॥ ११३ ॥

अन्त्यवर्तिसज्ञापददीपकालकार ।

शास्त्र धर्मस्य सवृद्धयै स च पुण्यस्य तच्छिष्य ।

सा श्री रायमहीनाथे सुखस्य खलु जायते ॥ ११४ ॥

इति दीपकत्वेऽपि पूर्वपूर्वापेक्षया वाक्यमाला प्रयुक्तेति
मालादीपकम् ।

श्रिय विपक्षवर्गस्य वर्धयन्ति चलानि वै ।

ह्यामयन्ति नृसिंहस्य मन्त्रा पञ्च सुनिश्चिता ॥ ११५ ॥

क्रियाया परस्परविरोधाद् विरुद्धार्थदीपकम् ।

मनोवेगयुना सत्त्वा दिव्यलक्षणभूषिता ।

दिवि भान्ति पतङ्गाश्वा भुवि रायतुरगमा ॥ ११६ ॥

मनोवेगादिघर्मेण^१ उभयेषा समानाना भानुक्रियासबन्धात् श्लिष्टार्थ-
दीपकम् ।

कान्तास्य वरमीक्षते घनकुचद्वन्द्वं स्पृशत्युन्नतं

श्लिष्यत्यङ्गं मनङ्गतन्त्रविदिय श्रीरायबङ्गो दरम् ।

चुम्बत्यङ्गति भावयत्यमति सस्त्रीणाति समोदते

जानीते विनयत्युदेति कुरुते सभाषते भासते ॥ ११७ ॥

१ उभस्वाना २ गमन ।

नान्द्रक्रियाणामेककर्तृकारकेण सबन्धादेकार्थदीपकम् ।

अब्ज कूर्ममनङ्गराजशरधि कामेभसद्वन्धना-

लान सिंहमपूर्वसारसरसी नाग गिरि वल्लरिम् ।

शङ्ख शीतकर तिलस्य कुसुम वज्र प्रवाल झष

चापं भृङ्गतति मयूरमसम दृष्ट्वा सदा मोदते ॥ ११८ ॥

श्रीरायबद्ध इति अध्याहार कर्ता । एतदन्त्यक्रियादीपक प्राक
प्रदर्शितमपि भावचमत्कारसभवात्पुन प्रदर्शितम् । अन्या दिशा
विचक्षणैर्दीपकान्तराप्यभूह्यानि ।

यत्रार्थस्य स्वरूपेण विद्यमानस्य कल्पना ।

अन्यथा तमलकारमुत्प्रेक्षाख्य प्रचक्षते ॥ ११९ ॥

नून प्रायो ध्रुव शङ्के मन्ये सत्यमिवादिभि ।

शब्दे प्रकाश्यते सेयमुत्प्रेक्षा कविपुङ्गवे ॥ १२० ॥

वाच्या प्रतीयमानेति सा चोत्प्रेक्षा द्विधा मता ।

मन्ये शङ्के ध्रुवादीना प्रयोगे प्रथमा मता ॥ १२१ ॥

मन्ये शङ्के ध्रुवादीना शब्दानामप्रयोगत ।

प्रतीयमानोत्प्रेक्षा तु द्वितीया विबुधैर्मता ॥ १२२ ॥

वाच्योत्प्रेक्षा पुन प्रोक्ता षट्पञ्चाशद्विधा बुधै ।

प्रतीयमानोत्प्रेक्षाष्टचत्वारिंशद्विधा मता ॥ १२३ ॥

तदुदाहृतिरन्यत्र बोद्धव्या बुद्धिगालिभि ।

मूलभेदौ निरूप्येते द्वाविमौ सग्रहत्वत ॥ १२४ ॥

शशधरसुरगङ्गा क्षीरवाराशिमुख्यान्

धवलगुणविशिष्टान् केचिदाहु स्वतोऽमून् ।

तव विशदयशोऽशस्पर्शनादर्जुनास्ते

मुकविबिनुतवङ्गक्षमाप मन्ये सदाहम् ॥ १२५ ॥

स्वभावेन घवलाना चन्द्रादीना कीर्त्यशस्पर्शनाद् घावल्प-
मन्यथा कल्पितम् । इय वाच्योत्प्रेक्षा ।

तव तेजोगुण लब्धु बालभानुरय पुन ।

पुन पूर्वाद्विमारुह्य वसतीव तपस्यलम् ॥ १२६ ॥

क्रियायोगिना इवशब्देन व्यञ्जितोत्प्रेक्षा इयमपि वाच्योत्प्रेक्षा ।
प्रतीयमानोत्प्रेक्षायास्तु (? गुरुन्वा) निशयाभावादुदाहरण पूर्वशास्त्रे
न कृतमिति नास्माभिरपि कृतम् ।

प्रस्तुतीकृत्य यत्किञ्चिद्वस्तुनस्सिद्धये पुन ।

अन्यस्यार्थस्य योग्यो योऽर्थान्तरन्यास एव स ॥१२७॥

कीर्तिप्रतापौ रायेण भुवनत्रयवर्तिनौ ।

लब्धौ पुण्यवता केन किं किं पुमा न लभ्यते ॥१२८॥

विश्वव्यापिनामार्थान्तरन्यास ।

वक्षोरङ्गनिवासिनी श्रियमिमा कृत्वा मुखाब्जस्थिता

वाग्देवी जयकामिनी विलमिता दोर्दण्डसद्यस्थिताम् ।

कादम्बक्षितिपे स्थिते वरयशम्कान्ता गृहान्निर्गता

लोके स्त्री महते विवर्धनगता का वा सपत्नी श्रियम् ॥१२९॥

अयमपि विश्वव्यापी ।

श्रीकामिरायबङ्गोज्य कलौ काले सता मुदम् ।

उत्पादयति शीताशु कलावपि मुदे न किम् ॥१३०॥

विशेषस्थार्थान्तरन्यास ।

कान्तास्यचुम्बने सक्तो रायेन्द्रो याति समदम् ।

पद्मिन्या पङ्कजासक्तो भ्रमर किं न तुष्यति ॥१३१॥

श्लिष्टार्थान्तरन्यास । भ्रमर मधुकर कामुक इति ध्वनि ।
मधुद्रो भ्रमरश्चेति द्वाविमौ कामुकेऽपि च ।

नृसिंहोऽप्यभय दत्ते श्रीरायो जगता सदा ।

लोके विचित्रशक्तीना वस्तूना शक्तिरीदृशी ॥१३२॥

विरुद्धार्थान्तरन्यास ।

नीतियुक्तोऽपि रायस्य विक्रमो वैरिणा मन ।

सतापयति शत्रूणा पूर्वपाप हि तादृशम् ॥१३३॥ *

अयुक्तार्थान्तरन्यास ।

तिलकाङ्कितरायास्य मोदयत्यङ्गनाजनम् ।

साङ्कचन्द्रसम तोपवर्धन युज्यते ननु ॥१३४॥

युक्तार्थान्तरन्यास ।

रायप्रतापभानुस्तान् सनापयतु वैरिण ।

कीर्तिचन्द्रो धुनोतीमान् किं किं युक्त सदीपिण ॥१३५॥

युक्तायुक्तार्थान्तरन्यास ।

कीर्तिज्योत्स्नापि तापाय न किं तेजो वनानल ।

धुनोति चन्द्रपक्षश्चेद्वह्निपक्षो दहेन्न किम् ॥१३६॥

विपर्ययार्थान्तरन्यास ।

जगत्यर्थान्तरन्यासभेदा अन्येऽपि सन्ति हि ।

तेषा निदर्शन ज्ञेय यथाशास्त्र विचक्षणं ॥१३७॥

शब्दस्य वा प्रतीतेर्वा 'नादृश्ये विषये सति ।

वस्तुनोर्भेदकथन व्यतिरेकस्तयो पुन ॥१३८॥

जगन्मोहनरूपेण कुसुमास्त्रस्य सनिभ ।

रायबङ्गस्ततस्तस्य भेदो दृश्यत्वधर्मत ॥१३९॥

१ नादृश्ये

रायबङ्गवर्तिना दृश्यत्वधमेण भेदकथनादुभयगतभेदस्य प्रतीति-
सिद्धत्वादेकव्यतिरेकालकार ।

यश प्रतापी भवतो जगद्व्याप्तौ कविस्तुतौ ।

यश शारदचन्द्राभ बालभानुसम पर ॥१४०॥

यश प्रतापोभयभेदसाधकवावल्यरक्तत्वधर्मद्वयस्य पृथक्कथनादुभय-
व्यतिरेकालकार ।

उन्नतस्थानवृत्तोऽपि तेजस्व्यपि महानपि ।

राय त्वत्समता याति न भानू राहुपीडित ॥१४१॥

साक्षेपव्यतिरेकालकार ।

धरन्नपि महाभाग्यजनिता पूर्णसपदम् ।

एकदिकपालनादिन्द्रस्त्वत्तो राय निऋष्यते ॥१४२॥

सहेतुव्यतिरेकालकार ।

उक्तव्यतिरेकालकारपञ्चक शब्दोपात्तसादृश्यम् । बालातप प्रतापश्च
धरतो भेदमीदृशम् । बालातपो भानुवर्ती प्रतापस्त्वयि वर्तते ।
रक्तत्वधर्मेण प्रतीयमानसादृश्ययोर्बालातपप्रतापयोर्भेदकथनात्प्रतीय-
मानसादृश्यभेदमात्रव्यतिरेकालकार ।

सकलङ्को निराधार कलाहीनश्च चन्द्रमा ।

श्रीरायबङ्गभूमीश त्वत्सम कथमुच्यते ॥१४३॥

जगदानन्दजनकत्वजगत्सतापहारित्वादिधर्मेण प्रतीयमानसादृश्ययो-
श्चन्द्ररायबङ्गयोर्मध्ये रायबङ्गस्याधिक्योपेतभेदकथनादाधिक्योपेत-
भेदलक्षणव्यतिरेकालकार ।

कादम्बरायो मारश्च रूपवन्तौ मनोहरौ ।

राय मिहध्वजो मारो मीनकेतुर्विराजते ॥१४४॥

२ आक्षेपालङ्कार ।

शब्दोपात्तसादृश्ययो श्रीरायमारयो' सदृशध्वजद्वयस्य भेदगमकत्वा-
त्सदृशव्यतिरेकालंकार' ।

राय कादम्बनाथोऽथ नारीलोलदृगीक्षित ।

कुसुमास्त्रघरो भाति रतिदेवीदृर्गकित ॥१४५॥

प्रतीयमानसादृश्ययोर्भारराययो सदृशरतिलोचननारीलोचनानां
भेदगमकत्वादपर सदृशव्यतिरेकालंकार ।

मुरराजश्रियो रम्य भोगीन्द्रमुखलालितम् ।

रायस्य राज्यं क्रमते प्रजापालनभासुरम् ॥१४६॥

रावराज्यं प्रजापालनभासुरत्वेन राज्यजातेस्तुल्य सुरेन्द्रविभूति-
भोगीन्द्रमुखलालितत्वेन भिन्नमिति सजातिव्यतिरेकालंकार ।

प्रकृत कारणं त्यक्त्वा यत्र हेत्वन्तर मतम् ।

विभाव्यते स्वभावो वा यत्र सा हि विभावना ॥१४७॥

'अचन्द्रा चन्द्रिका कीर्ति प्रतापो भानुना विना ।

बालातपो मुख चन्द्रो क्षीराब्धेस्ते नृमिह भो ॥१४८॥

चन्द्रादिकारण परित्यज्य कीर्तिचन्द्रिकादे श्रीरायनामकारणान्तर-
कल्पनात्कारणान्तरकल्पनाविभावना ।

अकारणमहाबन्धुरकारणसहृद्भवान् ।

अकारणदयालुश्च जनाना रायभूपते ॥१४९॥

अकारणपदेन हेतु निराकृत्य स्वभावेन बन्धुत्वादिकथनात्स्वभाव-
विभावना ।

प्रतिषेधस्य कथन प्रतीतिर्वा प्रजायते ।

स यत्राक्षेप इत्युक्तस्त्रिधा कालत्रयाश्रयात् ॥१५०॥

१ भास्करम् २ आचन्द्रा ।

रायौ रणाङ्गणेऽरीणा जल प्रविशता तृणम् ।
दशता कृतवल्मीकारोहणान्न व्यधाद्वधम् ॥१५१॥

अतीताक्षेपालकार ।

कृतो ललाटे तिलक करोति नृपरायराट् ।
साङ्गमिन्दु स्वकीयस्य सममिच्छति किं कृती ॥१५२॥

वर्तमानाक्षेपालकार ।

सापराधो नृपो राय कान्ताडम्बरकोपत ।
भीत्वा रतगृह रम्य सोत्कण्ठोऽपि न यास्यति ॥१५३॥

अनागताक्षेपालकार ।

कीर्तिचन्द्रातपे शैत्य न मत्यं तव रायराट् ।
यदि सत्य विपक्षाणा सतापयति किं पुन ॥१५४॥

शैत्यविरोधिना सतापकर्मणा केनचित्पुसा शैत्यधर्मस्य आक्षिप्तत्वाद्द-
र्माक्षेपालकार ।

रायवद्भस्य कीर्तिर्वा नेति को वुध्यते भिदाम् ।
दृश्यते शुद्धधावल्यप्रभा जगति नाश्रय ॥१५५॥

धावल्यप्रभालक्षण धर्ममाश्रित्य कीर्तिरूपो धर्म्याक्षिप्त इति
धर्म्याक्षेपालकार ।

राय कल्पान्तक युद्धे दृष्ट्वापि रिपवोऽवशा ।
भय न यान्ति वल्मीकतृणपानीयमश्रिता ॥१५६॥

भीते कारण वधो वल्मीकाद्याश्रितैर्वैरिभिर्निषिद्ध इति कारणाक्षेपा-
लकार ।

रायस्यायल्लके ज्योत्स्नाहिमाम्बुमलयानिल- ।
कर्पूरसगमेऽप्यस्या शीतभावो न जायते ॥१५७॥

१ रिपदोवदा ।

चन्द्रातपादिवस्तुसंगमे कारणे सनिहितेऽपि शैत्यकार्यं न जातमिति
कार्यक्षेपालकार ।

रणे गृहीतो रायेण रिपुवर्गो वदत्यलम् ।

वधाभिलाषो यदि ते हन्तव्यो रणभैरव ॥१५८॥

हन्तव्य इत्यङ्गीकारमुखेनैव काक्वा स्ववधो निषिध्यत इत्यनुज्ञाक्षे-
पालकार ।

कलौ काले महादुष्टाँल्लुण्टाकादिकदुर्जनान् ।

निराकरोति श्रीराय प्रभुत्वेनैव राजते ॥१५९॥

आदिपदेनैव दुर्जननिषेधात् प्रभुत्वाक्षेपालकार ।

स्थितिर्वा ते गतिर्वा ते रमणास्तु ममाकृति ।

द्रष्टु न शक्यते पञ्चान्तदेतन् मुविचार्यताम् ॥१६०॥

इति वदन्त्या नायिकया सादर वचन प्रयुक्तमिति सामर्थ्यादिनादरो
निषिद्ध इति अनादराक्षेपालकार ।

पश्य पश्यमि चेदन्यामस्तु तद्दर्शनं शुभम् ।

यावदागमनं तावत्तच्चिन्तास्तु मम प्रिय ॥१६१॥

इति वदन्त्या कान्तयाशीर्वचनमुखेन काक्वा कान्तगमनं निषिध्यत
इत्याशीर्वचनाक्षेपालकार ।

दास्यामि हारं गन्तव्यं त्वया तुभ्यं नमो नमः ।

अन्यथा वामपादो मे तव बुद्धिं वदिष्यति ॥१६२॥

इति ब्रुवाणयातिरक्तया कान्तया गमनसहायताकरणव्याजेन
प्रियप्रयाणं निषिद्धमिति साचिव्याक्षेपालकार ।

याहि याहि निजेश त्वं मम यत्नस्तथैव भो ।

तव प्रयाणे पाथेयं प्रागेव विहितं मया ॥१६३॥

प्रियगमनकार्ये यत्नकरणव्याजेन प्रियया निजेशगमन निषिद्धमिति
यत्नाक्षेपालकार ।

क्षणालिङ्गनविघ्नाय रोमहर्षाय कुप्यता ।

प्रेम्णा निषिद्ध गमन तवेश न मया पुन ॥१६४॥

प्रेमाधीनतया कान्तया निजेशगमन निषिद्धमिति परवशाक्षेपालकार ।

पुनरुज्जीवनोपाय सजीवनमहापदम् ।

दत्त्वा याहि निजेश त्व कन्दर्पो मा हनिष्यति ॥१६५॥

जीवनोपायदुर्घटत्वनिवेदनव्याजेन निजेशगमन निषिद्धमित्युपाया-
क्षेपालकार ।

यामोति वचन नाथ ते मुखान्निर्गत वरम् ।

याहि वा वस^१ यत्त्वत्तो मम किञ्चित् फल न हि ॥१६६॥

अत्यधिकस्नेहया^२ सकोपया मुकान्तया कान्तगमनं निषिद्धमिति
रोषाक्षेपालकार ।

स्पृष्ट मया न ताम्बूल न दृष्ट स्वदित न वा ।

^३शून्य तवास्तु नष्ट वा मार्जारो वान्तु मत्प्रिय ॥१६७॥

प्रागनागत्य पुनरागतेन जीवितेशेन सहैवमुक्त्वा कान्तया ताम्बूलस्य
सानुक्रोश दोषोद्भावन कृतमित्यनुक्राशाक्षेपालकार ।

कलौ काले प्रजा धर्म नाचरन्ति न चासते ।

न्यायमार्गे अहो कष्ट^४मनुशोचति हि रायराट् ॥१६८॥

धर्मपालचूडामणिना रायधरणीगेन कलौ प्रजाना धर्माचारव्यावृत्त्या-
दिक दृष्ट्वा पश्चात्ताप कृत इत्यनुशयाक्षेपालकार ।

१. मत्त्वतो २. सकोपयासि कान्तया ३. शून्यास्तगस्तु ४. मनु-
शेषते ।

विपक्षतमसा शत्रौ सुहृत्पद्मप्रकाशके ।

रायप्रतापमार्तण्डे सति कि भानुना भुवि ॥१६९॥

साम्यं दर्शयित्वा मुख्यभानुनिषिद्ध इति श्लिष्टाक्षेपालकार ।

किमिय चन्द्रिकाहोस्वित् कीर्ति कि रायभूभुज ।

रात्रावह्लि च दृश्यत्वात् कीर्तिरेव न चन्द्रिका ॥१७०॥

सदादृश्यत्वधर्मेण चन्द्रिका निषिध्यते इति सशयाक्षेपालकार ।

कृत्वापि दान जगतो न तृप्यति हि रायराट् ।

इष्ट दत्त्वापि भुवने न तृप्यति सुरद्रुम ॥१७१॥

अर्थान्तराक्षेपालकार ।

कादम्बराय कीर्तिस्ते कविराजैर्न वर्ण्यते ।

वाचामगोचरत्वात्ता दृष्ट्वा नन्दन्ति मानसे ॥१७२॥

हेत्वाक्षेपालकार ।

कादम्बक्षितिपस्य तीर्थममले गौरीशगौरं हृदि

श्रीनाथामरनाथ कर्ण नृपते पुष्पायुध क्षमापते ।

भोगीन्द्रार्जुन धर्मराजनृपते भानो सुधाशो गुरो

वार्धे मेरुगिरीन्द्र चन्दनतरो भूमौ नभो मा कुरु ॥१७३॥

गर्वरूपधर्मनिषेधाद् धर्माक्षेपालकार । भावचमत्कारसभवात्
पुनरप्युक्त ।

अन्ये विकल्पा द्रष्टव्या आक्षेपाणा विचक्षणं ।

मया शास्त्रानुसारेण दिग्मात्र संप्रदर्शितम् ॥१७४॥

मनोवद् वक्तुरिष्टस्योत्कर्षं वक्तु निरूप्यते ।

यत्रासभवि सा सिद्धिरुच्यतेऽतिशयाभिधा ॥१७५॥

१ मनो वक्तुनिष्ठं ।

तव कीर्तिमहालता जगत्सुरभूजाप्रगता स्तुतादिकैः ।

अवलम्बपद विलोकते यवनस्तुत्यनृसिंहभूपते ॥१७६॥

कीर्त्तरुत्कर्षकथनार्थमसभविलोकाप्रगमन लोकमतिक्रम्य गमनेच्छया
विलोकन च कथितमित्यतिशयोक्ति ।

किमास्य शारद चन्द्रबिम्ब किं हसन तव ।

किं किं ज्योत्स्नेति रायस्य सदेहो जायते नृणाम् ॥१७७॥

आस्यहमनयोरुत्कर्षकथनाय वदनचन्द्रयोर्हसनचन्द्रिकयोर्भेत्तु शक्य-
त्वेऽपि सशयपूर्वको विवेचनाभावो सभवी कथित इति मशयातिश-
योक्ति ।

रणभेरीरव श्रुत्वा रायस्य जयशमिनम् ।

जय निश्चित्य दिक्कन्या गायन्ति जयकामिनीम् ॥१७८॥

निश्चयानिजयोक्ति ।

महाकवीना विस्नीर्ण हृदय जगदद्भुतम् ।

लोकादिदनिमत्कीर्तिविक्रमादरता गतम् ॥१७९॥

अद्भुतातिशयोक्तिविगोभ्रातिगयोक्तिर्वा ।

आकारेणेंडिगतेनापि सूक्ष्मत्वाल्लक्ष्यते यदा ।

तदार्थो यत्र सप्रोक्त सूक्ष्म इत्याख्यया बुधै ॥१८०॥

मुरतसदननार्या रायत्रङ्गोऽनुयुक्त

क्व गत इति तदामौ भीतिमान् पृष्ठतोऽगान् ।

निजपतिहृदय साकारभेदेन बुद्ध्वा

वम वस वम तत्रैवेति वाच ब्रवीति ॥१८१॥

प्रियया प्रियेण कृतो नायिकान्तरसगम प्रियस्य पृष्ठगमनाकारेण
सभयेन सूक्ष्म ज्ञात इति सूक्ष्मालकार ।

यत्र प्ररूपित वस्तु स्वसमानस्य वस्तुन ।

विदधाति प्रतीति सा समासोक्तिः सता मता ॥१८२॥

भो भो कल्पतरो त्वमत्र भुवने पुष्पासि सर्वान् जना-

नाकल्प तव कीर्तिवस्तु विदुषा स्तुत्य पर तिष्ठतु ।

काकोलूकपरेण निम्बतरुणानेनालमन्ये च ये

वृक्षा सन्ति बहुत्वधर्मसहितास्ते सन्तु मा सन्तु वा ॥१८३॥

अत्र कथित कल्पतरु स्वसदृश रायबड्ग ज्ञापयति, निम्बतरु स्वसमान नीतिशून्यनृप, परे च तरु स्वसदृशभूपबाहुल्यं सूचयन्ति तत्तद्विशेषणमुक्तानुक्तयो सममिति समानविशेषणभिन्नविशेष्य-समामोक्ति ।

मतापहारी चन्द्रोऽय कलामृतविराजित ।

अकलङ्क मदोद्भामी मया पुण्येन लभ्यते ॥१८४॥

अत्र कथितश्चन्द्र स्वसम रायबड्ग गमयति, सतापहरण कलामृत-विराजन चन्द्रे राये च ममम्, अकलङ्कत्व सदाभासन रायनृपे न चन्द्र इति भिन्नाभिन्नविशेषणसमामोक्ति ।

मनिमेष सुराधीशो निष्कलङ्क सुधाकर ।

वदन्कल्पतरुलब्ध केनचिद्बहुपुण्यत ॥१८५॥

अत्र रायनृपसमानानामिन्द्रादीना निर्निमेषत्वादिधर्म निराकृत्य सनि-मेषन्वाद्यपूर्वधर्म निरूप्य रायबड्गप्रतीतिसमर्थनादपूर्वसमासोक्ति । अस्यालंकारस्य अन्यापदेश इति नामान्तर वक्तव्यम् ।

अर्थस्य गोपन वाचा चेष्टया वा प्रकाशनम् ।

लेशतो लव इत्युक्त सद्भिर्निन्दास्तुति परे ॥१८६॥

पूर्वाद्ग गतबालभानुमधुना तेजस्विन बीक्ष्य त

पञ्चास्यासनयातबड्गनृपती कोप प्रयाते सति ।

शैलाग्रे स्थितवानहं तव गुणं तेजोऽभिधान तपो
लब्धु वै विदधामि चारुवचसां प्रासादयत्तं नृपम् ॥१८७॥

वचोगोपनलेशालकार । निन्दास्तुतिर्वा ।
सेवार्थमागतमहाधरणीश्वराणा-
मालोकनेन करुणास्मितभाजनेन ।
सिंहामने स्थितवता नृपकुञ्जरेण
चेत प्रसत्तिरमला प्रकटोकृताभूत् ॥१८८॥

चेष्टाप्रकाशनलेशालकार ।
उक्ताना यत्र वाच्याना योगो वाच्यान्तरं सह ।
क्रमेण कथित सोऽत्र क्रमालकार उच्यते ॥१८९॥
रूप वचोऽधररस स्तनकुम्भयुग्म
नि श्वासगन्धविषय तरुणीतनुस्थम् ।
आलोकनश्रवणपानसमागमोरु-
घ्राणक्रियाभिरनुभूय मुखी नृपोऽभूत् ॥१९०॥

क्रमालकार ।
भ्रूलोचनकटाक्षान् वै रायस्वालोकनश्च कामिनी ।
चापभृङ्गशरान्मत्वा जायते भयबिह्वला ॥१९१॥

अयमपि क्रम ।
बुद्धेर्महत्त्व भूतेर्वा तन्यते यत्र कोविदै ।
उदात्त तमलकार वदन्ति कविपुङ्गवा ॥१९२॥
काले कलौ स्वहितमङ्गलचारुबुद्ध्या
पाति प्रजा करुणया न बिभेति शत्रो ।
शीताशुभानुसमनीतिपराक्रमाभ्या
जेजीयतेऽरिर्नृपतीभघटामृगेश ॥१९३॥

१ प्रच्छन्नवास्ता कृद ।

बुद्धिमहत्त्वोदात्तालकारः ।

आस्थानमण्डपगते सुरशैलनुङ्गे

सिंहासने मदनरूपनृसिंहबङ्गः ।

आस्ते सता फणिपतिर्वरसार्वभौमो

गोर्वाणराज इति वाखिलमन्यमान ॥१९४॥

ऐश्वर्यमहत्त्वोदात्तालकारः ।

सत्यरूपमपह्नुत्य यत्रान्यार्थो निरूप्यते ।

अपह्नुनवमलकार तमाहु काव्यकोविदा ॥१९५॥

अय श्रीरायबङ्गो न क्षीरवाराशिरेव वै ।

अन्यथा वरगाम्भीर्यगुणशाली कथ भवेत् ॥१९६॥

रायबङ्गत्वलक्षण स्वरूपमपह्नुत्य क्षीराम्बुधित्वस्य पररूपस्य
निरूपणात् स्वरूपापह्नुनवालकारः ।

अय श्रीरायबङ्गो न समुद्रनवनीतक ।

कादम्बक्षीरवाराशेरुत्पत्तिर्षटते कथम् ॥१९७॥

अयमपि पूर्वं एव ।

अय श्रीरायबङ्गो न सुरभूजोऽन्यथा कथम् ।

समस्तजनसकल्पदायको जाघटीत्ययम् ॥१९८॥

अयमपि तथैव ।

युद्धरङ्गत्रिनेत्रोऽय रायबङ्गमहीपति ।

कल्पान्तसमवर्त्येव किलान्यत्र दयानिधिः ॥१९९॥

दयानिधित्व परेष्वभ्युपगम्य स्वेषु रिपुवर्गेण तस्य प्रलयान्तकत्व-
दर्शनाद्विषयापह्नुनवालकारः ।

उपमालङ्कृती पूर्वमुपमापह्नुनव स्मृत ।

अन्यापह्नुतिभेदाना विस्तारो लक्ष्यता बुधैः ॥२००॥

१. कादम्बक्षीरवाराशो उत्पत्तिः ।

यत्र प्रियतरा वाणी प्रेमाधिक्यप्रकाशिनी ।
 निरूप्यतेऽसौ विद्वद्भिः प्रयोऽल्लकार उच्यते ॥२०१॥
 तरुणि चरणघातो मल्लिकापुष्पसङ्ग-
 स्तव घनकुचघात कौमुदीस्पर्शकल्प ।
 सरसमधुरकाञ्ची दामबन्ध प्रबन्धो
 वदति सुरतकेल्या रायबङ्गक्षितीन्द्रः ॥२०२॥
 प्रयोऽल्लकार ।

उक्तार्थानां विरुद्धत्व यत्र वाक्ये परस्परम् ।
 शब्दार्थविहित नास्ति तत्त्वतः स विरोधक ॥२०३॥
 कलाधरो न शीताशुस्तेजस्व्यपि न भास्कर ।
 अभीष्टदो न मन्दारो रायबङ्गो गुणाम्बुधि ॥२०४॥
 शब्दकृतविरोध ।

उत्तुङ्गोऽपि न मेरुर्न तापहृच्चन्दनद्रुम ।
 श्रीमानपि न गोविन्द कादम्बाम्बुधिचन्द्रमा ॥२०५॥
 अयमपि शब्दकृत एव ।

दयालुना पुष्यजनेन चापि देवेन सुज्ञातगुणेन तेन ।
 श्रीरायबङ्गप्रभुणा विपक्षा जिता सुलोका परिपालिताश्च

॥२०६॥

अयमपि तथैव ।

श्रीरायक्षितिनाथ येन समये प्रस्थानभेरी महा-
 कोणेन प्रहता जना रिपुहरे भीत्वाध्वनन्त्यद्भुतम् ।
 लोकेषु ध्वनिमत्सु तेषु धरणीभृद्भित्तयो दिग्गज-
 व्रातस्य श्रुतयो विमानततयो भिन्ना वितीर्णा भृशम् ॥२०७॥
 अयमर्थकृतविरोधालकार ।

शृङ्गारादिरसाना तु नवाना यत्र कथ्यते ।
 रूपोत्कर्ष पृथक्सोऽप्यलकारो रसवान् भवेत् ॥२०८॥

तरुण्या देहलावण्ये स्नात्वा स्नात्वा प्रमोदते ।

अधरामलपीयूषं पीत्वा पीत्वामरायते ॥२०९॥

शृङ्गाराख्यरसवदलकार ।

रणसन्नि शत्रूणा वर्गं दत्त्वा बलिं धराम् ।

सागरान्ता विजित्याय रायशूरो विराजते ॥२१०॥

युद्धवीररसाख्यरसवदलकार ।

कृत्वा तृप्त जगत्सर्वं सुराग विपिनद्रुमम् ।

कृत्वा दानेन महता पात्रं नास्तीति मन्यते ॥२११॥ *

रायबङ्ग इति कर्तुरध्याहार । दानवीररसाख्यरसवदलकार ।

दृष्ट्वा शान्तिजिनं नत्वा स्तुत्वा स्मृत्वा समर्च्य च ।

आनन्दक्षीरवारीशौ रायबङ्गो निमज्जति ॥२१२॥

धर्मवीररसाख्यरसवदलकार ।

आयल्लकानलो दग्ध्वा तन्वङ्गी पीडयत्यहो ।

इति दूतीवचं श्रुत्वा करुणाब्धौ निमज्जति ॥२१३॥

राय इति कर्ता । करुणाख्यरसवदलकार ।

मक्षिकाजालपूयार्द्रव्रणकोटियुतान् रिपून् ।

भिक्षार्थं मागतान् दृष्ट्वा जनो वमति राय ते ॥२१४॥

बीभत्साख्यरसवदलकार ।

पश्चाद्गतेशबिम्बं सालोक्यं चुम्बति दर्पणे ।

मत्वा निजेश श्रीरायं दृष्ट्वा हसति कौतुकात् ॥२१५॥

हास्याख्यरसवदलकार ।

रायारामस्थितान् वृक्षान् स्वनन्दनगतान् बहून् ।

दृष्ट्वावचिनुते पुष्पाण्यमरेन्द्रो विलासतु ॥२१६॥

अद्भुताख्यरसवदलकार ।

रायस्य दोर्बलं स्मृत्वा रिपुवर्गो गुहास्थितः ।

भीतो गच्छामि कुत्रेति भयज्वरगतो मृतः ॥२१७॥

भयानकाख्यरसवदलंकारः ।

कादम्बरायभूपस्य क्रोधाग्नौ विक्रमार्चिषि ।

दग्धवैरीन्धने लोकं व्याप्ते शुष्यन्ति वार्धय ॥२१८॥

रौद्राख्यरसवदलंकारः ।

देवसेवनकालेऽस्य रायबङ्गस्य चेतसि ।

शीते शान्तरसे व्याप्ते शीतिभूतं जगत्त्रयम् ॥२१९॥

शान्तरसाख्यरसवदलंकार ।

रसवत्त्व गिरां लोके रसैर्नवभिरुच्यते ।

रसैरष्टभिरित्येके शान्तवर्ज्यैर्वदन्त्यलम् ॥२२०॥

उत्कर्षो यत्र गर्वस्य कथ्यते मानशालिनाम् ।

तमलकारमूर्जस्विनामान मन्यते बुध ॥२२१॥

पीत वारिधिसप्तक जगदिदं हस्तेन संचारित

भोगीन्द्रस्य किरीटवर्तिमणय शीर्णकृता पर्वता ।

सचूर्णा विहिता मयेति कदने यो वक्ति गर्व निजं

त जित्वा नृपकुञ्जरो विजयते कादम्बवशोत्तम ॥२२२॥

ऊर्जस्व्यलकार ।

यत्राप्रस्तुतवस्तूना वर्णना क्रियते जनै ।

निर्विण्णमानसैस्तच्चाप्रस्तुतागसनं विद् ॥२२३॥

हरिततूर्ण भक्षिणोऽमी हरिणा हर्षैर्वसन्ति पीतजला ।

इति वक्ति रायवङ्गक्षितिपतिशत्रुव्रजो वने सोऽयम् ॥२२४॥

रायनृपतिना तिरस्कृतत्वान्निर्विण्णमानसेन शत्रुवर्गेण हरिणानाम-
प्रस्तुताना प्रशसा कृता यस्मात्तस्मादप्रस्तुतप्रशसालंकार ।

१ रित्येते । २ भक्षिणो मि हरिणा हर्षैर्वसन्ति पीतजला ।
३ वनसोयम् ।

देशोऽयं स्वर्गभूमिर्नृपसदनमिदं देवराजस्य मेहं
 कान्तेयं कामभार्या मदभरितगजो दिग्गज सार्वभौम ।
 अश्वोऽयं शक्रसपतिः सुरतरुमलो जैनधर्मो जिनेन्द्रो
 देवोऽयं रायबङ्गक्षितिपतिरधुना दिव्यपुण्यो विभाति ॥२२५॥
 येन केनचित् कारणेन निर्विण्णचित्तं कश्चित् पुमानस्य नृपस्य
 विभूतिं धृत्वा वर्णयति तस्मादियमपि अप्रस्तुतप्रशसा ।
 यत्र वैकल्यकथनं गुणादीनां विधीयते ।
 विशेषदर्शनार्थं सा विशेषोक्तिर्निरूप्यते ॥२२६॥ *
 न शीतोऽपि यशोराशिर्जगत्तापं हरत्यसौ ।
 नोष्णोऽपि विक्रमं शत्रून् रायस्य दहति ध्रुवम् ॥२२७॥
 शैल्यगुणवैकल्येऽपि जगत्तापहरणविशेषः । उष्णतागुणविकलत्वेऽपि
 वैरिदहनविशेषो यतस्ततो गुणवैकल्यविशेषोक्तिः ।
 न कोकिला न वीणा वा न कीरा न च किन्नरी ।
 कान्ता तथापि रायस्य चेतो हरति गानतः ॥२२८॥
 कोकिलादिजातिवैकल्येऽपि कान्ता स्वरेण रायचेतोहारिणी यतस्ततो
 जातिवैकल्यविशेषोक्तिः ।
 न कुप्यति न बध्नाति काञ्चिद्वा कर्णोत्पलेन सा ।
 न ताडयति रायेन्द्रं भयं नयति कामिनी ॥२२९॥
 कोपनादिक्रियावैकल्येऽपि भयप्रापणमिति क्रियावैकल्यविशेष-
 कथनम् ।
 सरससुरतयुद्धे विक्रमो नास्ति यस्याः ।
 परमनिशितशस्त्रं नास्ति खेटादिकं च ।
 मदनतुमुलयुद्धाघीशकादम्बनाथ
 जयति सरसविद्या सा सती चित्रमेतत् ॥२३०॥
 शस्त्रखेटादिद्रव्यवैकल्येऽपि जयति विशेषकथनमिति द्रव्यवैकल्य-
 विशेषोक्तिः ।

न सन्मित्र न सत्सगो न सम्यग्घमदेशना ।

तथापि पुण्यवान् रायो वसत्यानन्दसागरे ॥२३१॥

सन्मित्रादिसुखकारणवैकल्येऽपि पुण्यवानिति हेतुर्गर्भितविशेषणाद्धेतु-
विशेषोक्तिः ।

अन्येऽपि भेदा सन्त्येव विशेषोक्तेर्विदावरै ।

अभ्यूह्या^१ शास्त्रमार्गेण विस्तरौ न मयोच्यते ॥२३२॥

यत्र किञ्चित्समीकतुं युज्यते केनचित् क्रिया ।

एककाला समामो हि तुल्ययोगाभिधो भवेत् ॥२३३॥

स्तवन निन्दन चापि समाश्रित्य द्विभेदभाक् ।

अलकारस्तुल्ययोग कथ्यते विदुषा वरै ॥२३४॥

भरतस्सगरश्चक्री श्रेणिको बङ्गभूपति ।

श्रोतृमुख्यपद प्राप्ता भवन्ति भुवनत्रये ॥२३५॥

स्तुतिपरतुल्ययोगितालकार ।

चिन्तामणि कामधेनु रायबङ्ग. सुरद्रुमः ।

परोपकारे निरता इति रूढिर्जगत्त्रये ॥२३६॥

अयमपि पूर्व एव ।

रायबङ्गक्षितिशस्य शत्रुजातश्रिय क्षणम् ।

सुरचापश्रियो विद्युन्मालालक्षा न चासते ॥२३७॥

निन्दापरतुल्ययोगितालकार ।

यत्र प्ररूप्यमाणेन वस्तुना तत्परत्वत ।

इष्टार्थो गम्यते तद्धिपर्यायोक्त सता मतम् ॥२३८॥

अस्मद्वैरिपुर त्वया बलपते श्रीमद्विधेय भृश

^१कादम्बाम्बुचिन्दरे निगदतीत्येव बलाधीश्वर ।

१ कादम्बाम्बुनि चिन्दरे

नानावज्रभुजङ्गकाञ्चनशिवामन्दारराजामरी—

स्त्रीबिम्बाकर्मयं ह्यदान्मदनकान्तावासमप्यद्भुतम् ॥२३९॥

पर्यायोक्तालकार ।

गुणानां कर्मणा यत्र सहभाव प्ररूप्यते ।

सहोक्तिनामक प्राहुस्तमलकारमुत्तमा ॥२४०॥

रायस्य कीर्त्या धवल शत्रुकान्ताजन सह ।

विक्रमेणारुण सार्धं तत्कान्ताजनलोचनम् ॥२४१॥

गुणसहभावकथनसहोक्ति ।

श्रीरायक्षितिनाथ विक्रमगुणे नामा सदा वर्धते

वीरश्रीशरदभ्रकीर्तिवनिता त्यागेन साक तव ।

लक्ष्मी पुण्यपदेन साकममलज्ञानेन वाणी समं

कोशेनाहवदक्षदण्डनिकर संग्रामरङ्गोद्भुर ॥२४२॥

क्रियासहभावकथनसहोक्ति । अथवा

कार्यकारणयोर्यत्र वक्तुं युगपदुद्भव ।

कार्योत्पादनसामर्थ्यं ता सहोक्तिं प्रचक्षते ॥२४३॥

पुण्येन सार्धमाघत्ते धर्मं यानेन दिग्जयम् ।

त्यागेन कीर्तिं शौर्येण वीरलक्ष्मी च रायराट् ॥२४४॥

कार्यकारणसहजन्मकथनसहोक्ति ।

यत्राघत्ते पुनर्दत्त्वा किञ्चित्किञ्चित् समं न वा ।

तामाहुर्निपुणा लोके परिवृत्तिमलक्रियाम् ॥२४५॥

सुरलोके पुरी दत्त्वा रिरिपुभ्यः स्त्रीविराजिताम् ।

नरलोके पुरी हत्वा तादृशी भाति रायराट् ॥२४६॥

सदृशार्थपरिवृत्ति ।

१ विक्रमेणारुण सार्धं..... जनलोचनम् २ रिहम्य ।

ज्ञान स्वीकुरु बड्गाराज विनय दत्त्वा गुरुभ्य सदा
 पुष्यं स्वीकुरु देववस्तुनिकरं दत्त्वा गुरुभ्य. सदा ।
 वैरिभ्य सुरलोकसौख्यपदवी दत्त्वा तदीय महा—
 देश स्वीकुरु युद्धरङ्गरमणीप्राणेश भूमीश भो ॥२४७॥
 विसदृशार्थपरिवृत्ति ।

कार्यमारभमाणेन दैवात्तत्साधनागम ।

लभ्यते यत्र तत्प्राहुरलंकार समाहितम् ॥२४८॥

कोप निवारयितुमिष्टनिजाङ्गनाया

प्रारब्धवान् नृपतिकुञ्जरबड्गनाथ ।

तावत् सुधाशुरुदयाद्रिमुपैति पूर्णो

रोरीति कोकिलगणो भगणश्चकास्ति ॥२४९॥

एकवाक्यमनेकार्थं यत्र श्लिष्टं तदुच्यते ।

अभिन्नपदमुद्दिष्टं श्लिष्टं भिन्नपद द्विधा ॥२५०॥

देवोऽयमम्बरोद्भासी लोकाह्लाद कविस्तुत ।

मरुत्सहायो राजाग्रे भासते भुवनोत्तम. ॥२५१॥

अभिन्नपदश्लिष्टम् ।

सदैव बलसपन्नो न दीनो जडसग्रह ।

कविरम्यो रायबड्गो राजते मन्दरागत ॥२५२॥

भिन्नपदश्लिष्टम् ।

व्यतिरेकाद्यलकारे श्लेषा प्राग् दर्शिता. परे ।

अन्ये केचन दृश्यन्ते श्लेषास्तत्कथन यथा ॥२५३॥

आह्लादयन्ति^१ राय च सानुरागा प्रजा प्रजा. ।

^३ साकूत रक्षिता वृद्धा करमार्दवलालिता ॥२५४॥

१ देवोऽयमम्बरोद्भासि । लोकाह्लादी कविस्तुत २. रायस्य

३ साकूत ।

प्रजा जना. प्रजा. पुत्रा आह्लादयन्तीति क्रियंका अभिन्नश्लेषः ।

रायबङ्गो न दृश्यन्ते क्षिण्यन्ते च पयोधराः ।

उत्तुङ्गा अम्बराधारा मुक्ताफलविभूषिताः ॥२५५॥

अविरुद्धक्रियाश्लेष ।

वियोगं प्राप्य रायेन्द्रो मोदते हृदये परम् ।

नारीजनस्तु क्लिश्नाति पयोधरसहायक ॥२५६॥

विरुद्धक्रियाश्लेष ।

श्रीरामराज्ये काठिन्य तरुणीस्तनमण्डले ।

अपवादो निरोद्धयेषु काव्येषु न परत्र च ॥२५७॥

सन्नियमश्लेषः ।

मन्दानिला लुष्टयन्ति दिव्योद्यानेषु सौरभम् ।

अथवा चञ्चरीकाश्च चोरयन्ति हि लोलुपाः ॥२५८॥

नियमनिषेधश्लेषः ।

रायबङ्ग समुद्रश्च भूभृदास्पदगौरव ।

गम्भीरो भूरिरत्नाढ्यो लावण्याढ्यो विराजते ॥२५९॥

अविरुद्धश्लेष ।

पयोधरविलोलोज्यं नृसिंहश्चातकायते ।

सन्मानसगतो बङ्गो राजहसायते सदा ॥२६०॥

उपमाश्लेष ।

अर्थयोर्यत्र समयोरन्वयः क्रिययाजनि ।

तन्निदर्शनमित्युक्त सदसल्लक्ष्मगोचरम् ॥२६१॥

सुजनसुरकुजोऽयं रायबङ्गक्षितीशो

वितरति फलमिष्टं सर्वलोकाय लोके ।

गगनतलनिवासी कौमुदीकामिनीशो

विलसदमृतदीप्ति किं न लोकाय घत्ते ॥२६२॥

प्रशस्तनिदर्शनालकार ।

अन्याय इति शब्द च न वादयति बडगराट् ।

अपशब्द स्वशिष्यौघ न वादयति शाब्दिक ॥२६३॥

अप्रशस्तनिदर्शनालकार ।

निन्दाव्याजेन यत्रार्थं स्तौति कचिच्च सा मता ।

व्याजस्तुतिर्गुणा एव दोषा इव चकासते ॥२६४॥

वक्षोरङ्गे महाश्रीर्वरमुखकमले शारदा वीरलक्ष्मी-

दोर्दण्डे रायबङ्गक्षितिप तव महाशासनाद्वर्ततेऽसौ ।

आज्ञामुल्लङ्घ्य लोके तव विशदयशस्कामिनी बम्भ्रमीति

राज्ये सेय तवाज्ञा सुकविजननुता तत्कथ जाघटीति ॥२६५॥

व्याजस्तुत्यलंकार ।

देवताघ्निसस्तुत्या कीर्ति सशोभते कथम् ।

सागरान्ता धरा कान्ता कथ जीवति राय ते ॥२६६॥

श्लिष्टव्याजस्तुति ।

व्याजस्तुतिविशेषाणामपर्यन्त प्रविस्तर ।

बुद्धिशालिभिरभ्युह्यस्तस्मान्नास्माभिरुच्यते ॥२६७॥

इष्टाना यत्र वस्तूनामाशसनमिद मतम् (? मिदच यत्) ।

तामाशिषमलकार वदन्ति कविकुञ्जरा ॥२६८॥

सुरेन्द्रपूज्य परिपूर्णसौख्य

सुज्ञानसाम्राज्यमहापदस्थ ।

जिनेन्द्रचन्द्रो वरदानरुद्र

श्रीबङ्गराजस्य मुदेऽस्तु देव ॥२६९॥

आशीरलकार ।

नरेन्द्रकन्या परिपूर्णरूपा
 शृङ्गारदुग्धाम्बुधिकौमुदी सा ।
 तुङ्गस्तनी मङ्गलहारभूषा
 श्रीबङ्गराजस्य मुदेऽस्तु कान्ता ॥२७०॥

इयमप्याशी ।

यत्रानेकपदार्थानामत्युत्कृष्टैतरात्मनाम् ।
 एकत्र कथनं जातं स समुच्चय उच्यते ॥२७१॥
 श्रीशान्तिनाथदेवोऽयं स्याद्वादोऽमोघलाञ्छनो
 धर्मश्रीरायबङ्गोऽत्र लोके रत्नानि त्रीणि वै ।
 कादम्बवार्धचन्द्रो लक्ष्मी कीर्त्यङ्गना गिरा देवी
 जयकामिनी च पूज्या चत्वारि हि दिव्यवस्तूनि ॥२७२॥

अत्युत्कृष्टसमुच्चयालकार ।

रायबङ्गक्षितीशस्य सन्ति शत्रुपुरेऽध्वमी ।
 जम्बुका धूकभल्लूका तिन्दुका युगपत्रका ॥२७३॥

अत्यपकृष्टसमुच्चय ।

यत्र कोऽपि जनो वक्ति प्रीतियुक्तमिवाप्रियम् ।
 अलकृतिं ता वक्रोक्तिं प्राहुः काव्यविशारदाः ॥२७४॥
 श्रीबङ्गेश्वर साधु साधु भवतः शृङ्गारशोभा परा
 मुक्ताजालमलकृतं परिलसद्वज्रं च संभूषितम् ।
 श्रीचन्द्राभरण महोदयकरं सर्वं त्वया संवृत
 वस्त्रेणेति निजालयागतपति सा^३ वक्ति कान्ता गिरा ॥२७५॥
 वक्रोक्त्यलंकार ।

१ श्रीशान्तिनाथ देव स्याद्वादामोघलाञ्छनो धर्मश्री रायबङ्गभूपो
 रत्नानि श्रेणि लोकेऽत्र (?) । २. कोपाध्वजो ३. वानक्ति ।

प्रसिद्धसाधनाद्यत्र कालत्रितयगोचरम् ।

साध्यं निश्चीयते प्राज्ञैरनुमान तदुच्यते ॥२७६॥

मानसोल्लासन दृष्टि शीला साधवगम्य सा (?) ।

कान्ता श्रीरायबङ्गस्य शृङ्गाराब्धौ निमज्जति ॥२७७॥

बर्तमानसाध्यगोचरानुमानालकार ।

श्रीरायभूपदिव्याङ्गे मुक्ताजाल विलोक्य सा ।

कान्ता कुप्यति बध्नाति काञ्चीदाम्ना निजेश्वरम् ॥२७८॥

अतीतसाध्यगोचरानुमानालकार

कादम्बवार्धिवन्द्रस्य वाग्विलासादनागतम् ।

फलं निश्चित्य सा कान्ता निजेशेऽगात् परा मुदम् ॥२७९॥

भाविन्नाध्यगोचरानुमानालकार ।

यत्रासभाव्यसबन्धो वस्तुनोऽन्येन केनचित् ।

अनौचित्येन सप्रोक्तो विषमं त प्रचक्षते ॥२८०॥

कादम्बनाथ करुणारसदुग्धवार्धि

क्वायं त्वदीयहृदये सकलप्रजासु ।

रुद्रावतार धर धीर रिपुव्रजेषु

क्वाय चकास्ति च रसो वररौद्रनामा ॥२८१॥

उत्कृष्टतान्तर यत्र प्रकृतस्योपलक्षणम् ।

कथ्यतेऽवसर सोऽयमलकारो विबुध्यताम् ॥२८२॥

येन जिष्णुरपि ध्वस्य शत्रुर्भीमोऽपि सङ्गरे ।

तस्य श्रीरायबङ्गस्य दोर्दण्डेऽभूज्जयाङ्गना ॥२८३॥

अवसरालकार ।

यत्र साम्य प्रतीयेत वस्तुन प्रतिवस्तुना ।

इवादीनामप्रयोगे प्रतिवस्तूपमा हि सा ॥२८४॥

१. शृङ्गारा निमज्जति

कादम्बवंशे विस्तीर्णे स एको रायभूपतिः ।

अब्धौ सकलरत्नानि कौस्तुभाख्या भजन्तु किम् ॥२८५॥

प्रतिवस्तूपमा । अस्या उपमायामन्तर्भाव इति केचित् ।

यत्सारं निश्चित यत्र तस्मात्सार ततोऽपि तत् ।

सार निश्चीयते व्याप्त्या सा सारालकृतिर्मता ॥२८६॥

कादम्बाब्धौ सुसारो वरगुणनिलयो रायबङ्गामृताशु-

स्तस्मिन् सारा विवेकामलतरविलसत्कौमुदी लोकपूज्या ।

तस्या सतापहृत्त्व सुकविजननुत सारमस्मिन् सुसारं

सत्सौख्यापादकत्ववरविशदयशोदायकत्व हि तस्मिन् ॥२८७॥

सारालकार ।

अन्यस्य वस्तुनोऽन्यस्मिन् साम्याद्वस्तुविनिश्चयः ।

स्वकारणवशाज्जातो यत्र स भ्रान्तिमान् भवेत् ॥२८८॥

सध्याराग वनार्गिर्न गिरितटगतघातुव्रज बालभानु

कूपारार्गिर्न नभोऽन्तर्गतदिवि जनधीरन्तनीरेजषण्डम् ।

दृष्ट्वा च बेभीयतेऽसौ सकलरिपुगर्णस्त्वत्प्रताप सुतापो

मत्वेति श्रीविलासास्पदविजयरमानर्तकीनृत्यरङ्ग ॥२८९॥

भ्रान्तिमदलंकार । मोहोपमेति केचित् ।

एतद्वेदमिद वेति चलद्बुद्धिस्तु सशय ।

हेतुना निश्चयो यत्र निश्चयान्तोऽपि सत्कृत ॥२९०॥

शत्रुक्षयज्ञापकधूमकेतु किं वैरिचन्द्रस्य विधुतुद किम् ।

त्वद्धस्तखड्ग कवयो विलोक्य सशेरते वीर नृसिंहभूप ॥२९१॥

सशयालकार ।

किं किं कराब्जनिपतन्मधुपावली भो

वीरश्रिय. कविनुतावररोमराजि ।

१ दृष्ट्वा भीयते २. स्वप्रतापो सुतापो ।

त्वद्धस्तखङ्गमवलोक्य कवीश्वराणा
बुद्धि स्फुरत्यमलबोधपराक्रमेश ॥२९२॥

अयमपि संशयः ।

चिन्तामणि किं न जडत्वमस्य
किं वा मुरागो नहि पुष्पजालम् ।
विवेकवाक्प्रौढियुतेन तेन
त्यागेन कादम्बनृप प्रबुद्ध ॥२९३॥

निश्चयान्तसशयालकार । सशय सशयोपमा, निश्चयान्तो
निर्णयोपमेति केचित् ।

पूर्वपूर्वो विशिष्टोऽर्थो रच्यते तद्विशेषणम् ।
उत्तरोत्तरतन्निष्ठ यत्र सैकावली मता ॥२९४॥
श्रीराय क्षितिपालको वरमहालक्ष्मीपति सा रमा
वीरश्रीसहचारिणीजयवधू कीर्त्यङ्गना भूषिता ।
सा कीर्तिर्वरशारदासहचरी सा शारदामञ्जुल-
श्रीतुण्डाब्जनिवासिनीनुतमुख सपूर्णसीमोपमम् ॥२९५॥

एकावल्यलकार ।

अप्रयुज्यविशेष्य तद्विशेषणपदानि वै ।
साकूतानि प्रयुज्यन्ते यस्मिन् परिकर स हि ॥२९६॥
कुवलयकरसार श्रीचकोरीप्रमोद
नववररमपीयूपाश्रय सत्कलेशम् ।
कविदिविजसहाय सर्वलोकप्रिय क
वदति निजसमान रायबङ्गप्रवीण ॥२९७॥

परिकरालकार ।

वस्तुसाधारणं यत्र किञ्चिदेकत्र रूप्यते ।
निषिध्यते तदन्यत्र परिसख्या हि सा मता ॥२९८॥

कादम्बनाथसाम्राज्ये काठिन्य करपीडनम् ।
कान्तापयोधरद्वन्द्वे तत्केल्यामेव ताडनम् ॥२९९॥

परिसंख्यालंकार ।

याचन चुम्बनादाने बन्धन दुष्टनायके ।
वियोग पञ्जरे भीति. क्रुद्धकान्तावलोकनात् ॥३००॥
इयमपि परिसंख्या । सनियमश्लेष इति केचित् ।
प्रश्नोत्तरद्वय यत्र व्यक्तं गूढ च बोधयम् ।
उच्येते तमलंकारमाह प्रश्नोत्तराह्वयम् ॥३०१॥
प्रजाना पालन कस्मान्निवृत्ति पीडनस्य च ।
रायबङ्गमहीपालाद्याम्भोनिधिचन्दिरात् ॥३०२॥

व्यक्तप्रश्नोत्तरालंकार ।

पयोनिधिसमानस्य रायबङ्गमहीपते ।
क्रमाब्जभासुरस्याप्यमेयस्य श्री क्व वर्तते ॥३०३॥
व्यक्तप्रश्नगूढोत्तरालंकार । अस्मिन् श्लोके पादचतुष्टयस्य प्रथमा-
क्षरचतुष्टये गृहीते पराक्रमे इति भवति तदेव गूढोत्तरम् ।
तव सबन्धि निष्काम तव सबोधन कथम् ।
कीदृशस्त्व पुन कीदृग्मानवेश प्रपूजित ॥३०४॥

व्यक्तगूढोत्तरप्रश्नोत्तरालंकार ।

अलङ्कृतीनामुक्तानामुपमादिभिदात्मनाम् ।
मध्ये द्वयोस्त्रयाद्रीना सगो यत्र स सकर ॥३०५॥
श्रीवङ्गराज वदन तव पूर्णचन्द्र
पादद्वय कमलयुग्ममिव प्रभाति ।
नाथ भुजोऽरिनृपवृन्दमुधाशुराह
कीर्ति करोति सकलाम्बुधिलङ्घनं च ॥ ३०६ ॥
संकरालंकार ।

सकोशमपि नीरेजं सदण्डमपि निर्जितम् ।

रायबङ्गमुखाब्जेन निष्पुष्यस्य तथा भवेत् ॥३०७॥

अयमपि सकर ।

अलकृतीना सर्वासा गुणमुख्यव्यवस्थया ।

समकक्षतया यस्य सकरस्य द्वयी गति ॥३०८॥

अलकृतीना संगृह्यान्तविस्तरमप्यमूमम् ।

एष मार्गं प्रमाणेन दर्शितोऽस्माभिरुत्तम ॥३०९॥

नानालकाररत्ने विशदतररसोदारपिण्डीरडिण्डे

नानाभावोरुरङ्गतररलतमरसच्चारुक्ल्लोलमाले ।

शय्यापाकोरुवृत्तिप्रसरबहुगुणोदात्तरीत्यभ्रजाले

काव्यक्षीराम्बुराशौ जयतु तव महाकीर्तिचन्द्रो नृसिंह ॥३१०॥

इति परमजिनेन्द्रवदनचन्द्रिविनिर्मतस्याद्वाचन्द्रिकाचकोरविजयकीर्ति-

मुनीन्द्रचरणान्जचञ्चरीकविजयवर्णिविरचिते श्रीबीरनरसिंह-

कामिरायबङ्गनरेन्द्रशरदिन्दुसनिभकीर्तिप्रकाशके शृङ्गारा-

र्णवचन्द्रिकानाम्नि अलकारसंग्रहे अलकारनिर्णयो

नाम नवम परिच्छेद ।

अलकारनिर्णयो नाम नवम परिच्छेद ।



दोषगुणनिर्णयो नाम

दशम. परिच्छेद.

निर्दोषघर्मं पुण्याय यथा शक्तस्तथा भुवि ।

निर्दोषकाव्य सत्कीर्त्ये वज्र्यदोषानतो ब्रुवे ॥१॥

असमर्थं श्रुतिकटुं निरर्थकमवाचकम् ।

च्युतसस्कृत्यप्रयुक्तं ग्राम्यमश्लीलकं परम् ॥२॥

नेयार्थं क्लिष्टसदिग्धे ततोऽप्यनुचितार्थकम् ।

अचिमृष्टविधेयाशं विरुद्धमतिकृतथा ॥३॥

अप्रतीतमिति प्रोक्ता पददोषा विशारदै ।

प्रथमं लक्षणं तेषां कथ्यते क्रमतो मया ॥४॥

अङ्गीकृतार्थं यद्वक्तुं न शक्तं तत्पदं तदा ।

असमर्थमिति प्रोक्तं तदुदाहरणं यथा ॥५॥

ग्रामं भवति चैत्रोऽसौ नगरं हन्ति माघव ।

दिव्यन्ति साधवो मोक्षं दयतेऽरिं धराधिप ॥६॥

अत्र भवति—हन्ति—दिव्यन्ति—पदानां गत्यर्थसंभवेऽपि गत्यर्थे सामर्थ्या-

भावात् पदत्रयसमर्थम् । दयते—पदं हिंसार्थे सामर्थ्याभावादसमर्थम् ।

कठिनाक्षरसदर्थं पदं श्रुतिकटुदितम् ।

सूष्ट्रा विनिमित्ते वात्र राष्ट्रे भाति पुरं सदा ॥७॥

अत्र सूष्ट्रा राष्ट्रे इति पदद्वयं श्रुतिकटुं ।

पादपूरणमात्रार्थं यत् पदं प्रतिपाद्यते ।

तन्निरर्थकमित्युक्तं गुणदोषविशारदै ॥८॥

भाति वै नगर चात्र खलु शक्रपुरोपमम् ।
तदेव तु हि गन्तव्य त्वया सुखफलार्थिना ॥१॥

अत्र च वै 'खलु तु हि पदानि स्वार्थानि (न) सन्तीति निरर्थकानि ।

स्वाभिप्रेत न वक्त्यर्थं प्रयुक्तमपि यत्पदम् ।
तदवाचकमित्युक्त काव्यसारविचक्षणैः ॥१०॥

रणे जयाङ्गना चैत्रो भटत्वाल्लभते पराम् ।
शूरत्वादिति हेत्वर्थे भटत्व पदमीरितम् ॥११॥

अत्र भटसामान्यवाचक भटपद शूरवाचक न भवतीत्यवाचकं
ज्ञेयम् ।

शास्त्रोक्तलक्षण नास्ति यत्र तच्च्युतसंस्कृति ।
भाते विधुर्नभोभागे नगरं तिष्ठते नर ॥१२॥

अत्र भाते तिष्ठते पदयोरात्मनेपदस्य लक्षण नास्ति । नगरमित्य-
धिकरणे द्वितीयाया लक्षण नास्ति ।

प्रसिद्धमपि यच्छास्त्रे कविभिर्न प्रयुज्यते ।
तदप्रयुक्तं ज्ञातव्यं पदं दुष्टं विशारदैः ॥१३॥

अणिमादिगुणोपेतो दैवतस्तं 'निरूपयन् ।
कविभिर्देवत शब्द पुल्लिङ्गे न प्रयुज्यते ॥१४॥

यत्पदं नोचितं यत्र तत्र तद्ग्राम्यमुच्यते ।
ग्रामवर्तिजनश्लाघ्यं निपुर्णनिन्द्यते यथा ॥१५॥

अधरं भक्षयित्वासौ तरुण्या ^३स्तनमण्डलम् ।
हस्तेनावृत्य तद्देहे शैते कश्चिन्नरो मुदा ॥१६॥

अत्र अधरभक्षणं हस्तेन स्तनावरणं कान्ताशरीरशयनं ग्राम्यवचनम् ।

१ खलु मही पदाशी स्वार्थानि न । २ निरूपि सन् । ३ कुण्डलम् ।

पदेन येनासभ्यार्थो ज्ञाप्यते तत्पदं मतम् ।
अश्लोल त्रिविध व्रीडामङ्गलार्थजुगुप्सकम् ॥१७॥

तरुण्या मदनावासो राजते सुखदायक ।
मदनावासशब्दोऽय लज्जोत्पत्तिविधायक ॥१८॥

कामिनीवदन पद्म विनाशयति लीलया ।
विनाशयति नीरेजमेतत्पदममङ्गलम् ॥१९॥

रतौ तरुण्या नाथस्य क्षुते सति विशङ्क्यते ।
क्षुते सति पद चैतज्जुगुप्साजन्मकारणम् ॥२०॥

स्वसकेतितमर्थं यत्पद मूलार्थसूचने ।
सामर्थ्यरहित वक्ति तन्नेयार्थं विदुर्बुधा ॥२१॥

अनन्तरानुजो धर्मपुत्रस्य परिपातु व ।
रुद्रकान्तेक्षुवाटेषु प्रभाते रोरवित्यलम् ॥२२॥

अत्र धर्मपुत्रस्य अनन्तरानुज भीमः । भीमो नाम महेश्वर इति
स्वसकेत । रुद्रकान्ता शिवा । शिवा नाम जम्बुका इति स्वसकेतः ।

अर्थं व्यवहित वक्ति तत्पद क्लिष्टमुच्यते ।
विनतानन्दनारोहकान्तापुत्रो जयत्यलम् ॥२३॥

विनतानन्दनो गरुड तदारोहको विष्णु तत्कान्ता लक्ष्मी तत्पुत्रो
मन्मथ इति व्यवहितार्थद्योतकम् ।

अर्थं विवक्षित तस्मादन्यार्थमपि यत्पदम् ।
प्रकाशयति सदिग्ध तदुक्त दोषवेदिभि ॥२४॥
देवो नभसि यातीति सदिग्ध पदमुच्यते ।
निर्जरो वा घनो वेति सशयस्य समुद्भवात् ॥२५॥

पदस्य यस्यानुचितो गम्यतेऽर्थस्तदुच्यते ।
बुधैरनुचितार्थं हि तस्योदाहरणं यथा ॥२६॥

पुरुषो राजते राजसभाया वरधीवर ।
 प्रकाशयत्यनुचित कैवर्तं धीवर पदम् ॥२७॥
 प्राधान्येन न वर्तेत स्वार्थे यत्पदभीरितम् ।
 अविमृष्टविधेयाश तत्पद प्रणिगद्यते ॥२८॥
 मार्गो याति नर कश्चिन्महाशूरो घनाधिप ।
 घनाधिपमहाशूरपदे प्राधान्यतो न हि ॥२९॥

सङ्ग्रामदानप्रस्तावे महाशूरघनाधिपपदद्वयेन सार्थपरामर्शस्य
 प्राधान्येन सभवान्मार्गो तदसभवात् अविमृष्टविधेयाशत्वम् ।

इष्टार्थादन्यदुष्टार्थप्रतीतिजनकक्षमम् ।
 विरुद्धमतिकृच्चोक्त तत्पद विदुषा वरे ॥३०॥
 सुरतरवे लोकोऽय गुरवे तुभ्य सदा नमति ।
 जननी या भवत सा परोपकारे सदा क्रमते ॥३१॥

‘सुरतरवे’ ‘जननी या भवत’ इति पदद्वय विरुद्धार्थप्रतीतिकरम् ।
 सुरतरवे सुरत-रवे ‘जननी या भवत’ ‘जननी याभवत’ ।

स्वकीयशास्त्रसिद्धार्थं यत्पद वक्ति तत्पदम् ।
 अप्रतीतमिति प्रोक्त कथ्यते तदुदाहृति ॥३२॥
 त्रैलोक्य वर्तते जीवसुखदु खविधायकम् ।
 सृष्टिसंहारकरणे बहुधानकमुच्यते ॥३३॥

साख्यागमे त्रैलोक्यमिति बहुधानकमिति पदद्वय प्रधानतत्त्ववाचक
 तद् आगमप्रसिद्धत्वाद् अप्रतीतम् ।

उक्त्वा पदगतदोषान् पदैकदेशेषु पूर्वकथितास्तान् ।
 दोषान् वदामि शृणु भो राय नृपाधीश भो यथायोगम् ॥३४॥
 सरसत्वान्मृदुत्वाच्च सुभगत्वाच्च सुन्दरी ।
 जगन्मोहकरी चित्र कामेनापि विलोक्यते ॥३५॥

अत्र पदैकदेशस्य त्वत्प्रत्ययस्य बाहुल्यात् सरसत्वादिपदत्रयं श्रुतिकट्टच्यते ।

आलिङ्ग्य कामुक सौख्य प्रमदाया पयोधरान् ।

यात्योदन सूपकार पचतेऽल ' धरेशिने ॥३६॥

अत्र पयोधरान् इति एककान्ताया बहुवचन पदैकदेशरूपं निरर्थकम् । पचते इत्यात्मनेपदमपि पदैकदेशरूपं निरर्थकं फलेशत्वाभावात् ।

मा समानो न यातीति साधरामृतसौष्ठवाम् ।

अत्र मासमृतेत्येतत्पदाशोऽल्लीलमुच्यते ॥३७॥

अत्र मासेति जुगुप्साकरमश्लील मृतेत्यमङ्गलमश्लीलम् ।

देवतया पूज्योऽयं नरनाथो धर्मसाररसशाली ।

देवेति तथेति तथा देवतया वेति भवति सदेह ॥३८॥

अत्र पदैकदेशरूपं सदिग्धम् ।

त्यागवा कुर्वते युद्धं गीर्वाणैस्सर्वदा समम् ।

लक्षको दानशब्दस्य त्यागशब्देन वाचक ॥३९॥

अत्र त्यागवा इति पदैकदेशस्त्यागशब्दं दानशब्दगमको भवति । न पुनरसुरार्थवाचक ।

पददोषं निरूप्याह वाक्यदोषं ब्रुवेऽधुना ।

शृणु राय महीनाथ काव्यगोष्ठिविशारद ॥४०॥

उपहृतलुप्तविसर्गं हृतवृत्तं गर्भितं तथाकीर्णम् ।

न्यूनपदं कथितपदं प्रमिद्धिहृतमक्रमं विसर्गि तथा ॥४१॥

प्रतिकूलवर्णमपदस्थितपदमस्थानगतसमासं च ।

अधिकपदं रसरहितं समाप्तपुनरात्तमनभिहितवाच्यम् ॥४२॥

अप्रस्तुतार्थममतपरार्थमर्धन्तरैकवाचि तथा ।

भग्नप्रक्रममभवन्मतयोगपतत्प्रकर्षयोर्युगलम् ॥४३॥

असकृद्याति विसर्गो यत्रोकार विलोप्यभाव वा ।

उपहतलुप्तविसर्गं तद्वाक्यं दुष्टमिति वदन्ति बुधा ॥४४॥

नरो वरो हितोऽर्च्यो वा गम्भीरो दुर्लभो भुवि ।

अवरा अहिता ज्ञानहीना जीवा गृहे गृहे ॥४५॥

असकृद्विसर्गो पूर्वार्धे उकाररूपं याति लोपमपरार्धे ।

यत्र छन्दोभङ्गो वर्णानां हीनतादितस्त्व वा ।

गुरुलघुवर्णस्थाने लघुगुरु तद्वाक्यमेव हतवृत्तम् ॥४६॥

कान्तेन नारीसमाना विदग्धा बिलोकितापि प्रमद न याति ।

स्मरेण कान्ता हरिणनयना निपीडयतेऽसौ 'कुसुमोरबाण' ॥४७॥

अत्र पूर्वार्धे समानेत्यत्र माकारस्थाने लघुना भवितव्यम् । अपरार्धे

हरिणनयनेत्यत्र णकारस्थाने यकारस्थाने च गुरुणा भवितव्यम् ।

गुरुलघोर्व्यत्याद्वतवृत्तम् ।

मृगाङ्ककरा शीता^२ हरन्ति तमसा ततिम् ।

वने चूतकिसलयानि वसन्ते भान्ति सर्वत ॥४८॥

अत्र पूर्वार्धे प्रथमपादे न्यूनाक्षरत्व तृतीयपादेऽधिकाक्षरत्व हतवृत्त
तत ।

आरामस्यामलदेशे नारी सकलभूरिगुणरम्या ।

सक्रीडय पुन क्रीडति सरोवरे विदलदखिलकमलाद्भ्ये ॥४९॥

अत्र प्रथमपादे गणत्रयमतिक्रम्य यति छन्दोभङ्ग । द्वितीयपादे

नारीति पादमध्ये यति छन्दोभङ्ग । ततो हतवृत्तम् ।

१. कुसुमोरबाण । २. शिता ।

छन्दःशास्त्रे यतिः प्रोक्तो यादृशस्तादृशस्य वै ।
यतेरभावो विद्वद्भिः छन्दोभङ्गी निरूप्यते ॥५०॥
अन्यवाक्यस्य मध्येऽस्ति यत्रान्यद्वाक्यमीरितम् ।
तद्वाक्यं गर्भितं प्राहुः काव्यालकारकोविदाः ॥५१॥
शृगाररसवारांशौ निमग्नाङ्गी विलोकते ।
रमते प्रमदारामे तरुणी निजनायकम् ॥५२॥

अत्र रमते प्रमदारामे इति वाक्यं वाक्यान्तरमध्यगतमिति गर्भितम् ।

बहुवाक्यानां यत्र प्रविशन्ति पदानि मिश्रितानि मिथः ।
तत् सकीर्णं कथितं क्लिष्टं पुनरेकपदवाक्यवृत्तिः ॥५३॥
कुप्यति रमणो नारी नमति रुषं च चरणपङ्कजे त्यजति ।
परिरम्य मोदतेऽसौ चुम्बति मज्जति वराणवे सौख्ये ॥५४॥

अत्र नारी कुप्यति रमणश्चरणपङ्कजे नमति । नारी रुषं त्यजति रमणं परिरम्य चुम्बति वरासौ मोदते रमणं सौख्येऽर्णवे मज्जतीति बहूनां वाक्यानां पदानि परस्परमिश्रितानि इति सकीर्णम् । एक-वाक्यगतपदानि मिथो मिश्रितानि चेत् क्लिष्टं वाक्यं ज्ञेयम् ।

पदेन येन यद्वाक्यं विना न्यूनं भवेद्यदा ।
तदन्यूनपदमित्युक्तं तस्य लक्ष्यं प्ररूप्यते ॥५५॥
रतिक्रियार्थी रमणी जगन्मोहनरूपिणीम् ।
विलोक्यालिङ्ग्य सौख्याब्धौ निमज्जति मनोहरे ॥५६॥

अत्र नायक इति विशेष्यपदाभावाद् न्यूनपदवाक्यम् ।

पदस्य कथनं यत्र कथितस्य पुनर्यदा ।
तदा सद्भिस्तु कथितपदं तद्वाक्यमुच्यते ॥५७॥
स्मरकेलिविनोदेन कान्ता कान्तस्य ताडनम् ।
करोति केलिनीलाब्जकर्णपूरेण चारुणा ॥५८॥

अत्र केलीति प्रागुक्त पुनरपि केलीति कथितं ततः कथितपदं वाक्यम् ।

प्रसिद्धिरहित यत्र पदमुक्त तदुच्यते ।

प्रसिद्धिहतमेतद्धि वाक्यं दुष्ट विचक्षणैः ॥५९॥

पद्माकरे सरोजाक्षी केका हसा विकुर्वते ।

ता निशम्य मम स्वान्त विभेति मदनातुरम् ॥६०॥

अत्र केकाशब्दो मयूरवाण्या प्रसिद्धो न हसध्वनौ इति प्रसिद्धिहतं वाक्यम् ।

लोकशास्त्रक्रमो नास्ति यत्र तद्वाक्यमक्रमम् ।

तदुदाहरणं वक्ष्ये तद्वाक्यप्रतिपत्तये ॥६१॥

उद्यानकैरवाम्भोजवृद्धीनां हेतवो मताः ।

दिवाकरवसन्ताब्जा मोदयन्तु सता मनः ॥ ६२ ॥

अत्र कमलारामकैरवाणा वृद्धिहेतुत्वे भानुवसन्तचन्द्राणां वाक्ये व्यत्ययकरणादिक्रमं वाक्यम् ।

योगसौगतसाख्यानां मते देवाः प्ररूपिताः ।

कपिलेश्वरबुद्धास्तु क्षणिकेतरवादिनः ॥६३॥

अत्र स्पष्टमुदाहरणम् ।

यत्र वाक्ये विरूपत्वविश्लेषोऽश्लीलता तथा ।

कष्टतासंधिदोषास्यु विसंधि तदनुस्मृतम् ॥६४॥

वने आस्ते वरा नारी तद्दृष्टी अतिचञ्चले ।

तद्गूरु अधिकौ भातस्तज्जङ्घे अतिमोहने ॥६५॥

अत्र प्राप्तेऽपि संधौ सकृदविहिते सति, निषिद्धेऽपि संधौ तथैव असकृद्विहिते सति वैरूप्यदोषः, ततो विसंधि वाक्यम् ।

ईश आगत उदात्तसंपदा भूषितो^१ रमणि पश्य पश्य ते ।

एष ऊर्जितगुणस्तवाधुना कामसौख्यममितं करोत्यलम् ॥६६॥

अत्र निषिद्धे सन्धौ तथैवासकृद्विहिते सति विश्लेषो दोष । ततोऽपि विसन्धि वाक्यम् ।

सुभगेश निजं नारी विलोक्य परिरम्य चुम्बति प्रमदम् ।

अरुणामृत अमृताभ (अधरामृतममृताभं) पायं पायं रसाब्धि-

मग्नाभूत् ॥६७॥

अत्र सुभगेशमिति सुभगमीशं सुष्ठु भगेशमिति व्रीडाकरमश्लीलं सधिकरण ततोऽपि विसधि वाक्यम् ।

गुर्वालोकनपात्रचार्वमलं पूर्वपूर्वसौन्दर्यम् ।

ऊर्वंङ्गजगजनिगडं चित्रमिद भाति कामिनीरूपम् ॥६८॥

अत्र बहुकृत्व श्लिष्टतया संघेर्दोष कष्टत्वमुच्यते । ततोऽपि विसधि वाक्यम् ।

रसानुकूलवर्णातिरिक्त यद्वाक्यमुच्यते ।

तदुक्त प्रतिकूलादिवर्णं काव्यविचक्षणं ॥६९॥

शठेन दृढमालिङ्ग्य नाथेन कठिनस्तनौ ।

कम्बुकण्ठ्या मन खेद विभिद्याप्त स्थिर सुखम् ॥७०॥

अत्र शृंगाररसे कठिनाना ठादिवर्णानामनुकूलता नास्तीति प्रतिकूलवर्णं वाक्यम् ।

यत्रास्थाने पद वृत्त तद्वाक्य दीर्घदर्शिभिः ।

अस्थानस्थपद प्रोक्त तस्य लक्ष्य निरूप्यते ॥७१॥

तन्वङ्गीतनुमालोक्य सोत्कण्ठो नायको मुदम् ।

परमा याति लावण्यवार्धिचन्द्रकलोपमाम् ॥७२॥

अत्र लावण्येत्यादिपदं सोत्कण्ठ इत्यादिपदेभ्यः पूर्वं वाच्यम् ।
तस्मादस्थानस्थपदवाक्यम् ।

यत्र वाक्ये समासोऽयमस्थाने वर्तते यदा ।

अस्थानस्थसमास तद्वाक्यमुक्त तदा बुधे ॥७३॥

अस्मिन् लोके तमो व्याप्तमिति क्रोधादिवारुण ।

भाति पूर्वाचलाग्रस्थतीव्रलोहितमङ्गल ॥७४॥

अत्र रौद्ररसस्थाने समासबाहुल्यस्यौजोगुणस्य प्रस्तुतत्वात्समास-
कर्तव्यः । अस्थाने कविवचने न कर्तव्यः समासः । आदित्यस्य
रौद्ररसाभावाद् अस्थानस्थसमासं वाक्यम् ।

विनापि पदेन येनेदं वाक्यं सपूर्णता गतम् ।

तेनाधिकपदमुक्तं वाक्यं दुष्टं विचक्षणं ॥७५॥

चन्द्राकारसमा कीर्तिर्भानुबिम्बसम परम् ।

तेजो विभाति भूपस्य पूर्वपुण्यविपाकत ॥७६॥

अत्र आकारपदेन बिम्बपदेन च विनापि वाक्यं पूर्णं भवतीत्यधिकपदं
वाक्यम् ।

यत्र वाक्ये रसो नास्ति तद्वाक्यं रसविच्युतम् ।

उच्यते कविभिस्तस्य दृष्टान्तं कथ्यतेऽधुना ॥७७॥

द्विहस्त एककण्ठोऽयं सपादयुगलो नरः ।

डित्थस्य पुत्रो वस्त्रेण युक्तो ग्रामाय गच्छति ॥७८॥

अत्र वाक्यस्य नीरसत्वाज्जातिरप्यलकारो नास्तीति रसच्युतं
वाक्यम् ।

समाप्तपुनरात् तद्यस्य यत्समाप्य पुनः स्मृतम् ।

वाक्यमुक्तं तथा तस्य लक्ष्यरूपं निगद्यते ॥७९॥

स्मरेषुश्चन्द्रिका तस्या लीलालोलावलोकनम् ।

तनोतु भवतः प्रीतिं नीलनीरेजमालिका ॥८०॥

अत्र पादत्रये वाक्यं समाप्तं कृत्वा नीलनीरेजमालिकेति पुनः
स्वीकृतमिति समाप्तपुनरात्त वाक्यम् ।

वक्तव्यमेव न प्रोक्तं यत्र वाक्ये तदुच्यते ।

अनुक्तवाच्यमेतद्धि वाक्यं दुष्टं विशारदे. ॥८१॥

लीलावलोकनात्तन्वि तव मञ्जीवसपदा ।

जायते किं निमित्तं त्वं मा न पश्यसि सेवकम् ॥८२॥

अत्र तव लीलावलोकनादेवेत्येवकारपदं नियमेन वाच्यं तत्पदं
नोक्तमित्यनभिहितवाच्यं वाक्यम् ।

अप्रस्तुतस्तुतिं यत्र वक्ति तद्वाक्यमुत्तमं ।

अप्रस्तुतार्थमित्युक्तं तस्य लक्ष्यं प्रदर्शयते ॥८३॥

दीर्घदेहो रक्तवर्णो विशालाक्षो घनाधिप ।

रम्भास्तम्भसमानोरु कवीशो वर्तते भुवि ॥८४॥

अत्र दीर्घदेहादिविशेषणं कवीन्द्रस्य श्लाघनोपयोगि न स्यादित्य-
प्रस्तुतार्थं वाक्यम् ।

प्रस्तुतस्य विरुद्धार्थं कथ्यते यत्र तन्मतम् ।

असमतपदार्थं तु वाक्यं तत्त्वविदा सताम् ॥८५॥

रणादम्बरमालोक्य बहुभीतो भटाग्रणी ।

जित्वा शत्रुं समालिङ्ग्य वीरलक्ष्मीं प्रमोदते ॥८६॥

अत्र प्रस्तुतस्य भयानकरसस्य विरुद्धो वीररस कथित इत्यमतपदार्थ-
वाक्यम् ।

अपराधगतं यत्र वाचकं त्वेकमुच्यते ।

तद्वाक्यमुक्तमर्थान्तरैकवाचकमीदृशम् ॥८७॥

स्मराग्निपीडिते^१ तन्वि स्मर^२ क्रूरोऽस्मर श्रय ।

तस्मादिति प्रिया दूत्या वाणी प्रोक्ता हिता मिता ॥८८॥

१. °पीडिता । २. क्रूरोरम ।

अत्र स्मरः क्रूर^१ तस्मादमर श्रय इति पूर्वार्धे हेतुर्वक्तव्य । अपरार्धे कथनादर्थान्तरैकवाचक वाक्यम् ।

प्रारब्धरूपभङ्गो यत्र स्याद् वाक्यमुच्यते सद्भिः ।
 भग्नप्रकममेतत्प्रकृतिप्रत्ययविभेदतोऽनेकम् ॥८९॥
 केलीसदन याते नाथे रमणी च रागत प्राप्ता ।
 यात इति प्रारब्धे प्राप्तेति प्रकृतिरूपभङ्ग स्यात् ॥९०॥
 ईक्षण हसन नारी चुम्बित कर्तुमिच्छति ।
 ईक्षण हसन चोक्त्वा चुम्बित परिकथ्यते ॥९१॥

अत्र प्रत्ययभङ्ग ।

यत्र वाक्ये गुणीभूत योग न लभते पदम् ।
 समासेऽन्यै पदैर्मुख्यै फलाय तदुदीरितम् ॥९२॥
 अभवन्मतयोग तु वाक्य काव्यार्थकोविदै ।
 अस्य वाक्यस्य रूपाभिव्यक्तये लक्ष्यमुच्यते ॥९३॥
 तन्वी सरो मुख पद्म लावण्य निर्मल जलम् ।
 अक्षीन्दीवररम्येऽस्मिन् यथेष्ट क्रीड नायक ॥९४॥

अत्र अक्षीन्दीवरशब्द समासगत प्राधान्याभावाद्गौणो यतस्त-
 तोऽभवन्मतयोग वाक्यम् ।

यत्र पूर्वं प्रकृष्टं स्यादुत्तर हीनमुच्यते ।
 पतत्प्रकर्षनामैतद्वाक्यमुक्त कवीश्वरै ॥९५॥
 भूपालोऽयं मृगेन्द्रो भूगन्धसिन्धुरराट् भुवि ।
 अत्र प्रकृष्टं पञ्चास्याद् हीनं स गज उच्यते ॥९६॥
 वाक्यदोषान् निरूप्याहमर्थदोषान्बुवेऽधुना ।
 तेषामुद्देशेन तावत् क्रियते क्रमतो यथा ॥९७॥

१ तस्माद् रम । २ पञ्चास्यादीन सामञ्ज उच्यते ।

अपुष्टकष्टौ सदिग्धव्याहृतौ ग्राम्यदुष्क्रमौ ।

व्यर्थीकृतौ^१ निर्निमित्तपुनरुक्तश्च कथ्यते ॥९८॥

अश्लील साकाङ्क्ष प्रसिद्धिविद्याविरुद्धौ च ।

उक्तविरुद्धसनियमानियमा विशेषाविशेषपरिवृत्ता ॥९९॥

विध्यनुवादविवृत्तस्त्यक्तपुन स्वीकृतौ तथा प्रोक्तौ ।

सहचरभिन्नोऽर्थानामेते दोषा प्रकीर्त्यन्ते ॥१००॥

भेदपोषकभावेन यत्र नास्ति प्रयोजनम् ।

उक्तभेदकवृन्दस्य सोऽपुष्टोऽर्थो निरूप्यते ॥१०१॥

रूपसौन्दर्यसपन्नो रणभूमौ भटाग्रणी ।

पञ्चास्यविक्रमोपेतो वैरिवर्गं जयत्यसौ ॥१०२॥

अत्र रूपसौन्दर्यसपन्न इति विशेषण वैरिजय न पुष्णाति । अतोऽपुष्ट-
त्वदोष ।

दु खेन जायते योऽर्थं शब्दसकोचत स तु ।

कष्टोऽर्थं कथ्यते सद्भिस्तस्य दृष्टान्त उच्यते ॥१०३॥

अब्जेब्जभ्रमण चित्र कालदोषात् प्रजायते ।

अत्र कृच्छ्रेण गम्यत्वात् कष्टार्थं इति कथ्यते ॥१०४॥

द्विधा प्रतीयते योऽर्थो निश्चयाभावकारणात् ।

सोऽर्थं सदिग्ध इत्युक्तस्तत्त्वनिश्चयकोविदै ॥१०५॥

पयोधरा नभोवृत्ता द्रष्टव्या किं सुयोषिताम् ।

उतोरस्स्थलवृत्तास्ते विदग्धा वदतोत्तरम् ॥१०६॥

अत्र—सस्यार्थी वा कामुको वा वक्ता चेन्निश्चयो भवेत् ।

योऽर्थो न श्लाघ्यते तस्य प्रकर्षं पुनरुच्यते ॥१०७॥

स्वभावमधुरा लभ्या बह्वश्चन्द्रिकादय ।

रमणीचन्द्रिका स्वान्तचकोराह्लादनाय मे ॥१०८॥

अत्र पूर्वं चन्द्रिकादिकमनादृत्य पुनश्चन्द्रिका श्लाघ्यते ।

निर्लज्जपुरुषेणार्थो श्रव्य सद्भिः प्ररूपित ।

यः स ग्राम्यो मतो लोके तदुदाहृतिरुच्यते ॥१०९॥

ऊरूमूल सुधाकल्पं शृंगाररसमन्दिरम् ।

कान्ताजनाना चुम्बित्वा कृतार्थोऽय भवाम्यहम् ॥११०॥

अत्र ग्राम्यत्व प्रसिद्धम् ।

क्रमेण वाच्यौ यावर्थौ तयोर्व्यत्ययकीर्तनम् ।

दुष्क्रम कथित सद्भिः रस्योदाहरण यथा ॥१११॥

जगत्तमो हृत सर्व किरणेन स चाशुना (सुधाशुना) ।

दिवाकरेण वा स्वीर्यैरशुभि पाटवावहै ॥११२॥

अत्र पक्षान्तरस्वीकारे दिवाकरेणेति पूर्वं वक्तव्यम् ।

श्लाघ्यस्य वस्तुजातस्य वैयर्थ्यप्रतिपादनम् ।

व्यर्थीकृत इति ज्ञेय (ज्ञेय) तस्य लक्ष्य प्रकाशयते ॥११३॥

जगत्तापहरश्चन्द्रस्तमोहारी दिवाकर ।

आह्लादिनी सुधा चात किमत किमत फलम् ॥११४॥

अत्र श्लाघ्याना चन्द्रादीना व्यर्थत्वादाह्लादन व्यर्थीकृत उच्यते ।

हेतोर्विना कार्यमुक्त यत्र सोऽर्थोऽभिऽधीयते ।

अहेतुक पुन तस्य दृष्टान्तकथन यथा ॥११५॥

यो वातदेही तेनेद हिमाम्बुहरिचन्दनम् ।

त्यक्त विलोक्य चैत्रोऽपि तादृश वस्तु मुञ्चति ॥११६॥

अत्र हरिचन्दनादिवस्तुत्यागे वातदेहिनो वात कारणम् । चैत्रस्यापि

तत्यागे हेतुर्नास्ति ।

१ सुधात किं किमत ।

एकार्थं कथ्यते द्विश्चेत् पुनरुक्तो भवेदसौ ।
 दृष्टान्तकथनेनास्य रूपव्यक्तिर्भविष्यति ॥११७॥
 सति चन्द्रे महाज्योत्स्ने मत्सतापो निवर्तते ।
 सुधाशौ सति लोकस्य प्रमोदोऽपि प्रजायते ॥११८॥
 अत्र चन्द्रे सुधाशावित्यर्थस्य पौनरुक्त्यम् ।
 मुख्यार्थादन्य एवार्थोऽश्लीलो लज्जाकरो बुधे ।
 कथ्यते तस्य रूपाभिव्यक्तिर्दृष्टान्तदर्शनात् ॥११९॥
 कान्ता भगवती या भवती सा जगदुत्तमा ।
 गौण प्रतीयते कश्चिदर्थो लज्जाकरोऽत्र हि ॥१२०॥ *
 उक्तेन येन बाह्यार्थोऽपेक्ष्यते सोऽर्थ उच्यते ।
 साकाङ्क्ष इति विद्विद्भिरस्योदाहरण यथा ॥१२१॥
 बुभुक्षितोऽह त्व दाता दयालुर्धनवानपि ।
 मद्भोजन कारय त्वमिति बाह्यार्थकाङ्क्षणम् ॥१२२॥
 जनैरविदितो योऽर्थ स प्रसिद्धिविरोधवान् ।
 उच्यते कविभिस्तस्य दृष्टान्तोऽपि प्रकाशयते ॥१२३॥
 कान्ताकटाक्षवज्रास्त्रप्रहारेण मनोभव ।
 कामुकाचलसदोह चूर्णयामास लीलया ॥१२४॥
 अत्र कामस्य वज्रायुधमप्रसिद्ध लौकैरविदितम् ।
 आगमादिमहाशास्त्रबाधितो योऽर्थ उच्यते ।
 विद्याविरुद्ध स प्रोक्तस्तस्य लक्ष्य प्रकीर्त्यते ॥१२५॥
 रात्रौ गृहीत्वा कोदण्ड चर्यां कृत्वा मुनीश्वर ।
 पर्यटत्यत्र कान्तारे लीलया व्याघ्रभीकरे ॥१२६॥
 अत्र मुने कोदण्डस्वीकारादिक शास्त्रविरुद्धम् ।

उक्तार्थयोर्द्वयोर्यत्र पूर्वापरविरोधनम् ।
 स स्यादुक्तविरुद्धोऽयमर्थस्तस्य निदर्शनम् ॥१२७॥
 चन्द्रोऽय ज्योत्स्नया लोकनेत्रानन्द करोत्यलम् ।
 अन्धकारोऽप्यय सर्वं व्याप्नोति भुवनत्रयम् ॥१२८॥
 अत्र युगपच्चन्द्रोदयतिमिरव्याप्तिकथन पूर्वापरविरुद्धम् ।
 अर्थस्यानुचितस्यैव नियमो योऽपि कथ्यते ।
 उक्त सनियम सोऽपि कवितागुणशालिभि ॥१२९॥
 अहो रमण पश्य त्व तामेव सुरमञ्जरीम् ।
 मा वा शरण्यरहिता त्वत्सदायत्तजीविकाम् ॥१३०॥
 अत्र तामेवेति सुरमञ्जरीदर्शने नियमो न युक्त मावेति पक्षान्तरस्य
 स्वीकारात् ।
 वाच्यस्य नियमस्यात्र यस्त्याग स च कथ्यते ।
 बुधैरनियमस्तस्य व्यक्तिर्दृष्टान्ततो भवेत् ॥१३१॥
 समस्तलोकसव्याप्तगाढान्धतमस परम् ।
 एकेन भानुना सर्वं निरस्त प्रतिबन्धकम् ॥१३२॥
 अत्र एकेनैवेति नियमस्य वक्तव्यस्य त्यागादनियम ।
 वक्तु योग्ये विशेषेऽस्मिन् सामान्यकथन बुधे ।
 विशेषपरिवृत्तोऽय कथ्यते काव्यकोविदै ॥१३३॥
 दानेन तर्पिताशेषलोकोऽय पुरुषोत्तम ।
 समस्तभुवनस्तुत्यो कलौ वृक्षायते सदा ॥१३४॥
 अत्र कल्पवृक्षायते इति वृक्षविशेषे वक्तव्ये वृक्षायते इति वृक्षसामान्य-
 कथनम् । विशेषपरिवृत्त विशेषव्यत्यय इत्यर्थ ।
 सामान्ये यत्र वक्तव्ये विशेष परिकीर्त्यते ।
 सामान्यव्यत्यय सोऽय कथ्यते कविपुङ्गवै ॥१३५॥
 कान्तानीरेजबाणेन पीड्यते विरहोदये ।
 पुष्पसामान्यतो नाम स्मरस्य न विशेषत ॥१३६॥

अत्र पुष्पविशेषतो नाम भदनस्य नास्ति ।

विध्यनुवादी कथितौ व्यत्ययरूपेण यत्र वर्तते ।

विध्यनुवादविवृतः स उच्यते बुद्धिशालिविबुधजनै ॥१३७॥

गतो य पुरुषो मोक्ष स धर्मं चरति ध्रुवम् ।

अत्र विध्यनुवादी तौ व्यत्ययेन निरूपितौ ॥१३८॥

वक्तुमिष्टोऽर्थो विधिस्तस्य पुन कथनमनुवाद । तयोर्व्यत्ययकथनं
विध्यनुवादविवृत । यो धर्मं चरति स्म इति किञ्चि स मोक्ष गत
इत्यनुवाद इति व्यत्यय ।

अर्थो यत्र त्यक्तस्तस्यादानं मुहु कृतं सोऽपि ।

त्यक्तपुन स्वीकृत इति निगद्यते बुद्धिशालिविबुधेन ॥१३९॥

विरक्तो याति पत्नी या मन्यते य तृणाय स ।

विषयार्थसुखाम्भोधौ निमज्जति रसोदयात् ॥१४०॥

अत्र विरक्त इत्यादिना परिग्रहं त्यक्त्वा विषयसुखाम्भोधौ
मज्जतीति वाक्येन पुनराधत्ते ।

यत्रोत्कृष्टेन कथनं निकृष्टस्य समं स च ।

भिन्ना सहचरैरुक्तस्तस्य लक्ष्यं प्रकाशयते ॥१४१॥

आरामे तरवो भान्ति काका अपि चकासति ।

कोकिला राजकीराश्च राजहंसा मधुव्रता ॥१४२॥

अत्र उत्कृष्टेभ्यस्तत्कोकिलादिभ्यः काका भिन्ना इति सहचरभिन्नः ।

पदवाक्यार्थदोषास्ते गुणीभावं क्वचित् क्वचित् ।

प्रयान्ति तेषां दृष्टान्तं कथ्यतेऽस्माभिरीदृशः ॥१४३॥

घटते ढौकते प्साति पठति श्लाघतेऽटति ।

एधते ध्वनति स्नाति भूपतिभूषयत्यलम् ॥१४४॥

१. इति ।

८

उदाहरणकाव्ये वाक्यमेतादृश विद्यमान श्रुतिकट्वपि न
दुष्टमिति ज्ञेयम् ।

द्वयर्थश्रयर्थैकाक्षरप्रहेलिकाद्वयक्षरादिकाद्येषु ।

असमर्थक्लिष्टाद्या दोषा उक्ता गुणा मता सद्भिः ॥१४५॥

विना सर्वं मया दृष्टं सर्वज्ञो नियते तत (?) ।

सर्वज्ञेनापि पीडयेत परम सुखमदभुतम् ॥१४६॥

अत्र प्रहेलिकायामत्यन्तव्यवधानेन ज्ञायमानोऽप्यर्थः । कष्ट इति
दोषोऽपि गुणो ज्ञेयः ।

कपिध्वजादपेतोऽयं भुवने पतितो नरः ।

क्षितौ स्थितोऽपि देहं स्व विहाय लघुतो गतः ॥१४७॥

इयमपि प्रहेलिका । कपिध्वजशब्दो नेयार्थोऽपि न दुष्यति भुवनक्षि-
तिगन्दावसमर्थावपि स्वार्थे दुष्टौ न भवतः । अन्यदप्युदाहरण-
मभ्यूह्यम् ।

'बल्यरि कल्यरि पातु गुर्वङ्गो वै नृपोऽपि च ।

अनङ्गानिव शक्तो हि खलतीति युतस्तुवः ॥१४८॥

छान्दमभाषिते च वै गन्दादिर्निरर्थकोऽपि न दुष्यति । बल्यरिः
कल्यरि गुर्वङ्ग इति सधिदूषणमपि न ।

चटकारोहणं स्त्रीणां तुरङ्गमविघट्टनम् ।

मर्कटालिङ्गनं चित्तमोहसमददायकम् ॥१४९॥

अत्र लज्जाकरमश्लीलमपि कामशास्त्रे (न) दूषितं लक्षणशास्त्रत्वात् ।

मूत्रस्थानं भगो गुह्यं पुरीषस्थानमुच्यते ।

स्त्रीणां तत्र नरो ज्ञानी को विघत्ते मनोमुदम् ॥१५०॥

१ In an identical context Alamkāra-sangraha (VI
82. 83) reads बल्यरि-कृतवरो etc.

अत्र जुगुप्साकरमश्लीलमपि वैराग्यवचने न दूषणम् ।

सवञ्च काञ्चनमयं शिवागारं सराजकम् ।

मन्दिर नृपतद्वैरिवर्गयोः सममोडितम् ॥१५१॥

अत्र सदिग्धमपि न दूषण द्व्यर्थबन्धत्वात् ।

शल्यत्रय च सज्ञा च दण्डत्रयमनीडितम् ।

परित्यज्य मुनीशोऽय सन्मार्गं राजते भृशम् ॥१५२॥

अत्र शल्यादि पदमप्रतीतमपि प्रवचनप्रसंगे न दुष्टम् ।

आलिङ्ग्यमाना रमणी निजेशेन मुद गता ।

अह ऋङ्गारवाराशावित्युक्त्वा विरराम सा ॥१५३॥

अत्र मज्जामीति पदेन न्यूनमपि परवशत्वे दूषण न ।

तत्त्व जिनमुनीशोऽय न जानाति न किं तु वै ।

जानानीत्येव तथाप्येतन्न गृह्णाति न मुञ्चति ॥१५४॥

अत्र जानातीत्यधिकमपि पदमन्ययोगव्यावृत्तये गुणो भवति ।

विषादाद्भुतमुत्क्रोधदैर्घ्यनिश्चयगोचरे ।

प्रसादने दयाया च द्विस्त्रिरुक्तं न दुष्यति ॥१५५॥

पश्य पश्य न मा धूर्तं गच्छ गच्छ निजास्पदम् ।

त्वया ज्ञातापराधेन फल किं धिग् धिगीदृशम् ॥१५६॥

अत्र विषादवचने पुनरुक्तता गुण ।

अहो कीर्तिरहो सूक्तिरहो मूर्तिरहो दया ।

अहो बुद्धिरहो सिद्धि कामिरायमहीपते ॥१५७॥

अत्र विस्मये पौनरुक्त्य गुणः । अहोपदाना बहूनाम् ।

मदनस्य पताकेयं स्मरमन्त्राधिदेवता ।

आलिङ्ग्यालिङ्ग्य चुम्बित्वा चुम्बित्वा भुज्यता त्वया ॥१५८॥

अत्र हर्षवचने द्विरुक्तिर्भूषणम् ।

रतिक्रियाया कोपेन कामिन्या निजनायक ।

वामपादेन सताड्य सताड्याबध्य दण्डित ॥१५९॥

अत्र सकोपवचने द्विरुक्तिर्भूषणमेव ।

रक्ष मा रक्ष मा कान्ते न ताड्य न ताड्य ।

मुञ्च मुञ्च प्रकोप त्व त्वत्पदं शरणं मम ॥१६०॥

अत्र दैन्यवचने पुनरुक्तता न दूषणम् ।

रायवज्जेनं सदानं क्रियते क्रियते मुदा ।

प्रजापि परिवारोऽपि रक्ष्यते रक्ष्यते सदा ॥१६१॥

अत्रार्थनिश्चये पुनरुक्तत्वं न दूषणम् ।

प्रसन्नोऽस्तु प्रसन्नोऽस्तु रायवज्ज भवानहो ।

अनाथक प्रजावृन्द रक्ष रक्ष दयापर ॥१६२॥

अत्र प्रसादनेऽनुकम्पाया पौनरुक्त्य न दूषणम् ।

रायवज्जमहीनाथ साक्षादिक्षुशरासनम् ।

तस्य पुण्य न सामान्य दृष्ट्वा चित्रीयते जन ॥१६३॥

अत्र तस्य पुण्य न सामान्यमिति वाक्य गर्भितनामधेय दुष्टमपि
विस्मये गुण एव ।

नेद सरो वल्लिकुण्ड प्रवालशयनं न च ।

अङ्गारराशिरघुना भृश दहति मा द्वयम् ॥१६४॥

सरसो वल्लिकुण्डत्वकथन पल्लवशय्याया अङ्गारराशित्ववचनं च
प्रत्यक्षविरुद्धमपि विरहे न दूषणम् ।

चन्द्रं राहुर्न बाधेत जगदानन्दकारणम् ।

रोहिण्या सह तस्यास्तु मङ्गलादपि मङ्गलम् ॥१६५॥

अत्र श्लोककथितार्थसमोऽन्योऽर्थः । प्रसिद्धकारणेन नेयोऽप्यनुशये
गुणो न दूषणम् ।

पुण्डरीक गता चन्द्रश्री 'रात्रौ न स्थिराजनि ।

धावत्यलक्ष्मी राघस्य कीर्तिं श्रित्वा सदातनी ॥१६६॥

पुण्डरीकस्य दिवसे धोतनाच्चन्द्रस्य रात्रौ भासनादिति हेतोरकथ-
नेऽपि प्रसिद्धत्वाभिर्हेतुवचन गुण ।

हसनस्यापि कीर्तेश्च शुभ्रत्वं कोपरागयो ।

रक्तत्व चन्द्रिकापान चकोराणा निरूप्यते ॥१६७॥

पापापकीर्तिनभसा कृष्णत्वं परिकीर्त्यति ।

मन्दानिलेन्दुकूर्पूरजीमूतारामसतते ॥१६७॥

हरिचन्दनकासारमुक्ताहारकलापिनाम् ।

कीरकोकिल^१माल्याना भृङ्गादीना वियोगिषु ॥१६९॥

दाहकत्व कटाक्षस्य वेधकत्व विलोचनै ।

रूपस्य पान नद्यब्धयोर्नीरिजादि प्रवर्तनम् ॥१७०॥

कुसुमाना मनोजस्य शरचापत्वकीर्तनम् ।

भ्रमराणा धनुर्ज्यात्व मनसो बाणलक्ष्यताम् ॥१७१॥

सुहृद्वसन्त कीरोऽश्व प्रतिहारश्च कोकिल ।

काव्येष्वित्यादिकथनमसदेव प्रसिद्धिभाक् ॥१७२॥

शिर शेखरकर्णावतसश्रवणकुण्डले ।

सानिध्यादिप्रकाशार्थं मस्तकादिनिरूपणम् ॥१७३॥

रत्नयोगनिवृत्त्यर्थं मुक्ताहारपद मतम् ।

रूढिप्रकाशनायेदं धनुर्ज्याबद्धमीरितम् ॥१७४॥

हर्षमालेति सुरभिपुष्पनिर्माणसिद्धये ।

कलभे करिशब्दस्य प्रयोगो व्यक्तिबोधक ॥१७५॥

१ तावान् स्थिराजनि २ माल्यासा ।

इत्यादीना सतामेव ज्ञेय काव्ये समर्थनम् ।
कविताप्रौढिविज्ञानशालिभिः कविकुञ्जरैः ॥१७६॥

रसाभासोऽपि भावानामाभास परिकीर्त्यते ।
स्वशब्दग्रहण कष्टकल्पन च निरूपितम् ॥१७७॥

अव्यक्तिरनुभावस्य विभावस्य च कीर्तिता ।
प्रतिकूलविभावादिग्रहण दीप्तता मुहु ॥१७८॥

अकाण्डे प्रथम च्छेदोऽप्यङ्गस्याप्यतिविस्तृति ।
अङ्गिनोऽनुसन्धान प्रकृतीना विपर्यय ॥१७९॥

अनङ्गस्याभिधान च रसदोषा प्रकीर्तिता ।
एतेषा रसदोषाणा लक्ष्यलक्षणमुच्यते ॥१८०॥

अनौचित्य रसस्य स्याद् रसाभासो द्विधा स्मृत ।
अनेकविषयोऽप्येकविषयोऽनुचितोऽपि च ॥१८१॥

रूपातिशयसपन्ना काचिन्नारी विलोकते ।
चैत्र मुरूपमप्यन्य मैत्र श्रीदत्तनामकम् ॥१८२॥

अत्र रसस्य नानापुरुषविषयत्वाद्रसाभास ।
माता मे पितर दृष्ट्वा मोहोल्लासेन चुम्बनम् ।
कृत्वा कामसुखाम्भोधौ निमज्जति कलान्विता ॥१८३॥

अत्र मानापितृविषयस्य रसस्यानुचितत्वाद् रसाभास ।
भावानौचित्यमत्रोक्तो रसाभासो विशारदै ।
भावाभासाभिधानोऽसौ रसाभासोऽनुमन्यताम् ॥१८४॥

इय रतिसमा नारी त्रैलोक्येऽप्यतिदुर्लभा ।
अस्या स्वीकरणोपायं करिष्यामि कदाचन ॥१८५॥

स्वस्मिन्निच्छारहिताया इतरनार्याश्चिन्तनमनौचित्यनिन्दितम् ।

१. अव्याप्ति २. आकाशे ।

इतरेषा रसाना च भावानामपि गम्यताम् ।
 आभासत्व महाकाव्यरसभावविचक्षणैः ॥१८६॥
 रसे भावे प्रतीते च तद्वाचकपदग्रह ।
 स्वशब्दग्रहणं सद्भिरसदोषं प्रकीर्त्यते ॥१८७॥
 इमा मदनमञ्जूषा रूपसौन्दर्यशोभिनीम् ।
 शृङ्गाररससंपृक्ता पश्य पश्य युवैश्वर ॥१८८॥

रसे सुप्रतीतेऽपि शृङ्गाररसपदग्रहण दुष्टम् ।

मुग्धा सलज्जा सभया सस्वेदा विमुखा रते ।
 निजेशालिङ्गिता केलिसदन प्रवर्तते ॥१८९॥

मुग्धाया यौवनारम्भाग्निजेशालिङ्गने लज्जादीना स्वयमेव सभ-
 वाल्लज्जादिपदैर्व्यभिचारिभावाना ग्रहण दुष्टम् ।

वामपादप्रहारेण कामिन्या हस्तताडनात् ।
 नायकस्य रतौ चित्ते कोऽप्युत्साहं प्रवर्तते ॥१९०॥

उत्साहस्य स्थायिभावस्य प्रतीतस्य स्वशब्देन ग्रहण दुष्टम् ।

न रज्यति विमोहेन मही लिखति कामिनी ।
 रोदनं च विधत्तेऽसौ किं कर्तव्यं मया सखे ॥१९१॥

विप्रलम्भे रसे रोदनाद्यनुभावाना कल्पना कष्टकल्पना । करुणरसेऽपि
 सभवात् ।

अहो तन्वि विलोकस्व मा त्वत्पादशरण्यकम् ।
 यौवनादिरनित्योऽत्र ततो भोग्य महासुखम् ॥१९२॥

शान्तरसे यौवनादेरनित्यत्वकथनम भाव शृङ्गाररसे तस्यानुभावस्य
 प्रतिकूलस्य ग्रहण प्रतिकूलग्रहं कथ्यते ।

रसदोषप्रपञ्चाना काव्येष्वेव निदर्शनम् ।
 अतस्तत्रैव दृष्टान्ता ज्ञेया रसविशारदैः ॥१९३॥

निर्दोषे सगुणे काव्ये सालकारे रसान्विते ।
 रायबङ्ग महीनाथ तव कीर्तिः प्रवर्तताम् ॥१९५॥
 स्याद्वादधर्मपरमामृतदत्तचित्तं
 सर्वोपकारिजिननाथपदाब्जभृङ्ग ।
 कादम्बवशजलराशिसुधामयूख
 श्रीरायबङ्गनृपतिर्जगतीह जीयात् ॥१९५॥
 गर्वारूढविपक्षदक्षबलसघाताद्भुताडम्बरा-
 मन्दोद्गर्जनघोरनीरदमहासदोहृद्भङ्गानिल ।
 प्रोद्यद्भ्रानुमयूखजालविपिनव्रातानलज्वालसा-
 दृश्योद्भ्रामुरवीरविक्रमगुणस्ते रायवङ्गोद्भव ॥१९६॥
 कीर्तिस्ते विमला सदा वरगुणा वाणी जयश्रीपरा
 लक्ष्मी सर्वहिता सुख मुरसुख दान निधान महत् ।
 ज्ञान पीनमिद पराक्रमगुणस्तुङ्गो नय कोमलो-
 रूप कान्ततर जयन्तनिभ भो श्रीरायभूमीश्वर ॥१९७॥

इति परमजिनेन्द्रवदनचन्द्रविनिर्गतस्याद्वादचन्द्रिकाचकोरविजयकीर्तिमुनीन्द्र-
 चरणाब्जचञ्चरीकविजयवर्णविरचिते श्रीवीरनरसहकामिराजबङ्ग-
 नरेन्द्रशरदिन्दुसनिभकीर्तिप्रकाशके शृङ्गाराणवचन्द्रि-
 कानाम्नि अलकार-संग्रहे दोषगुणनिर्णयो नाम
 दशम परिच्छेद ॥१०॥ समाप्त ॥

स्वस्ति श्रीमत्सुरामुरवृन्दवन्दितपादपाथोजश्रीमन्नेमोश्वरसमुत्पत्तिपवित्रीकृत-
 गौतमगोत्रोत्पत्तिसमुद्भूतद्विजश्रीमद्दोर्बलिजिनदासशास्त्रिणामन्तेवासिना
 श्रवणबेलुगुलक्षेत्रनिवासि-विजयचन्द्रेण जैनक्षत्रियेण
 अय ग्रन्थ समार्ति नोत ।

Appendix—A

॥ परिशिष्टम्—१ ॥

अकाराद्यनुक्रमेण पद्यसूची

अकारणमहाबन्धु	९-१४९	अघर मसयित्वासी	१०-१६
अकारादिसकारान्ता	१-३६	अनङ्गस्याभिषानं च	१०-१८०
अङ्गीकृतार्थं यद् वस्तु	१०-५	अनन्तरानुजो घर्म	१०-२२
अचन्द्रा चन्द्रिका कीर्ति	९-१४८	अनुकूल शठो धृष्टो	४-१७
अणिमादिगुणोपेतो	१०-१४	अनुभाव. क्रमाच्चित्त	३-८९
अत कारणतोऽस्माभि	३-२	अनुभावस्तु बिक्षेपो	३-८२
अतिरक्त बालमानु	९-७९	अनुभावस्तु शृङ्गारे	३-३०
अतो गुणा प्रकीर्त्यन्ते	५-३	अनुभावोऽत्र वैवर्ण्यं	३-९६
अत्यन्तकर्कशार्थानां	७-५	अनुभावोऽस्य वक्त्रस्य	३-१०१
अत्यन्तकोमलाब्धानां	७-४	अनुगतस्य नाथस्य	४-१०७
अत्यन्तकोमलाब्धानि	७-१४	अनुरागवता केनचित्	४-५०
अदन्तयौवनादपन्त	४-६५	अनीवित्य रसस्य स्याद्	१०-१८१
अथ कुट्टमित चोक्त	४-११६	अन्तो नास्ति त्रिकल्पाना	९-८६
अथवा पदबन्धसो	५-१६	अन्यवस्तुगुणारोपो	५-२०
अथवा शक्तिनैपुण्य	२-२	अन्यवाक्यस्य मध्येऽस्ति	१०-५१
अदृष्ट्वा गौरव यत्र	३-५६	अन्यस्त्रोसङ्गमादीष्यर्था	४-१०६
अदोषः सगुणा रीति	१-२३	अन्यस्य वस्तुनोऽन्यस्मिन्	९-२८८
अद्भुताख्यरसो लोके	३-१२४	अन्याय इति शब्दं च	९-२६३
अद्भुतो रौद्रवैरी तु	३-१२९	अन्येऽपि भेदाः सन्त्येव	९-२३२

अन्ये विकल्पा द्रष्टव्या	९-१७४	अर्थयोर्यत्र समयो.	९-२६१
अपख्यातिफल दद्यात्	१-३८	अर्थस्य गोपन वाचा	९-१८६
अपरार्धगत यत्र	१०-८७	अर्थस्यानुचितस्यैव	१०-१२९
अपरित्यज्य महशार्थ	२-१७	अर्थानिमित्तमित्युक्ते	५-२७
अपुष्टकष्टौ सदिग्ध	१०-९८	अर्थो यत्र त्यक्त	१०-१३९
अपूर्वं भोज्यमप्यत्र	८-४	अलकृतीनामुक्ताना	९-३०५
अप्रनोतमिति प्रोक्ता	१०-४	अलकृतीना सगृह्या	९-३०९
अप्रयुज्य विशेष्य तद्	९-२९६	अलकृतीना सर्वासा	९-३०८
अप्रस्तुतस्तुति यत्र	१०-८३	अल्पप्राणाक्षराण्येव	५-१३
अप्रस्तुतार्थममत	१०-४३	अवर्णनीयवस्तूना	४-१३१
अञ्ज कूर्ममनङ्गराज	९-११८	अवहित्यालस्यवेगो	३-२२
अञ्जेऽञ्जभ्रमणं चित्र	१०-१०४	अव्याप्तिरनुभावस्य	१०-१७८
अञ्जोऽञ्ज राजतीत्युक्ते	२-३९	अशय्या कामकैली वा	८-१
अभवन्मनयोग तु	१०-९३	अश्लीलः साकाङ्क्षः	१०-९९
अभिधा लक्षणा गोणो	२-२६	अश्वगोगजवृक्षादि	२-११
अभिधाशक्तिमाश्रित्य	२-२७	अष्टादशमहाश्रेणी	१-१०
अमन्दानन्दसदोह	१-२	अष्टावेते गणा. प्रोक्ता	१-५४
अमावास्या तिथौ रात्रौ	९-४८	असकृच्छाति विसर्गो	१०-४४
अयं श्रीरायभूमिश	९-१८	असत्यगृहिते नाथे	४-९५
अयं श्रीरायबङ्गो न	९-१९६	असमर्थं श्रुतिकटु	१०-२
अय श्रीरायबङ्गो न	९-१९७	अस्मद्वैरिपुर त्वया बलपते	९-२३९
अयं श्रीरायबङ्गो न	९-१९८	अस्मिन् लाके तमो व्याप्त	१०-७४
अरुण पचिनीं तेजो	९-८०	अहो कोतिरहो सूक्ति	१०-१५७
अर्थं विवक्षित तस्मात्	१०-२४	अहो तन्वि विलोकस्त्र	१०-१९२
अर्थं व्यवहित वक्ति	१०-२३	अहो रमण पश्य त्व	१०-१३०
अर्थचाहस्वगमक	५-८	अहो वचनमित्यादिर्	३-१०६

आकारेणोङ्गतेनापि	९-१८०	आलम्ब्य शब्दमर्थस्य	८-६
आकाशे प्रथम छेदो	१०-१७९	आलम्ब्य शब्दमर्थस्य	८-७
आक्षेपातिशयो सूक्ष्म	९-९	आलिङ्गन कुचद्वन्द्व	३-३३
आगच्छन्त निजेश रत्नपति	४-१४६	आलिङ्गने चुम्बनादौ	४-१५३
आगतं नायक कोपात्	४-९१	आलिङ्गय कामुकः सौख्य	१०-३६
आगत्य रायनृपती	४-१५६	आलिङ्गय चुम्बति नृपे	४-१५४
आगमादिमहाशास्त्र	१०-१२५	आलिङ्गयमाना रमणौ	१०-१५३
आदिशब्देन च्छेदादि	२-४१	आलीजनेन नृपकुञ्जर	४-१५२
आयत्तकाननो गदच्छा	९-२१३	आशीर्लकृत वस्तु	१-३३
आयल्लके नृपतिकुञ्जर	३-५३	आमा स्त्रोणा सखौ दासौ	४-१११
आयात नायक श्रुत्वा	४-१४५	आस्थानमण्डपगते	९-१९४
आयासे सति कामिन्या	४-१३५	आस्य नापि ददानि	४-६२
आरक्तमालतीमाला	९-९४	आस्याङ्कलोकन प्रीति	३-३१
आरामकुञ्जरगत	४-१२८	आस्येन्दुनिर्गतमनोहर	४-१२२
आरामस्यामलदेशे	१०-४९	आह्लादनाय देवाना	९-५५
आरामे तरवो भाति	१०-१४२	आह्लादयन्ति रायच	९-२५४
आरामे रायबङ्गस्य	९-१९	इक्षुचापसमाकार.	९-९६
आगमे रायबङ्गस्य	९-१०४	इत पर रसाना तु	३-११५
आरोपादन्यधमस्य	५-२१	इतरस्माद्गसाञ्जनम्	३-१२७
आलम्बनविभावस्तु	३-११०	इतरेषा रसाना च	१०-१८६
आलम्बनविभावस्तू	३-८८	इति सप्तविधा प्रोक्ता	२-८
आलम्बनविभावोऽत्र	३-२६	इत्य नृपप्रार्थितन	१-२२
आलम्बनविभावोऽत्र	३-६५	इत्यादाना सतामेव	१०-१७६
आलम्बनविभावोऽत्र	३-१००	इन्दुना जयते पुण्ड	९-३६
आलम्बनविभावोऽस्य	३-८१	इन्दुमन्वेति कीर्तिस्ते	९-३०
आलम्ब्य यं रसोत्पत्तिः	३-१५	इन्दोरिव नृसिंहस्य	९-५३

इन्दी ज्योत्स्नेव दुग्धाभी	९-५१	उत्साहो दक्षता बुद्धिः	४-४
इन्द्रबोपस्य पतन	३-२९	उद्वापनास्तु स्याद्वाद	३-१११
इमा मदनमञ्जूषा	१०-१८८	उद्यानकैरवाभोज	१०-६२
इयं रतिसमा नारी	१०-१८५	उद्याने प्रीतियुक्ता	४-१६०
इष्टाना यत्र वस्तुना	९-२६८	उद्वेगो यदि वर्तेत	९-५९
इष्टानिष्टविनाशाप्ति	३-७५	उद्वेगो विदुषा यत्र	९-५७
इष्टार्थादिन्यदुष्टार्थ	१०-३०	उन्नतस्थानवृत्तोऽपि	९-१४१
ईक्षण हसन नारी	१०-९१	उपमालकृतावेते	९-६४
ईश आगत उदात्तमपदा	१०-६६	उपमालकृती पूर्व	९-२००
ईषत्कठिनवाच्याना	७-७	उपवनजलशेली	५-१७
ईषन्मृदुसंदर्भा	७-१५	उपहतलुप्तविसर्गं	१०-४१
उक्तरीतित्रययुता	६-१३	उपहासयुता या च	४-६८
उक्तस्य पुनरुक्ति स्यात्	९-८७	उल्लसन्ती त्वदोयेय	५-१४
उक्ताना यत्र वाच्याना	९-१८९	ऊरुमूलं सुधाकल्प	१०-११०
उक्तार्थयोर्द्वयोर्यत्र	१०-१२७	ऊर्जस्व्यप्रस्तुतस्तोत्रे	९-१०
उक्तार्थाना विरुद्धत्व	९-२०३	एकवाक्यमनेकार्थं	९-२५०
उक्तेन येन बाह्यार्थो	१०-१२१	एकस्या नायिकाया य	४-१८
उक्त्वा पदगतदोषान्	१०-३४	एकस्या रागशून्योऽपि	४-२०
उत्कर्षो यत्र गवस्य	९-२२१	एकाङ्गनालोलजित्त.	४-२४
उत्कृष्टान्तर यत्र	९-२८२	एकाथ कथयते द्विश्चेत्	१०-११७
उत्तम ध्वनिमिव्यक्त	१-३२	एतत्काव्यमुखे वर्ण	१-३४
उत्तम मध्यम प्रोक्त	१-३१	एतद्गुणविशिष्टोऽय	४-५
उत्तमो मध्यमो लोके	३-६९	एतद्वेदादिद वेति	९-२९०
उत्तुङ्गोऽपि न मेह.	९-२०५	एतादृश्या सभाम्भिर्दूर	९-६१
उत्पन्नयौवनोद्भूत	४-६३	एते दशगुणा प्रोक्ता	५-५
उत्पाहस्थायिभावोऽत्र	३-८६	एतेषा नायकाना तु	४-२९

एतेषा लक्षणं प्रीक्षतं	३-७२	कादम्बक्षितिपस्व तीर्थमयले	९-१७३
इतैर्गुणैर्भासुरकाव्य	५-३१	कादम्बक्षितिपेन भीकर	३-७८
इवमन्ये स्वाभिभावा.	३-९	कादम्बनाथं रायेन्द्र	९-११३
इव प्रगल्भा कथिता	४-८२	कादम्बनाथ करुणारस	९-२८१
इव रम्यकवाश्वरै कृतिमुखे	१-६३	कादम्बनाथ कीर्तिस्ते	९-२७
एवं लक्षणयुक्तोऽय	३-६	कादम्बनाथ तव पुण्यफल	३-६३
एवं क्षब्दगतार्थविवक्षयुतै	२-४२	कादम्बनाथ नृप	४-५९
एषा चतुर्णा नेतृणा	४-१६	कादम्बनाथ परिपालित	४-१२
एषामाद्यास्त्रयो देह	४-११७	कादम्बनाथ मदन	३-४९
श्लोत्र कान्तिगुणोपेता	६-९	कादम्बनाथमदनेन	४-१४८
श्रीविरयव्याप्तदोषाश्च	२-३१	कादम्बनाथ रमणी	३-४५
कस्तमघाश्च लक्ष्मी ते	१-३९	कादम्बनाथ लोकेऽत्र	९-७६
कटाक्षचन्द्रिकापीय	९-८२	कादम्बनाथ वचन	४-२१
कठिनाक्षररूढर्भ	१०-७	कादम्बनाथ सा कीर्ति	९-२४
कपिध्वञ्चादपेतोऽय	१०-१४७	कादम्बनाथ साम्राज्ये	९-२९९
कर्पूराणि वित्रीय	४-२५	कादम्बनाथस्य मदान्धशूर	५-१०
कलहान्तरिता या वा	४-१०९	कादम्बनाथको हार	९-१०७
कलाधरो न शोतांशु.	९-२०४	कादम्बरात कातिस्ते	९-१७२
कलाप्रौढियुता वीय	४-५७	कादम्बरायनाथस्य	९-१११
कली काले प्रशामं	९-१६८	कादम्बरायभूनाथं	९-११०
कली काले महादुष्टान्	९-१५९	कादम्बरायभूपस्य	९-२१८
कल्पान्तानिलवेगघूर्णित	६-१०	कादम्बरायसदनाद्	९-१०९
कषायवर्णता याति	३-११९	कादम्बरायो मारवच	९-१४४
काञ्चोनारीं नृपतिविलको	४-८८	कादम्बवशे विस्तीर्णे	९-२८५
कादम्बक्षितिनाथ	३-४७	कादम्बवाधिचन्द्रस्य	९-२७९
कादम्बक्षितिवायकस्य	३-५१	कादम्बाब्धौ सुसाशे	९-२८७

कादम्बेश्वरेण रामेण	९-१०८	काव्येषु ते विभाषायाः	३-११
कादम्बेश्वर कीर्तिस्ते	९-२९	कासारे जललीलया	४-८३
कादम्बेश्वरारायवङ्ग	८-३	किं किं कराब्जनिपतन्	९-२९२
कादम्बेश्वरारायद्विचरौ	४-४९	किमास्यं शारद चन्द्र	९-१७७
कान्ताकटाक्षवध्यास्य	१०-१२४	किमिय चन्द्रिकाहोस्वित्	९-१७०
कान्ताकामुकयोरत्र	३-३४	कीदृश्यलकृती रीतिः	१-२१
कान्ताकामकयो प्बित	३-३७	कीर्तिचन्द्रातपे शैत्यं	९-१५४
कान्ताताटङ्कचक्रं विरचित	९-६६	कीर्तिज्योत्स्नापि तापाय	९-१३६
कान्तानोरेजबाणेन	१०-१३६	कीर्तिप्रतापी रायेण	९-१२८
कान्ता भगवती या	१०-१२०	कीर्तिस्तऽप्यतिलङ्घते	७-१२
कान्ताया कामुकस्यापि	३-४२	कीर्तिस्ते विमन्ना सदा	१०-१९७
कान्तास्यं वरमोक्षते	९-११७	किसलययुक्तकर्ण	४-१४४
कान्तास्यबुम्बने सबतो	९-१३१	कुतो ललाटे तिलक	९-१५२
कान्तेन नारीसमाना विदग्धा	१०-४७	कुप्यति रमणा नारी	१०-५४
कामाग्निप्रशमार्थमालि	३-५५	कुत्रलयकरसार	९-२९७
कामिनीवदन पद्य	१०-१९	कुमुमाना मनोजस्य	१०-१७१
कामिन्प्रा पदपङ्कजेद्	९-६८	कृतापराध सुरते	४-७३
कारकजापकी हेतू	९-९२	कृताथूणा शङ्कादीना	४-१४७
कारुण्योपेतचित्त	९-१६	कृत्वा तृप्त जगत्सर्व	९-२११
कार्यकारणयोर्ग्र	९-२४३	कृत्वापि दान जगतो	९-१७१
कार्यमारभम णेन	९-२४८	केलीसदन याते नाथे	१०-९०
काल कलो स्वहितमङ्गल	९-१९३	कोकिला रणन कृत्वा	९-९९
काव्यश्लेषाकर काव्य	९-३	कोटीरराजितो हार	९-२२
काव्यस्म रक्षण किं वा	१-२०	कोप निवारयितुमिष्ट	९-२४५
काव्याङ्गमूर्तो शब्दाद्यौ	९-२	कोपान्नायिकया निजेश	४-७८
		कोपालिङ्गतलोलकेन	४-७५

कीमुदं वधयत्यत्र	२-१६	गुणानां कर्मणा वत्र	१-२४०
कीमुद वधयत्यत्र	२-२५	गुण्यभावे गुणो नास्ति	४-१
क्रमागतामिमा भूमि	१-१८	गुरुणा लघुना ताम्या	१-५१
क्रमेण वाच्यो यावर्षी	१०-१११	गुर्वालोकनपात्रचार्वमलं	१०-६८
क्रियाविशेषैरधिकै	४-१३९	गोरवर्णेन वाभाति	३-१२१
क्रोडयत्यङ्गनालोका	९-९०	ग्राम भवति चैत्रोऽभी	१०-६
क्रोधाक्यस्थायिभावांऽय	३-८०	घटते ढीकृते ष्पाति	१०-१४४
क्षणालिङ्गनावधनाय	९-१६४	घण्टाटङ्कारभोकृद्रण	७-११
क्षमासाम्बध्यगाम्भीर्यं	४-७	घोरभीमुद्धरङ्गे समर	* ३-८५
क्षस्तु सवसमृद्ध डघ	१-४५	चकोरनिकरो दृष्ट्वा	९-३४
क्षीरवारशिना तुस्या	९-४१	चकोरो सदृशो दृष्टि	४-१२४
क्षीराब्धिना समानापि	९-३९	चक्रवाकरतिक्रीडा	३-२८
क्षीराब्धिरभूतस्थान	९-४०	चक्षुर्विकासो देहस्य	३-६७
क्षीराब्धिशरदिन्द्रादि	९-४७	चटकारोहण स्त्रोणा	१०-१४९
क्षीराब्धिशारदाभ्रादि	९-४६	चतुर्मात्रा गणा पञ्च	१-५५
खण्डिताया नायिकाया	४-१०८	चतुर्विधानामथाना	८-५
गगने राजते राजा	२-४०	चत्वारो नायका एते	४-१५
गङ्गातुङ्गतरेङ्ग	६-१४	चन्द्र दृष्ट्वा सरोज	८-९
गद्यकाव्य तु वाक्याना	१-३०	चद्र राहुर्न बाधेत्	१०-१६५
गम्भीरामलसूक्तिरत्न	९-६	चन्द्राकारसमा कीर्ति	१०-७६
गर्वगौरवमालम्ब्य	४-१५५	चन्द्रानप पिबति चुम्बति	३-५९
गर्वहर्षमहाक्रोध	३-९०	चन्द्रोऽयं ज्योत्स्नया लोक	१०-१२८
गर्वाकूटविपक्षदक्ष	१०-१९६	चरन्ति मदनोद्याने	९-१००
गवणफल प्रोक्त	१-६२	चापत्परहिता चित्त	४-१३७
गुणरोतिवृत्तिशम्या	५-१	चित्तवृत्तिविशेषोऽयं	४-११८
गुणवर्मादिकर्नाट	१-७	चित्तशृङ्गारभूषोऽयं	४-१२३

चित्तस्य वृत्तिभेदो च	३-३	तत्त्व जिनमुनीसोऽय	१०-१५४
चिन्तामणिः कामधेनु	९-२३६	तदभावेऽनिष्टफलं	१-३५
चिन्तामणि किं न जडत्व	९-२९	तदुदाहृतिरग्यत्र	९-१२४
चुम्बति स्पृशति प्राण	९-२०	तन्वञ्जीतनुमालोक्य	१०-७२
चुम्बन्त परिरम्भण	४-६४	तन्वो सरो मुख पथं	१०-९४
चैत्रेण सेवकेनासौ	९-१०३	तरुणिबरणवात	९-२०२
छत्र सित दण्डयुतं	६-८	तरुणिकायदेशे स्वीकृता	४-१४३
छन्द शास्त्रे यतिः प्रोक्तो	१०-५०	तरुण्या देहलावध्ये	९-२०९
जगन्तमो हृत सर्वं	१०-११२	तरुण्या मदानावासो	१०-१८
जगन्तापहरश्चन्द्र	१०-११५	तरुण्या रूपसौन्दर्यं	४-१२६
जगत्यर्थान्तरन्यास	९-१३७	तवकीर्तिमहाकृता	९-१७६
जगन्मोहनरूपेण	९-१३९	तवतेजो गुणलब्धु	९-१२६
जगानुराग प्रियवादि	४-३	तव पल्लववर्जण	९-९७
जनैरविदितोयोऽर्थो	१०-१२३	तस्य श्रापाण्डयवञ्जस्य	१-१६
जपाकुसुमद्रक्त	३-१२०	तव सम्बन्धनिष्काम	९-३०४
जयति ससिद्धकाश्या	१-१	तस्यानुजो गुणाधीश	१-१३
जातिक्रियागुणद्रव्य	९-९८	तादृशं मतिभतरिं	४-७४
जातीकन्दुकताडन	३-३८	तिलकाङ्कितरायास्य	९-१३४
जिष्णुमीमावितिभोक्ते	२-३४	तुङ्गत्वेन महामेह	९-७८
जुगुप्सास्वायिमाबोऽय	३-९९	ते के नियामका ब्रूहव	९-२९
जात्यहवास्वरार्यं	४-१२०	तेजोमानुस्समो भानु	९-८१
ज्ञातभावबनुष्केण	३-६४	तेजो विलासो माधुर्यं	४-३५
ज्ञातभन्मथचिह्ने या	४-९९	त्यज्यते गृत्यते शब्दो	२-३
ज्ञानंस्वीकुरु वङ्गराज	९-२४७	त्यागवाः कुर्वते युद्धम्	१०-३९
ज्ञेतो विहसित मध्ये	३-७०	त्रयस्त्रिंशत्समाख्याता	९-८५
सत्काव्यं त्रिबिधभोक्तं	१-२९	त्रिगुरुर्मग्नः प्रोक्त.	१-५२

त्रिभेदसमुद्रा मध्या	४-८१	देवो नमसि यातीति	१०-२५
त्रिबर्णनायकेनेयं	४-४७	देवोऽयमम्बरोद्भासो	९-२५१
त्रैलोक्यं वर्तते जीव	१०-३३	देशान्तर गते नाथे	४-९७
त्वत्कीर्तिविव धावल्यं	९-३२	देशोऽयं स्वर्गभूमि	९-२२५
त्वत्कीर्तिः त्यागसंजाता	९-४४	द्विगुरुमंगण. प्रोक्तो	१-५६
वो युद्धदो दधौ	१-४२	द्वित्वाक्षरसमेतो वा	१-४९
बदात्यवर्णं सप्रोतिम्	१-३७	द्विधा प्रतीयते योऽर्धो	१०-१०५
दयालुना पुण्यजनेन	९-२०६	द्विहस्त एककण्ठोऽयं	१०-७८
दातेव नयस्तस्या	४-५८	द्वयर्थत्रयैकाक्षर	१०-१४५
दानवीर दयावीर	३-८७	धरन्नपि महाभारय	९-१४२
दानेन तपिताशेष	१०-१३४	धर्मार्थकाममोक्षारूप	१-२७
दास्यामि हारं गन्तव्यं	९-१६२	धर्मार्थकामयुक्ताना	४-४६
दाहकत्व कटादास्य	१०-१७०	धवला श्रीमति सर्व	९-३७
दाहं क्रमान्मकारो	१-४३	धारा त्वधीरा लोके हि	४-६७
दीनानायजनान् विलोक्य	३-९२	धीरोदात्तस्तथा धीर	४-६
दीर्घदेहो रक्तवर्णो	१०-८४	धीरोदात्तादिनेतृणा	४-२७
दुःखेन जायते योऽर्थ	१०-१०३	धैर्यं लीला विलासश्च	४-११५
दृश्यत्वादमभावाना	३-२३	न कुप्यति न बध्नाति	९-२२९
दृश्यमाना नाटकेषु	३-११	न कोकिना न चीणा वा	९-२२८
दृष्टान्यकामिनी सङ्ग	४-२२	न कौमुदीय कीर्तिस्ते	९-४५
दृष्टे निजेश कामिन्या	४-१४१	न मनवचनदम्भो	४-२३
दृष्ट्वा शान्तिजिन नत्वा	९-२१२	नयनप्रीति सक्तिः	३-४३
देवतया पूज्योऽयं	१०-३८	नर कपिध्वज हृति	२-३७
देवताद्द्विपसस्तुत्या	९-२६६	न रज्यति विमोहेन	१०-१९१
देवताद्वात्रिशब्दाना	१-६१	नरेन्द्रकन्या परिपूर्णरूपा	९-२७०
देवसेवनकालेऽस्य	९-२१९	नरो बरो हितोऽर्धो वा	१०-४५

नवकेलिविनोदेन	४-१३६	निर्दोषे सगुणे काव्ये	१०-१९४
नवीनबीबना नारी	४-६१	निर्लज्जपुरुषेणार्थो	१०-१०९
नवीनालोकना ज्ञात	४ १०५	निर्वेदोद्वेगकोपादिः	३-१०२
न शीतोऽपि यशाराशिर्	९-२२७	नीतियुक्तोऽपि रायस्य	९-१३३
न सन्मित्र न सत्सङ्गो	९-२३१	नीरेज वरमल्लिका	४-२६
वागते नायके गेह	४-९३	नीलकण्ठो नरोनर्ति	२-३८
नाथ सरति या नारी	४-१०१	नून प्राथो द्रुव शङ्के	९-१२०
नाथस्य चित्रे वस्त्रे च	४-१४९	नृसितिलकराये	४-१३२
नानाभावमनोज्ञभावबिलसत्	३-१३०	नृसिहराय कीर्तिस्ते	९-१५४
		नृसिंहोऽप्यभय दत्ते	९-१३२
नानारत्नविराजमानमुकुटो	६-१२	नद सरो वल्लिकुण्डं	१०-१६४
नानालङ्काररत्ने विशद	९-३१०	नेयार्थं क्लिष्टमदिग्धे	१०-३
नायं राय सुधासूति	९-८४	पत्युर्वा नायिकया वा	३-५२
नायकस्य प्रसङ्गे च	४-३०	पददोष निरूप्याहं	१०-४०
नायकाना चित्तवृत्ते	४-३२	पदवाक्यार्थदोषारते	१०-१४३
नायकोक्तेषु कार्येषु	४-३१	पदस्य कथनं यत्र	१०-५७
नायिकालक्षणं तासा	४-८४	पदस्य यस्यानुचितो	१०-२६
नारीजनो मुखं दृष्ट्वा	९-७४	पदानामनुगुण्य वा	८-२
निजेशं तर्जनं कृत्वा	४-७७	पदेन येन यद्वाक्यं	१०-५५
निन्दाव्याजेन यत्रार्थं	९-२६४	पदेन येनासम्भार्यो	१०-१७
निष्ठमाकरणे काव्ये	२-२८	पद्माकरे सरोजाक्षी	१०-६०
निरवद्यवर्णगणयुन	३-१	पद्ये समासबाहुल्यं	५-२३
निरूप्यते जगत्ख्यात	३-११६	पयोधरा नभोवृत्ता	१०-१०६
निर्गुणा रमणी लोके	५-२	पयोधरविलोलोऽय	९-२६०
निर्घातव्याघ्रसर्पादि	३-९५	पयोनिधिसमानस्य	९-३०३
निर्दोषधर्मं पुण्याय	१०-१	परकीयाप्यनुद्वेज	४-५२

परकीया स्वकीया च	४-५३	प्रच्छन्नो वा प्रकाशो वा	३-३९
परलोकं गते नाथे	४-११०	प्रजानां पालनं कस्मात्	९-३०२
परस्परप्रयुक्तानि	५-११	प्रतिकूलवर्णमपद	१०-४२
परेण परिणीता च	४-५४	प्रतिभाशक्तिसम्पन्नो	२-१
परेण परिणीता तु	४-५५	प्रतिवस्तूपमा सार	९-१२
पद्मवाद्गतेः शिबिम्बं	९-२१५	प्रतिषेधस्य कथनं	९-१५०
पश्य पश्य न मा घूर्त	१०-१५६	प्रयुक्तस्य पदस्यार्थो	५-१८
पश्य पश्यसि चेदन्यां	९-१६१	प्रयुक्तो लौकिकार्थोऽपि	५-१५
पादपूजमात्रार्थं	१०-८	प्रविशन्ति महादुर्गं	२-१८
पापापकीर्तिनभसा	१०-१६८	प्रश्नोत्तरं सङ्करश्च	९-१३
पालयत्यमला वङ्ग	१-१२	प्रश्नोत्तरद्वयं यत्र	९-३०१
पीत वारिधिसप्तकं	९-२२२	प्रसन्नोऽस्तु प्रसन्नोऽस्तु	१०-१६२
पुण्डरीक गता चन्द्र	१०-१६६	प्रसादगुणसयुक्ता	६-१६
पुण्डरीक चन्द्रबिम्ब	९-४२	प्रसादादिगुणोपेता	६-६
पुण्येन साधंमाघत्ते	९-२४४	प्रसिद्धमपि यच्छास्त्रे	१०-१३
पुनरुज्जीवनोपायं	९-१६५	प्रसिद्धसाधनाद्यत्र	९-२७६
पुरुषो राजते राज	१०-२७	प्रसिद्धिरहितं यत्र	१०-५९
पुलकस्तम्भभावादिः	३-११२	प्रस्तुतस्य विरुद्धार्थं	१०-८५
पुष्पास्त्रबाणपतन	३-६१	प्रस्तुतोऽकृत्य यत्किञ्चित्	९-१२७
पूर्वपूर्वो विशिष्टोऽर्थो	९-२९४	प्राणाभावेऽपि पुरुषो	४-३६
पूर्वाद्भि गतबालभानु	९-१८७	प्राधान्येन न वर्तते	१०-२८
पूर्वानुरागो मानात्मा	३-४०	प्रारब्धरूपमङ्गो यत्र	१०-८९
पूर्वोक्तनायिकाना तु	४-११३	प्रियस्यागमन श्रुत्वा	४-८९
पूर्वोक्ताना नायिकाना	४-३४	बलाकेव शरच्चन्द्रो	९-६०
प्रकृतं कारणं त्यक्त्वा	९-१४७	बल्यरिः कल्यरि पातु	१०-१४८
प्रगल्भा नायिका त्रेधा	४-७२	बहुवाक्यानां यत्र प्रविशन्ति	१०-५३

बुद्धेर्महत्स्व भूतेर्वा	९-१९२	भो रायवङ्ग कोतिस्ते	५-१९
बुभुक्षितोऽह त्वं दाता	१०-१२२	भ्रूलोचनकटाक्षान् वै	९-१९१
भगणो सुखकृत्साम्यो	१-५९	भ्रूविक्षेप किसलयमृदुं	४-१५८
भयाख्यस्वाधिभावोऽत्र	३-९४	भक्षिकाजालपुयाद्रं	९-२१४
भ्रयानकरसोऽप्यत्र	३-१२२	भदनस्य पताकेय	१०-१५८
भरतस्सगरश्चक्री	९-२३५	भनसिञ्ज तव कार्यं	४-१००
भाति वै नगरं चात्र	१०-९	भनसिञ्जन्पूरुप	४-५६
भातीन्दीवरमित्युक्ते	२-३५	भनोरथयुतस्वान्ते	३-४८
भावका रसमुत्पन्न	३-१६	भनोरागेण निबिडा	४-१२७
भावानोचित्यमत्रोक्तो	१०-१८४	भनोवचनकायेभ्य	४-१३३
भावयन्ति विशेषेण	३-१४	भनोवद्वक्तुरिष्टस्य	९-१७५
भावहावो तथा हेला	४-११४	भनोवेगयुता. सत्वा	९-११६
भावाश्चतुर्विधाः प्रोक्ताः	३-१३	भन्दानिला लुण्ठयन्ति	९-२५८
भाविद्भावाद्यलङ्कार	४-११९	भन्दानिलेन मकरन्दरसेन	३-५७
भावेदच्चतुर्भि पूर्वोक्तै	३-८	भन्ये शङ्के ध्रुवादीना	९-१२२
भुज्यमानाश्च भोवतृणाम्	३-१२	भरणं मुष्टिनिद्रावबोध	३-२१
भुवनव्यापिनो कीर्ति	९-४३	भलयानिलसकाशो	१-६
भुवने रसिका लोका	३-२४	महत्यपि च सक्षोभे	४-३८
भूपालोऽय मृगेन्द्रो	१०-९६	महाकवीना विस्तीर्णं	९-१७९
भेद्यशेषकभावेन	१०-१०१	महाभागस्य रायस्य	९-२६
भोगे कलाया लोली य	४-९	मासमानो न यातीत	१०-३७
भो भो कल्पतरो त्वमत्र	९-१८३	माता मे पितर दृष्ट्वा	१०-१८३
भो भो निष्टुरभाषिणि	४-९२	माघुर्यादिगुणोपेत	६-३
भो भो राय मनोजपातक	४-११२	मानसोत्लासन दृष्टि	९-२७७
भो भो बीरनृसिंहराम	४-१६३	मायामात्सर्यचण्डत्व	४-१३

मार्गे याति नरः कश्चित्	१०-२९	यत्र कोऽपि जनो वक्ति	९-२७४
मित्रलाभं जकारोऽयं	१-४०	यत्र ऋग्वेदो भङ्गो	१०-४६
मुख विशालनेत्रं ते	९-७२	यत्र न क्षमते स्त्री वा	३-५४
मुखे काव्यस्य वर्णानां	१-४६	यत्र पत्यु स्त्रिया वा वा	३-५८
मुखेन्दुना कपोलाक्षि	९-७५	यत्र पूर्वं प्रकृष्ट स्यात्	१०-९५
मुखेन्दुन्ते जनानन्द	९-७१	यत्र प्ररूपित वस्तु	९-१८२
मुख्यबाधे निमित्तो च	२-२२	यत्र प्ररूप्यमाणेन	९-२३८
मुख्यार्थादन्य एवार्थो	१०-११९	यत्र प्रियतरा वाणी	९-२०१
मुख्यार्थाल्लक्ष्यतो गौणाद्	२-२४	यत्र वाक्ये गुणो मूतम्	१०-९२
मुख्यार्थे बाधिने मुख्य	२-११	यत्र वाक्ये रसो नास्ति	१०-७७
मुख्येऽर्थो लक्ष्यनामापि	२-९	यत्र वाक्ये विरूपत्व	१०-६४
मुग्धा सलज्जा सभया	१०-१८९	यत्र वाक्ये समासोऽय	१०-७३
मूत्रस्थानं भगो गुह्य	१०-१५०	यत्र साम्य प्रतीयेत	९-२८४
मृगाङ्कुरा शीता	१०-४८	यत्र स्वार्थं परित्यज्य	२-१५
मूदुस्फुटभयाकार	५-२९	यत्राघतो पुनर्दत्त्वा	९-२४५
म्रियते यत्र रमणी	३-६२	यत्रानेकपदार्थानां	९-२७१
यगणो जलरूपोऽय	१-५८	यत्राप्रस्तुतवस्तूनां	९-२२३
यतस्ततो नायकस्य	४-२	यत्रार्थस्य स्वरूपेण	९-११९
यत्पद नोचित यत्र	१०-१५	यत्रासमाख्यसबन्धो	९-२८०
यत्प्रभाववशात् पुसि	४-४०	यत्रास्थाने पद वृत्तं	१०-७१
यत्प्राणानपि तद्वापि	४-४१	यत्रोत्कृष्टेन कथन	१०-१४१
यत्र कान्तस्य कान्तायाः	३-५०	यत्रोपचर्यते भेद	९-६५
यत्र कामस्य सतापात्	३-६०	यत्सार निश्चित यत्र	९-२८६
यत्र किञ्चित् समीकर्तुं	९-२३३	यथा दुष्यन्तनूपते	४-५१
यत्र कैवल्यकथनं	९-२२६	यथेववाद्यव्ययानि	९-६३

यद्योचित नायकोक्त	४-१६२	रणे गृहीतो रायेण	९-१५८
यद्गान परमामृत श्रुति	४-१३४	रणे जयाङ्गना वीत्रो	१०-११
यद्दानाद् धनदा भवन्ति	३-९१	रतिक्रियाया कोपेन	१०-१५९
य दृष्ट्वा प्रलयान्तभैरव	३-९३	रतिक्रियार्थी रमणीं	१०-५६
यरतास्तु न सन्त्यत्र	१-५७	रतिहास्यशोककोपोत्साह	३-४
यश्च प्रतापी भवतो	९-१४०	रतो तरुण्या नाथस्य	१०-२०
यस्या सामोप्यमाश्रित्य	४-८७	रतो राम महीनाथे	९-२१
यस्योत्तुङ्गविशालकीर्ति	५-१२	रत्नत्रयमहाधर्म	१-१४
याचन चुम्बनादाने	९-३००	रत्नयोगनिवृत्त्यर्थं	१०-१७४
यामोति वचन नाथ	९-१६६	रमणीं रमणो यत्र	३-४४
याहि याहि निजेश त्व	९-१६	रमण्या रमणस्यापि	३-४६
युद्धरङ्गत्रिन्शोऽयं	९-१९९	रशनाबन्धन वाम	३-३२
युद्धे राघनरेन्द्रहस्तकलितं	३-९८	रसदोषप्रपञ्चाना	१०-१९३
येन जिष्णुरपि इवस्यः	९-२८३	रसप्रकरणे प्रोक्त	४-१०३
येन रूपेण यद्वस्तु	९-१४	रसलक्षणमत्रोक्त	३-११४
येनोपमोयते यत्र	९-२३	रसवस्त्वं गिरा लोके	९-२२०
योगसौगतसाङ्ख्यानाना	१०-६३	रसानामिति सर्वेषा	३-२५
योऽप्या सञ्चारिभावाश्च	३-३५	रसानुकूलवर्णानि	१०-६९
यो वातदेही तेनेद	१०-११६	रसाभासोऽपि भावानां	१०१७७
रक्षत कादम्बनाथेऽस्मिन्	९-१०१	रसिकाना मनोवृत्तिः	३-१७
रक्ष मा रक्ष मा कान्ते	१०-१६०	रसे भावे प्रतीते च	१०-१८७
रणणो लघुमान् मध्ये	१-५३	रसो भीभरसनामा च	३-१२३
रङ्गत्तुङ्गतरङ्गसङ्ग	५-२४	राजसर्वज्ञकल्पोऽय	४-८
रणभेरीरव श्रुत्वा	९-१७८	राजनीतिमहाशास्त्र	१-८
रणसन्धिनि शत्रूणा	९-२१०	राजा कमलविरोधीत्युक्ते	२-३३
रणारम्भरमालोक्य	१०-८६	रात्री गृहीत्वा कोदण्ड	१०-१२६

रायः कावम्बनाथोऽयं	९-१४५	रुचन्ति कोकिलाः कीरा	९-८८
रायक्षमापतिना भयङ्करमहा	३-७९	रूप वचोऽधररसं	९-१९०
राय कल्पान्तक युद्धे	९-१५६	रूपसौन्दर्यसपन्नो	१०-१०२
रायनाथमनोज्ञे	८-८	रूपातिशयसंपन्ना	१०-१८२
रायनाथस्य रामे या	४-१३८	रूपातिशयसंपन्नो	९-९५
राय प्रतापभानुस्तान्	९-१३५	रूपेणाङ्गजवत् कलायुततया	९-५६
रायप्रतापभानुस्ते	९-७७	रूपोपभोगतारुण्यं	४-१२५
रायरूपपटीं दृष्ट्वा	४-१५१	रोमाञ्चस्वेदभाषादिः	३-१०७
रायवङ्गक्षितोशस्य	९-२३७	लक्षण नायकानां हि	४-४३
रायवङ्गक्षितोशस्य	९-२७३	लक्ष्यवाचकशब्दस्य	२-१४
रायवङ्गमनोज्ञात्	९-१०५	लीलावलोकनात्तन्नि	१०-८२
रायवङ्गमहीनाथं	१०-१६३	लुब्धा धीरोद्धता ये च	४-३३
रायवङ्गः समुद्रश्च	९-२५९	लोकशास्त्रक्रमो नास्ति	१०-६१
रावङ्गम्य कीर्तिर्वा	९-१५५	वक्तव्यमेव न प्रोक्तं	१०-८१
रायवङ्गे न दृश्यन्ते	९-२५५	वक्तु योग्यमपि स्वान्त	४-१५९
रायवङ्गेन सहान	१०-१६१	वक्तु योग्ये विशेषेऽस्मिन्	१०-१३३
रायस्य कीर्त्यां चञ्चल	९-२४१	वक्रवाचं सोपहासा	४-७९
रायस्य दोबल स्मृत्वा	९-२१७	वक्षोरङ्गनिवासिनीं	९-१२९
रायस्यायल्लके ज्योत्स्ना	९-१५७	वक्षोरङ्गे महाश्रीर्वरमुख	९-२६५
रायारामस्थितान् वृक्षान्	९-२१६	वञ्चित्वात्मीयलोक या	४-१०२
राये दिनिवजयाय सैन्य	४-९८	वने आस्ते वरा नारी	१०-६५
रायेश स्मरसनिभ	४-१४२	वर्गद्वितीयबहुला	६-७
रायो रणाङ्गणेऽरीणा	९-१५१	वर्णानां शुद्धिरित्युच्यता	१-४८
रीतिनारे जघण्ठेद्	६-१७	वसन्तोद्यानकासार	३-२७
रीतिशून्या यथा कन्या	६-१	वस्तुसाधारण यत्र	९-२९८
रीतीना लक्षण तस्माद्	६-२	वाक्यदोषान् निरूप्याहं	१०-९७

वाच्यवाचकसबन्धी	२-६	विस्वरत्वाश्रुमोहादिः	३-७७
वाच्यस्य नियमस्यात्र	१०-१३१	विस्वरत्वाश्रुवैवर्ण्य	३-६८
वाच्या प्रतीयमानेति	९-१२१	विषादाद्भ्रुतमुत्क्रोष	१०-१५५
वाच्योत्प्रेक्षा पुन प्रोक्ता	९-१२३	विहाय शब्दालङ्कार	९-७
वामपादप्रहारेण	१०-१९०	वोरो भयानको यद्वच	३-७
विकसितगण्ड त्वीषन्	१३-७१	वृत्तिशून्यो न सूत्रार्थो	७-१
विचकिलकुसुमाना	४-१९	वृत्तीना लक्षण तस्या	७-२
विदूषकस्य भाषा वा	३-६६	वैदर्भीगीडिकालाटी	६-४
विध्यनुवादविवृत्त	१०-१००	व्यतिरेकाद्यलङ्कारे	९-२५३
विध्यनुवादविवृत्ता	१०-१३८	व्याजस्तुतिविशेषाणा	९-२६७
विध्यनुवादो कथितौ	१०-१३७	व्रजन्ति शत्रिका मार्गौ	२-२०
विनयादिगुणा. प्रोक्ता	४-१६१	शठेन दृढमालिङ्गघ	१०-७०
विनापि पदेन येनेद	१०-७५	शत्रुक्षयज्ञापकधूमवैतुः	९-२९१
विना सर्वं मया दृष्ट	१०-१४६	शब्ददम्बरमात्रार्थी	२-४
विपक्षतमसा शत्रौ	९-१६९	शब्दस्य वा प्रतीतेर्वा	९-१३८
विश्वप्रबन्धसज्ञोऽय	१-२८	शब्दानामभिधेयाना	५-९
विभावैरनुभावैश्च	३-५	शब्दार्थद्वयचित्रार्थी	२-५
वियुक्तन. यकस्यासौ	४-१०४	शब्दार्थयोरलङ्कारौ	९-४
वियोगं प्राप्य रायेन्द्रो	९-२५६	शब्दालङ्कृतयः प्रोक्ता	९-५
विरक्तो याति पत्नीं या	१०-१४०	शब्दाश्रितप्रसादादि	६-५
विरहोत्कण्ठिता काचित्	४-८६	शब्दो जहाति मुख्यार्थं	२-१९
विवेकशौचसौभाग्य	४-११	शमाख्यस्वायिभावोऽयं	३-१०९
विवेकीति कवि प्रोक्तो	२-७	शय्याविरजसंयुक्ते	८-१०
विषतामेति कर्पूरं	१-४७	शरच्चन्द्रनभोगङ्गा	९-४९
विस्तार याति या कान्तिः	४-१२९	शरदिन्दोरिवोत्पन्ना	९-५०
विस्मयस्वायिभावस्तु	३-१०५	शरीराख्यवन्ध्यास	४-१५७

शल्यत्रयं च संज्ञा च	१०-१५२	शोभा या दक्षता शौर्यं	४-३९
शशबरसुरगङ्गा	९-१२५	श्रित्वा रायनृपं भाति	९-५२
शस्तमोति सुखं वस्तु	१-४४	श्रिय विपक्षवर्गस्य	९-११५
शान्तनामरसो लोके	३-१२५	श्रीकामिराजबङ्गोऽभूत्	१-१७
शारदाभ्रमिवापूर्वा	९-५८	श्रीकामिराजबङ्गोऽयं	९-१३०
शारदी कौमुदी सप्त	९-३३	श्रीमद्भूरतराजेन्द्र	१-११
शास्त्रं धर्मस्य सवृद्धये	९-११४	श्रीमद्विजयकीर्तिन्दो	१-४
शास्त्रोक्तलक्षण नास्ति	१०-१२	श्रीमद्विजयकीर्त्याख्य	१-५
शिबिकादोलिकाछत्र-	२-२१	श्रीराय कीर्तिजाल ते	९-२८
शिर.शेखरकर्णवि-	१०-१७३	श्रीरायकीर्तिजालेन	५-२८
शीलार्जवधैर्यशौर्य-	४-४८	श्रीरायक्षितिनाथ	३-११३
शुक्लकृष्णहरिद्रक्त	२-१२	श्रीरायक्षितिनाथकीर्तिवनिता	९-८९
शुभदो मगणो भूमि	१-६०	श्रीरायक्षितिनाथ येन	९-२०७
शृगालवत् पुरालोकी	९-६२	श्रीरायक्षितिनाथ विक्रमगुणे	९-२४२
शृङ्गारः करुणः शान्तो	६-१५	श्रीरायक्षितिनाथकस्य	३-७३
शृङ्गारकरुणो लोके	७-८	श्रीरायक्षितिपस्य	३-१०८
शृङ्गारगमको हावो	४-१२३	श्रीरायक्षितिपालको	९-२९५
शृङ्गाररसवार्शो	१०-५२	श्रीरायक्षितिपेन घोरसमरे	३-१०३
शृङ्गारसारतरुणी	७-१०	श्रीरायक्षमापशक्ति	३-८४
शृङ्गारस्य विरोधी हि	३-१२८	श्रीराय ते नभसि वक्षसि	४-६९
शृङ्गाराकृतिबेष्टा तु	४-४२	श्रीरायं निजगेहमागत	४-७१
शृङ्गाराख्यरसे नेतु	४-२८	श्रीराय भवतः कीर्ति	९-३१
शृङ्गाराज्जन्म हास्यस्य	३-१२६	श्रीरायभूप कीर्तिस्ते	९-२५
शृङ्गारादिरसाना तु	९-२०८	श्रीरायभूपदिग्याङ्गे	९-२७८
श्लोकाख्य-स्थायिभावो यो	३-७४	श्रीराय भो नभसि	४-८०
श्लोमाकरो ढकारोऽयं	१-४१	श्रीरायराज्ये काठिन्यं	९-२५७

श्रीरायबङ्गकान्ताया	५-३०	सङ्ग्रामाङ्गणभूतले	७-१३
श्रीरायबङ्गसिन्धुनायकस्य	५-७	सचक्रो हरिरित्यत्र	२-३२
श्रीरायबङ्गभूपतिनिजितेन	३-१०४	सति चन्द्रे महाज्योत्स्वे	१०-११८
श्रीरायबङ्गरमणो	४-१०	सत्कीर्तिचन्द्रिकाहारं	९-८३
श्रीरायबङ्गसहिता	४-१३०	सत्कीर्त्या रायबङ्गस्य	९-१०६
श्रीरायस्य मुखेन्दुस्ते (? स्व)		सत्यरूपमपह्नुत्य	९-१९५
	९-६९	सदैव बलसपन्नो	९-२५२
श्रीरायस्य यशोऽमित कुमुमितं		सद्वृत्तिबालविलसद्	७-१६
	५-२२	सर्वैर्यं यमन दृष्टिः	४-३७
श्रीरायगमनोत्सुका	४-९०	सनिमेषः सुरावीशो	९-१८५
श्रीराये गृहमागते	४-७६	सन्तापहारी चन्द्रोप्यं	९-१८४
श्रीराये निजनामके	४-९६	सदे(व) पुरसकाश	१-९
श्रीरायो जलधिः सुवाशु	९-६७	सन्ध्याराग वनाग्नि	९-२८९
श्रीबङ्गराजवदनं	९-३०६	सप्ताङ्गमासुरो राजे	२-३६
श्रीबङ्गेश्वर साधु साधु	९-२७५	सप्ताम्भोनिधिपानक	४-१४
श्रीशान्तिनाथदेवोऽय	९-२७२	समन्तभद्रादिमहाकवीश्वरै	१-३
श्रुतिचेतोद्वयानन्द	५-६	समस्तलोकसव्याप्त	१०-१३२
श्लेषस्य वस्तुजातस्य	१०-११३	समाप्तपुनरात्त तद्	१०-७९
श्लिष्ट निदर्शन व्याज	९-११	समुद्रनगरीशैल	१-२४
श्लिष्यन्त स्मररायनायक	४-६६	सभागविप्रलम्भाम्या	१-२५
सयोगविप्रयोगी	२-६०	सभोगविप्रलम्भो तौ	३-४१
सकलङ्क सुवाशुः किं	९-३५	सभ्रमत्राममोहोर	३-९७
सकलङ्को निराधार.	९-१४३	सरसत्वान्मृदुत्वाच्च	१०-३५
सकौशमपि नीरेज	९-३०७	सरसमधुरवाणी	४-९४
सक्रियं निष्क्रिय वस्तु	९-१५	सरसवचनलोला	५-२६
संघामनायकैश्वर्य	१-२६	सरससुरतयुद्धे	९-२३०

शरसाधीवसन्धर्म	७-३	सुहृदसन्तः कौरोऽव्यः	१०-१७२
शरसो यत्र शब्दश्च	५-२५	सेवार्थमागतमहा	९-१८८
स राजा काव्यगोष्ठीषु	१-१९	सोऽपि धीपाण्डधवङ्गोऽयं	१-१५
सवज्ज काञ्चनमय	१०-१५१	स्तवनं निन्दनं चापि	९-२३४
सशङ्को ग्लानिनिर्वेदो	३-२०	स्त्रीरूपं निरलकार	९-१
सस्यार्थो वा कामुको वा	१०-१०७	स्वायिभावार्णवे भावाः	३-१९
साक्षात् सङ्केतविषयो	२-१०	स्थितिर्वा ते गतिर्वा ते	९-१६०
सात्त्विकः स्वेदरोमाञ्च	३-८३	स्पृष्टं मया न ताम्बूलं	९-१६७
सापरार्धं निजेश या	४-७०	स्मरकेलिविनोदेन	१०-५८
सापराधो नृपो राय	९-१५३	स्मराग्निपीडिते तन्वि	१०-८८
सामग्रीमबलम्ब्येमा	३-३६	स्मरेषुश्चन्द्रिका तस्या	१०-८०
सामान्यनायकप्रोक्त	४-४४	स्मितज्योत्स्नामुखेन्दो ते	९-७०
सामान्ये यत्र वक्तव्ये	१०-१३५	स्मितज्योत्स्नाविकास ते	९-७३
साम्बरराज विमाति	९-३८	स्मृत्वा निजेश स्वाङ्गस्य	४-१५०
सिंहासने महारत्ने	९-११२	स्यादिन्दोवरवर्णस्तु	३-११७
सिंहो नृपतिरित्यत्र	२-२३	स्याद्वादधर्मपरमामृत	१०-१९५
सुकुमारत्वमाधुर्यं	६-११	स्वकीयशास्त्रसिद्धार्थं	१०-३२
सुकुमारत्वमोदार्यं	५-४	स्वकीया नायिका मुग्धा	४-६०
सुजनसुरकुजोऽयं	९-२६२	स्वकीया परकीयाप्य	४-४५
सुधाधवलवर्णं स्याद्	३-११८	स्वजनाक्रन्दन बन्धु	३-७६
सुमगेश निज नारी	१०-६७	स्वभावमधुरा लम्बा	१०-१०८
सुरतरवे लोकोऽय	१०-३१	स्वभावोक्त्युपमे रूपका	९-८
सुरतसदननार्या	९-१८१	स्वरो लघुरपि प्रोक्तो	१-५०
सुरराजभ्रियो रम्यं	९-१४६	स्वसङ्केतितमर्थं यत्	१०-२१
सुरलोके पुरीं दत्त्वा	९-२४६	स्वाधीनपतिका नारी	४-८५
सुरेन्द्रपूज्यः परिपूर्णसौख्यं	९-२६९	स्वामिप्रेत न वक्तव्यं	१०-१०

स्वेदकम्पनरोमाञ्च	३-१८	हसनस्यापि कीर्तेश्च	१०-१६७
हरिचन्दनकासार	१०-१६९	हारेण रायबङ्गस्य	९-१०२
हरिचन्दनहारेण	९-९३	हास्य. शान्तोऽद्भुतश्चेति	७-९
हरिततृणभक्षिणोऽमी	९-२२४	हास्यशान्ताद्भुतरसो	७-६
हरिनीलच्छविभासुरा	९-१७	हिनोति कार्यं व्याप्नोति	९-९१
हर्षमालैतिसुरभि	१०-१७५	हेनोविना कार्यमुक्तं	१०-११६
हसति बसति चास्ते	४-१४०		



Appendix-B

ŚC (I) and Bhāmaha (as quoted by -Nārāyaṇabhaṭṭa)

ददात्यवर्णं सप्रीतिमिवर्णो मुदमुद्वहेत् ।
कुर्याद्विवर्णो द्विविण ततः स्वरचतुष्टयम् ॥
अपह्यातिफल दद्यादेव सुखफलावहा ।
ऋबिन्दुविसर्गास्तु पदादौ सभवन्ति नो ॥

क्षकारस्तु प्रयोक्तव्य. काव्यादौ सत्फलावह ॥

I 37-47

यगणो जलरूपोऽय धनद्वृद्रगणोऽजलः ।
भयदाहकरस्तस्तु गगन श्रीकरो मतः ।
भगण सुखकृत् सौम्यो जो भानू रोगदायकः ।
वायव्य सगणो दत्ते क्षयरूप फल सदा ॥
शुभदो मगणो भूमिर्नगणो गौर्धनप्रद ।

देवतावाचिशब्दानां भद्राद्यर्थप्रकाशिनाम् ।
शब्दानां निरवद्यत्व काव्यादौ गणवर्णतः ॥

ŚC I.58-61

तदुक्तं भामहेन—

अवर्णत् सपत्तिर्भवति मुदिवर्णाद्धिनशता—
 न्युवर्णादिव्यातिः सरभसमृवर्णाद्विरहितात् ।
 तथा ह्येवः सौख्य ऊत्रणरहितादसरगणात्
 पदादौ विन्यासात् भरबहुलपूर्वैर्विरहितात् ॥
 क खोगोवश्च लक्ष्मीं वितरति न यशो हस्तथा चः सुखं छ ॥

*** स सृष्टिं करोति ॥

अन्यैस्तु देवताफलस्वरूपाभ्येषामुक्तानि-
 मो भूमिस्त्रिगुरु श्रिय दिशति

*** मुख्यगुरु नोनकि आयुस्त्रिल ॥

तदुक्त भामहेनैव

देवतावाचकाः शब्दा ये च भद्रादिवाचकाः ।

ते सर्वे नैव निन्द्या स्युर्लिपितो गणतोऽपि वा ॥

—Commentary of Nārāyaṇa-bhatta on Vṛttaratnā—
 kara, pp 4-6

(Note : As already observed Vijayavarṇī and
 Amṛtānandayogin are in close agreement in their
 treatment of Varṇa-gaṇa-phala-śuddhi.)

ŚC II and Kāvyaṁimāṁsā

त्यज्यते गृह्यते शब्दोऽर्थो वा तावत् पुनः पुनः ।
 येन यावद् रुचिः स्वस्य रौचिकः स कविर्भवेत् ॥
 शब्दहम्बरमात्रार्थी वाचिकः कविरुच्यते ।
 अर्थं वैचित्र्यमात्रार्थी सोऽयमार्थः कविर्भवेत् ॥
 शब्दार्थद्वयचित्रार्थी शिल्पिकः कविरुच्यते ।
 शब्दार्थमृदुताकारी मार्दवानुगनादभाक् ॥
 वाच्यवाचकसबन्धि गुणदोषविदा वर ।
 महाकवीना मार्गज्ञो नानाशास्त्रार्थकोविदः ॥
 विवेकीति कवि प्रोक्तो दिव्यालङ्कारयोजने ।
 तत्परो भूषणार्थीति नाम्ना कविरुदाहृतः ॥
 इति सप्तविधाः प्रोक्ताः कवयः कविपुञ्जवै ।

—ŚC II-3-8 (ab)

काव्यकवि पुनरष्टधा । तद्यथा—
 रचनाकवि शब्दकवि अर्थकविः
 अलङ्कारकविः उक्तिकविः रसकविः
 मार्गकविः शास्त्रार्थकविरिति । ...
 ...त्रिधा च शब्दकविर्नामाख्यातार्थ—
 भेदेन । द्विषालङ्कारकवि शब्दार्थभेदेन ।

Kāvyaṁimāṁsā pp 17-19

(Note : Amrtānandayogin and Vijayavarṇī fully agree in their classification and definition of types of poets. One of them must have borrowed from the other who must have first formulated the seven-fold classification of poets taking probably hints from Rājaśekhara's Kāvyaṁimāṁsa.)

ŚC IV		Daśarūpaka II
3-4	Hero's good qualities	1-2
6-15	Four types of hero	3-6 (ab)
16-26	Sixteen types of hero	6 (cd)-7
27-28	Forty-eight types of hero	
29-32	Four upanāyaka- kas :	8-9 (ab) Three Netrsa- hāyas .
	1. Vidūṣaka	1. Pīthamarda (Patākānā- yaka)
	2. Pīthamarda	
	3. Vita and	2. Vita and 3. Vidūṣaka
	4. Nāgarika	
33	Pratīnāyakas	9 (cd)
34-42	Set of eight Special excellences spring from hero's character	10-14
43-59	Four types of heroine .	15 (ab) and 20 (cd)- 22 (ab)
		(Note : Three types of heroine :
	1. Svakīyā	1. Svīyā (= Svastī, Svakīyā) .
	2. Parakīyā	

3. Anūṣhā and 2 Anyā (= Anyastri,
4. Sādhāraṇā Parakīyā) and 3. Sādhā-
raṇa-stri (= Sadharaṇā)
- 60-66 Three types of 15 (cd)-16 (ab)
Svīyā
- 67-71 Three types of 16 (cd)-17
(Svakīyā) Madh-
yā Nāyikā
- 72-80 Three types of 18-19
(Svakīyā) Praga-
lbhā Nāyikā
- 81-83 Each of these 20 (ab)
types of heroine
(Madhyā and
Prāgalbhā) may
be the earlier or
later of the Loves
of the husband.
- 84-102 The heroine may 23 (cd)-28
occupy eight dif-
ferent relations
to her lover
(Svādhīnapatikā,
Vāsakasajjā, etc.)
- 103-110 Four-fold Vipra- Daśarūpaka IV. 50-51(ab)
lambha in rela- and 57-68

- tion to types of heroine
1. Pūrṣānurā- (Note : In Dhanartjaya's
ga 2 Māna view, if absence be due to
3. Pravāsa and death the love sentiment
4 Karunātmaka cannot, be present)
- 111-112 Dūtīs (heroine's 29
messengers)
- 113-160 Twenty excellences of a heroine, beginning with Bhāva and ending with Vihṛta-the first three are physical, The next seven are inherent characteristics of the heroine, then come ten graces.

Appendix—C

ŚC V	Kāvya-darśa I
4-5 (ab) Enumeration of ten Guṇas, the ten Prānas (of Kāvya)	41-42 (ab) (Note . The ten Guṇas, according to Daṇḍī, are the Prānas of Vaidarbha Mārga) *
6 Definition of Saukumārya	69-71
8-9 Definitions (alternative) of Audārya	76-79
11 & 13 Alternative definitions of Ślesa	43-44
15 Definition of Kānti	85-92
16 Alternative definition of Kānti	Cf Vāmana's Kāvya-lamkāra-sūtravṛtti (3 1.25)
18 Definition of Prasannatā (= Prasāda)	45-46
20 Definition of Samādhi	93-100
21 Alternative definition of Samādhi	
23 Definition of Ojas	80-84
25 Definition of Mādhurya	51-68
27 Definition of Arthavyakti	73-75
29 Definition of Samatā	47-50

Appendix-C

§C (VII) and PRY on Vrttis

Cf

अत्यन्तकोमलाब्धिना शृङ्गाररसयोगिनाम् ।
करुणास्वरसे वाचा सदर्भो वाच कैशिकी ॥
अत्यन्तकर्मशार्थिना रौद्रबीभत्सयोगिनाम् ।
मदभंरूपारभटी वृत्तिरुक्ता कवीश्वरै ॥
हास्यशान्ताद्भूतरसोपेनार्थिना पृथक् पृथक् ।
ईषन्मृद्गुना सदर्भो भारतीवृत्तिरुच्यते ॥
ईषत्कठिनवाच्याना सदर्भ सात्वतीष्यते ।
भयानकेन वीरेण रसेन सह योगिनाम् ॥
शृङ्गारकरुणी लोकेऽत्यन्तकोमलता गती ।
अत्यन्तकठिनौ रौद्रबीभत्सो रसनामकौ ॥
हास्यः शान्तोऽद्भुतश्चेति स्वल्पकोमलता गताः ।
ईषत्काठिन्यसपृक्नो मतो वीरभयानकौ ॥

—VII 4-9

and,

अत्यर्थसुकुमारार्थमदर्भा कैशिकी मता ।
अत्युद्धतार्थमदर्भा वृत्तिरारभटी स्मृता ॥
ईषन्मृद्गुणमदर्भा भारती वृत्तिरिष्यते ।
ईषत्प्रौढार्थमदर्भा सात्वती वृत्तिरिष्यते ॥

तत्र—अत्यन्तसुकुमारी द्वौ शृङ्गारकक्षणी मती ।
 अत्युद्धतरसौ रौद्रवीभत्सौ परिकीर्तिता ॥
 हास्यशान्नाद्भुता किञ्चित्सुकुमारा प्रकीर्तिता ।
 ईषत्प्रीढी समाख्याती रसौ वीरभयानकी ॥

—PRY

p 158 (Kārikās 15-18)

And Cf .

अत्यन्तकोमलार्थार्थेऽल्पप्रीढसदभंलक्षणा ।
 मध्यमा कैशिकी सर्वरससाधारणा मता ॥
 ईषन्मृदुसदभर्प्यतिप्रीढार्थगोचरा ।
 मध्यमारभटी सर्वरससाधारणा स्पृता ॥

—VII 14-15.

and

मध्यमारभटी त्वन्या तथा मध्यमकैशिकी ।
 वृत्ती इमे उभे सर्वरससाधारणे मते ॥
 मृदुर्थेऽप्यनतिप्रीढबन्धा मध्यमकैशिकी ।
 मध्यमारभटी प्रीढेऽप्यर्थे नातिमृदुक्रमा ॥

PRY

p. 61 (Kārikās 23-24)

And Cf

शब्दगतप्रसादमाधुर्यादिदशगुणाश्रितानामर्थविक्षेपनिरपेक्षणावेदभ्या-
 दिरीनीनामर्थविक्षेपापेक्षविशिष्टकैशिन्यादिबुत्तिभ्यो भेदो द्रष्टव्य ।

—Vijayavarṇī

and

वैदग्ध्योद्दिरोतीना शब्दगुणाश्रितानामर्थविशेषनिरपेक्षतया केवलसदभं-
सौकुमार्यप्रौढत्वमात्रविषयत्वात् कैशिक्यादिभ्यो भेदः ।

—Vidyānātha

And Cf

असयुक्तमृदुवर्णबन्धोऽतिमृदुसदभं । सयुक्तकोमलवर्णबन्ध ईषन्मृदु-
सदभ । अविकटपरुषवर्णबन्ध ईषत्प्रौढसदभं ।

—Vijayavarni

and

सदभंस्यातिमृदुत्वमसयुक्तकोमलवर्णबन्धत्वम् । अतिप्रौढत्व परुष-
वर्णविकटबन्धत्वम् । सयुक्तमृदुवर्णेष्वीषन्मृदुत्वम् । अविकटबन्ध-
परुषवर्णेष्वीषत्प्रौढत्वम् ।

—Vidyānātha

Appendix—C

ŚC IX

Kāvya-darśa I

On Arthālamkāras

3(ab) Definition of Kāvya	1 (ab)
4(cd)—5(a)	Cf Rudrata II-13
8-13 Enumeration of Alamkāras 4-7 and Rudrata	VII 11-12
14-15	Kāvya-darśa 8, 13
Cf हीनेषु त्रस्नेषु बालादिषु च विशेषतो रम्या जाति ।	—17-18
and शिशुपुत्रव्युदिकातरतिर्यक्सञ्चान्तहीनपात्राणाम् ।	
मा कालावस्थोचितचेष्टासु विशेषतो रम्या ॥	—Rudrata VI:-31
23-64 Upamā and its varieties	Kāvya-darśa 14 65
65-86 Rūpaka and its varieties	66-96
87-90 Arthāvrtti	116-119
91-97 Hetu	235 260 (ab)
98-118 Dīpaka	97-115
119-126 Utpreksā	221-234
127-137 Arthāntaranyāsa	169-179
138-146 Vyatireka	180-198
147-149 Vibhāvanā	199-204

150-174 Āksepa	120-168
175-179 Atiśayokti	214-220
180-181 Sūksma	260 (cd)-264
182-185 Samāsokti	205-213

Cf. अस्यालङ्कारस्य अन्यापदेश इति नामान्तर वक्तव्यम् ।
and अन्यापदेश इत्यस्या नामान्युच्यते यथा ॥

—Alankārasaṅgraha V 29 (cd)

186-188 Lava	265-272
189-191 Krama	273-274
192-194 Udātta	300 303

Appendix-C

ŚC IX

Kāvyaḍarśa I

195-200 Apahnaḡa (= Apahnuti)	304-309
201-202 Preyaḡ	275 (a)-279
203-207 Virodha	333-340 (ab)
208-220 Rasavad	275 (b), 280-292
221-222 Ūrjasvi	293-294
223-225 Aprastutaprasaḡsana	340 (cd)-342
226-232 Viśesokti	323-329
233-237 Tulyayogitā	330-332
238-239 Paryāyokta	295-297
240-244 Sahokti	351-355 (ab)
245-247 Parivṛtti	355 (cd)-356
248-249 Samāhita	298-299
250-260 Ślesa	310-322
261-263 Nidarsana	348-350
264-267 Vyājastuti	343-347
268-270 Āśih	357

Cf :

271-273 Samuccaya	Rudraṡa VII 19-29
274-275 Vakrokti	(Rudrata X-9 and) Alaḡhkārasangraha V 49
276-279 Anumāna	Rudrata VII 56-63

280-281 Viṣama	Rudrata VII 47-55
282-283 Avasara	Rudrata VII 103
284-285 Prativastūpamā	Rudrata VII 85 (Ubhayanyāsa)
286-287 Sāra	Rudrata VII 96
288-289 Bhrāntimān	Rudrata VIII 87
290-293 Saṁśaya	Rudrata VIII 59-65
294-295 Ekāvalī	Rudrata VII 109-111
296-297 Parikara	Rudraṭa VII 72-76
298-300 Parisaṁkhyā	Rudraṭa VII 79-81
301-304 Praśnottara	Rudrata VII 93-95
305-308 Saṁkara	Rudrata X 24-29

(Note - As noted elsewhere, the examples in illustration of various Alaṁkāras are composed by Vijayavarṇī himself. Vijayavarṇī's indebtedness to Daṇḍī for the definitions of most of the Alaṁkāras is indisputable. He seems to have kept in view the definitions of Rudraṭa when defining a few-Alaṁkāras)

Appendix-C

Sc X

Kāvya prakāśa VII

On Doṣas

2-4 Enumeration of Padadoṣas	Kārikās 50-51
40-43 Enumeration of Vākyadoṣas	Kārikās 53-55 (ab)
97-100 Enumeration of Arthadoṣas	Kārikās 55 (cd)-57
173-176 Sthīta-Samarthana	Kārikā 58
177-180 Enumeration of Rasadoṣas	Kārikās 60-62

A study of the definitions of the various Doṣas, classified into different sets, reveals that Vijayavarṇī has closely followed Mammaṭa

Appendix-D

Śc	āñd	Alamkārasaṅgraha
Chapter I :		Chapter I :
Varṇa-gaṇa-śuddhi		Varṇa-gaṇavicāra
34-48 (ab) Varna-śuddhi	}	23-36
58-62 Gaṇa-phala		
Chapter II :		Chapter II :
Kāvya-gataśabdārthanīśaya		Śabdārthanirṇaya
3-7 (ab) Kavibhedāh		2-6 (ab)
8 (cd)-41 Caturvidhā Vākya'rthāh		10-35
Chapter III		Chapter III :
Rasabhāvanīśaya		Rasanirṇaya

The treatment of Rasa, Bhāva, Rasa-Sāmagrī, Varieties of Rasa and Bhāva in both the works is after the treatment generally described in standard works on poetics with slight variations in a few details and more or less emphasis on a point or two. Thus we find in Śc* the description of S'ānta-rasa in accordance with the religion and philosophy of the Jainas, whereas in Alamkārasaṅgraha§, it is in accordance with Vedānta, and

* Chapter III, 109-112

§ Chapter III, 55-58 (ab)

particularly, with S'aiva faith. Sc treats of Ś'rngāra-rasa at great length in all its ramifications whereas Alarhkārasaṅgraha treats of it briefly-leaving out some of its main divisions.

Chapter IV :
Nāyakabhedanīścaya

Chapter IV :
Nētrbhēdanīrṇaya

The treatment of this topic of the Heroes and the Heroines and their types in both the works is in agreement with Daśarūpaka.

Chapter V : Daśaguṇanīścaya

Chapter V : Alarhkāra-
nīrṇaya |

4, 6, 9, 13, 15,
18, 21, 23, 25, 27

2, 5, 6, 3(ab), 7(cd),
3 (cd), 8 (ab), 7(ab),
5 (ab), 6 (ab)

Although the treatment of these ten Guṇas in both the works is in agreement with the one found in Kāvyaḍarśa, the wording of definitions of a few Guṇas in both these works is very striking and leads one to the inference that S'C probably knew Alarhkārasaṅgraha:

(1) आरोपादन्यधर्मस्य प्रकृतार्थस्य गौरवम् ।
समाधिरुच्यते सद्भिरिति वा लक्षणं स्पृतम् ॥

—21

समाधिरन्यधर्मानामध्यासादर्थगौरवम् ।

—8 (ab)

- (11) पदेन वा प्रसन्नोऽर्थो यत्र सा वा प्रसन्नता ।
—18 (cd)
पदे प्रसन्नैयंनार्थः प्रसादोऽसी प्रतीयते ।
—३ (cd)
- (111) पद्ये समासबाहुल्यं गद्ये वा हृद्यमुच्यते ।
बोजो गुण ॥
—23
वाक्ये समासबाहुल्यं हृद्यमोजोऽभिधीयते ।
—7 (ab)
- (1V) सरसो यत्र शब्दवच सरसोऽर्थोऽपि जायते ।
तन्माधुर्यमिति प्रोक्त कर्णानन्दविषायकम् ॥
—25
सरसो यत्र शब्दार्थौ माधुर्यं श्रुतिमोदकृत् ।
—5 (ab)
- (V) शब्दानामभिधेयानां गुणोत्कर्षो यदाश्रया ।
तदौदार्यं मत्तं " " ॥
—9
शब्दार्थयोर्गुणोत्कर्षो यत्र सा स्यादुदारता ।
—6 (cd)

Chapter VI • Rīti nīśaya Chapter V . Alankāranirṇaya

4 (ab) Four-fold Rīti	1
6-7, 9, 11, 13	9, 10, 11, 12
15-16 Inherent relation between Guṇas and Rasas	13-14

Chapter VII: Vṛtti-niścaya Chapter VIII: Vṛtti-nirūpaṇa

The treatment of Vṛttis in SC is in close agreement with that of PRY whereas that in Alaṅkārasaṅgraha is in very close agreement with the one in Nāṭyaśāstra.

Chapter IX :
Alaṅkāranirṇaya

Chapter V :
Alaṅkāranirṇaya

In the treatment of the Arthālaṅkāras Vijayavarṇī and Amṛtānandayogin are heavily indebted to Daṇḍī's Kāvyaḍarśa. Vijayavarṇī deals with thirty-three Alaṅkāras as found in Daṇḍī's work and in Alaṅkārasaṅgraha, but, in addition, he treats of fourteen Alaṅkāras probably in accordance with Rudrata's Kāvyaḍalaṅkāra.

Chapter X ·
Doṣaḡaṇanirṇaya

Chapter VI :
Doṣaḡaṇanirṇaya

The treatment of this topic of Doṣas (and the peculiar circumstances in which they cease to be so) in both the works is after Maṁmaṭa's Kāvyaḡrakāśa (Ullāsa VII).

Appendix-E

पारिभाषिकाणामन्येषां च विशिष्टानां शब्दानां विशिष्टस्थल-
सूचिका मातृकावर्णक्रमेणानुक्रमणी

अक्रमम् १०६१	अनियम (अर्थः) १०१३३
अब्रह्मलक्षणा २१७	अनुक्तवाच्यम् (= अनभिहित- वाच्यम्) १०८१
अतिशयोक्ति (= अतिशयोक्ति) १ १७५ १ १७६-१७७	अनुकूल (नायकः) ४१८
अतिशयोपमा १३१-३२	अनुवितार्थम् १०२६
अतिहसितम् ३७०	अनुशास्त्रोपलंकारः ९१५८-१५९
अतीतसाध्यगोचरानुमानालंकारः १ २७८-२७९	अनुभाव ३१६
अतीताक्षेपालंकार १ १५१-१५२	अनुमानम् ९२७६
अत्यपकृष्टसमुच्चय १ २७३-२७४	अनुशयाक्षेपालंकार ९१६८-१६९
अत्युत्कृष्टसमुच्चयालंकार १.२७२-२७३	अनुशोशाक्षेपालंकारः १ १६७-१६८
अद्भुताख्यरसबदलंकार १ २१६-२१७	अनूहा (नायिका) ४५०
अद्भुतातिशयोक्ति १ १७९-१८०	अन्त्य (वर्ति) क्रियादीपकम् ९११८-११९
अद्भुतोपमा १३३-३४	अन्त्यवर्तिक्रियापददीपिकालंकार १ ११०-१११
अद्भुतो रस ३ १०५	अन्त्यवर्तिगुणपददीपिकालंकारः ९१११-११२
अधिकपदम् १०७५	अन्त्यवर्तिद्वयपददीपिकालंकार ९११२-११३
अनागताक्षेपालंकार १ १५३-१५४	
अनादराक्षेपालंकारः १ १६०-१६१	

अन्त्यवर्तिसंज्ञापदवीपकमलंकारः ९*११३-११४	अमङ्गलम् (अशूलम्) १०*१९ अयुक्तरूपकम् ९ ७४-७५ अयुक्ताद्यन्तरन्यास* ९*१३३-१३४ अर्थ (नियामक) २*३६ अर्थव्यक्तिः ५*२७ अर्थकृतविरोधालकारः ९*२०७- २०८
अभ्यशाब्दसन्धि (= शाब्दान्तर- सन्धि , नियामक) २ ३७	अर्थान्तरन्यासः ९ १२७ *
अभ्यापदेश ९ १८५-१८६	अर्थान्तरालोपालकार ९*१७१- १७२
अभ्योन्योपमा ९*२७-२८	अर्थान्तरैकवाचकम् १०*८७
अपह्नव (= अपह्नुति) ९ १९५	अर्थालंकारः ९*७
अपुष्ट (अर्थ) १०*१०१	अर्थावृत्ति ९ ८७-८८
अपूर्वसमासोक्ति ९ १८५-१८६	अलकार. ९*३
अप्रतीतम् १०*३२	अवयवरूपकम् ९ ७०-७१
अप्रयुक्तम् १०*१३	अवयविरूपकम् ९*७१-७२
अप्रशास्तनिदर्शनालकार ९*२६३-२६४	अवहसितम् ३*७०
अप्रस्तुतार्थम् १०*८३	अविरुद्धक्रियाश्लेषः ९ २५५-२५६
अप्रस्तुतप्रकासनम् (= अप्रस्तुत- प्रशंसा) ९ २२३, ९ २२४-२२५, ९*२२५-२२६	अविरुद्धश्लेष ९ २५९-२६०
अस्थानस्थपदम् (= अपदस्थितम्) १० ७१	अवसरः ९*२८२, ९ २८३-२८४
अस्थानस्थसमासम् १० ७३	अवाचकम् १० १०
अभवन्मतयोगम् १०*९३	अविमृष्टविधेयाशम् १०*२८
अभावरूपनिर्वर्त्यविषयहेत्वलकार ९*९४-९५	अवलोलम् १० १७
अभिन्नपदद्विलिप्तम् ९*२५१-२५२	अवलोल. (अर्थः) १० ११९
अभिसारिका ४*१०१	असमर्थम् १०*५
अभूतोपमा ९ ४७-४८	असाधारणोपमा ९*४६-४७

असभावितोपमा ९*४८-४९	इन्द्रोवरवर्णः ३*११७
असमतपराथम् १० ८५	उक्तविरुद्ध (अर्थः) १०*१२७
अहेतुक (= निनिमित्तः, अर्थ.) १० ११५	उत्तम (हास्यरस.) ३*६९
आक्षेप. २ ४	उत्प्रेक्षा ९ ११९
आक्षेपरूपकम् ९ ८१-८२	उदात्तम् (अलकार.) ९*१९२
आचिख्यासोपमा ९*४१-४२	उद्गापनो विभाव ३*१५
आदिर्विनिक्रियापददोषकालकार ९ १००-१०१	उपनायकाः ४*२९
आदिवर्तिगुणपददोषकालकार ९ १०१-१०२	उपमा ९*२३
आदिवर्तिजातिपददोषकालकार ९ ९९-१००	उपमापल्लव ९*२००
आदिवर्तिद्रव्यपददोषकालकार ९*१०२-१०३	उपमारूपकम् ९ ७९-८०
आदि वर्तिसजापददोषकालकार ९ १०३-१०४	उपमाश्लेष ९ २६०-२६१
आधिबयोपेतभेदलक्षणव्यति- रेकालकार ९ १४३-१४४	उपहतलुप्तविसर्गम् १०*४४
आरभटो ७ ५	उपहसितम् ३ ७०
आथ (काव) २*४	उपायाक्षेपालकारः ९ १६५-१६६
आलम्बनो विभाव ३ १५	उभयव्यतिरेकालकारः ९ १४०- १४१
अ वृत्तिः (अलकार) ९*८७	उभयावृत्तिः ९*८९-९०
आगीः (अलकार) ९ २६८, ९*२६९-२७०, ९*२७०-२७१	ऊर्जस्विनाम लकारः ९*२२१, ९*२२२-२२३
आशोवचनाक्षेपालकारः ९ १६१-१६२	एकव्यतिरेकालकारः ९ १३९- १४०
	एकाद्यदोषकम् ९ ११७-११८
	एकावली ९ २९४, ९*२९५-२९६
	ऐश्वर्यमहत्त्वोवात्तालकार ९*१९४-१९५
	ओज ५*२३

औचित्यम् (नियामकः) २३८	कष्टकल्पना (रसदोष) १०१९१-१९२
औदार्यम् ४४१, ५८-९, ५३१	कान्ति ४१२७, ५१५, ५१६
औदार्यम् (अलंकारः) ४१३५	कारणाक्षेपालकारः ९१५६-१५७
गमितम् १०५१	कारणान्तरकल्पनाविभावना ९१४८-१४९
गाम्भीर्यम् ४४०	कार्यकारणसहजम्कथनसहोक्तिः ९२४४-२४५
गुण २१२	कार्याक्षेपालकार ९१५७-१५८
गुणवैकल्यविशेषोक्तिः ९२२७-२२८	काल (नियामकः) २३५
गुणमहभावकथनसहोक्तिः ९२४१-२४२	किलकिञ्चित् ४१४७
गुणाष्टकम् ४३५	कुट्टमितम् ४१५३
गौडो रीति ६९	कौशिकी ७४
गौणोऽर्थः २२२	क्रम (अलंकार) ९१८९
गौरवर्ण ३१२१	९१९०-१९१, ९१९१-१९२
ग्राम्यम् १०१५	क्रिया २११
ग्राम्य (अर्थः) १०१०९	क्रियावैकल्यविशेषोक्ति ९२२९-२३०
कथितपदम् १०५७	क्रियासहभावकथनसहोक्ति ९२४२-२४३
कनिष्ठा (मध्या) ४८१	क्रियायैका अभिन्नश्लेषः ९२५४-२५५
करुणाख्यरस ३७४	विलष्टम् १०२३
करुणाख्यरसबदलकारः ९२१३-२१४	खण्डना ४९९
करुणात्मक (विप्रलम्भशृंगारः) ४१०७	चक्षु प्रीति (= नयनप्रीतिः, अवस्था) ३४४
कलहान्तरिता ४९१	चटूपमा ९४४-४५
कषायवर्ण ३११९	
कष्ट (अर्थ) १०१०३	

शेष्टादिः (नियामकः) २४१

शेष्टाप्रकाशनशैवालकारः

९१८८-१८९

श्वेतसस्कृति १०१२

शषन्य (हास्यरस) ३६९

शहत्यजहती लक्षणा २१९

शहल्लक्षणा २१५

शागः (अवस्था) ३५०

जाति २११, ९१५

जातिवैकल्यविशेषोक्ति

९-२२८-२२९

जुगुप्साकरम् (अवलीलम्) १०२०

जापकहेत्वलकारः ९९७-९८

ज्येष्ठा (मध्या) ४८१

तनुता (अवस्था) ३५२

तत्त्वाख्यानोपमा ९४५-४६

तत्त्वापह्नुरूपकम् ९८४-८५

तुल्ययोग (= तुल्ययोगिता)

९२३३, ९२३४

तेज ४३६

त्यक्तपुनस्वीकृत १०१३९

त्रपानाशा (अवस्था) ३५६

दक्षिणः (नायक) ४२४

दयावीर ३८७

दानवीर. ३८७

दानवीररसाख्यरसवदलकारः

९२११-२१२

दीपकम् ९९८

दीप्ति. ४१२९

दुष्कम. १०१११

दूत्य ४१११

देश. (नियामकः) २४०

द्रव्यम् (मुख्यार्थः) २१२

द्रव्यवैकल्यविशेषोक्तिः

९२३०-२३१

द्राक्षापाकः ८६

धर्मवीररसाख्यरसवदलकार

९२१२-२१३

धर्मक्षिपालकार ९१५४-१५५,

९१७३-१७४

धर्मोपमा ९२४-२५

धर्म्यक्षिपालकार. ९१५५-१५६

धीरललित ४९

धीरशान्तः ४११

धीराधीराप्रगल्भा ४७९

धीरोदात्तः ४७

धीरोद्धत. ४१३

धूम्रवर्णः ३१२२

धृष्ट. (नायक) ४२२

धैर्यम् ४१३७

ध्वनि. २२४

कन्दिः ३१२३	पञ्चपरमेष्ठिनः ३११०
नागरिकः ४३२	पत्तप्रकर्षम् १०९५
नायकः ४५	पदबोधाः १०४
नायिका ४४४	पदावृत्तिः ९८८-८९
नालिकेरपाक. ८७	परकीया (नायिका) ४५२-४५४
निदर्शनम् ९२६१	परब्रह्मा (अधिदेवता) ३१२५
निन्दापरस्तुत्ययोगिता ९२३७-२३८	परबशाक्षेपालकार ९१६४-१६५
निन्दास्तुतिः ९१८६, ९१८७-	परिकर. ९२९६, ९२९७-२९८
१८८	परिसंख्या ९२९८, ९२९९-३००,
	९३००-३०१
निन्दोपमा ९३९-४०	
नियमनिषेधसूत्र. ९२५८-२५९	परिवृत्तिः ९२४५
नियमोपमा ९२९-३०	पर्यायोक्तम् ९२३८, ९२३९-२४०
नियामका २२९	पाक ८५
निरर्थकम् १०८	पाञ्चाली रीति. ६११
निर्णयोपमा ९३६-३७,	पीठमर्दः ४३१
९२९३-२९४	पुनरुक्तः (अर्थ) १०११७
निर्वर्त्यकारकविषयहेत्वर्लकार.	पूर्वानुरागः ४१०५
९९३-९४	प्रकरणम् (नियामक) २३६
निश्चय (नय) ३११०	प्रगल्भता ४.६५४ १३३
निश्चयातिशयोक्तिः ९१७८-१७९	प्रगल्भा अधीरा ४७७
निश्चयान्त ९२९३-२९४	प्रगल्भा घीरा ४७४
नीलजीमूतसंनिभः ३१९३	प्रतिकूलग्रहः (रसदोग)
श्वेतगुणाः ४४	१०१९२-१९३
नेयार्थम् १०२१	प्रतिकूलवर्णम् १०६९
न्यूनपदम् १०५५	प्रतिनायका. ४३३

प्रतिवस्तूपमा ९५४-५५, ९२८४, ९२८५-२८६	बुद्धिमहत्त्वोदात्तालकार ९१९३-१९४
प्रतिषेधोपमा ९४३-४४	भग्नप्रक्रमम् १०८९
प्रतीयमानसादृश्यभेदमात्रव्यति- रेकालकार ९१४२-१४३	भयानकरसः ३९४
प्रतीयमाना (उत्प्रेक्षा) ९१२१	भयानकाख्यरसवदलंकार ९२१७-२१८
प्रभुत्वाक्षेपालकार ९१५९-१६०	भारती ७६
प्रवास. ४१०६	भावः ४११८
प्रशस्तनिदर्शनालकार ९२६२- २६३	भावा ३१२
प्रशसोपमा ९४०-४१	भावभास १०१८४
प्रश्नोत्तरालकार. ९३०१	भाविसाध्यगोचरानुमानालकार ९२७९-२८०
प्रसन्नता ५१८	भ्रान्तिमदलंकार. ९२८९-२९०
प्रसिद्धिविदुः (अर्थ) १०१२३	भ्रान्तिमान् ९२८८
प्रसिद्धिहतम् १०५९	भिक्षपदाक्षिण्टम् ९२५२-२५३
प्राप्यविषयकारकहेतुवलकार ९९६-९७	भिक्षाभिन्नाविषेणसमासोक्ति. ९१८४-१८५
प्रेयोऽलकार ९२०१, ९२०२-२०३	भूषणार्थी २७
प्रोषितभर्तृका ४९७	मध्यमः (हास्यरसः) ३६९
बहूपमा ९४९-५०	मध्यमा आरभटी ७१५
बिम्बोक ४१५५	मध्यमा कैशिकी ७१४
बीभत्सरस ३९९	मध्या (नायिका) ४६३
बीभत्साख्यरसवदलकार. ९२१४-२१५	मध्या अधीरा ४७०
	मध्या घीरा ४६८
	मन सवित (अवस्था) ३४६
	मरणम् (अवस्था) ३६२

महाकालः ३१२२	युक्ताथन्तिरग्यासः ९१३४-१३५
मध्यवर्तिक्रियापददीपकालंकारः ९१०५-१०६	युद्धवीर ३८७
मध्यवर्तिगुणपददीपकालंकारः ९१०६-१०७	युद्धवीररसाख्यरसवदलंकारः ९२१०-२११
मध्यवर्तिजातिपददीपकालंकारः ९१०४-१०५	रक्तवर्ण ३१२०
मध्यवर्तिद्रव्यपददीपकालंकारः ९१०७-१०८	रसः ३५
मध्यवर्तिसज्ञापददीपकालंकारः ९१०८-१०९	रसविच्युतम् (= रसच्युतम्) १०७७
माधुर्यम् ४३८, ४१३१, ५२५	रसवान् (= रसवद्) अलंकारः ९२०८
मानः ४१०६	रसाभास १०१८१
मार्दवानुगनादभाक् २५	रीति ६३
मालादीपकम् ९११४-११५	रुद्र. (अधिदेवता) ३१२०
मालोपमा ९५१-५२	रूपकम् ९६५
मुद्योऽर्थः २१०	रोषाक्षेपालंकार ९१६६-१६७
मुग्धा (नायिका) ४६१	रोचिक (कवि) २३
मूच्छा (अवस्था) ३६०	रोद्ररस ३८०
मोट्टायितम् ४१४९, ४१५०	रोद्राख्यरसवदलंकार ९२१८-२१९
मोह (अवस्था) ३५८	लक्षणा २१३
मोहोपमा ९३४-३५, ९२८९-२९०	ललितम् ४४२, ४१५७
यत्नाक्षेपालंकारः ९१६३-१६४	लवः ९१८६
युक्तरूपकम् ९७३-७४	लाटो वृत्ति (= रीतिः) ६१३
युक्तायुक्ताथन्तिरग्यासः ९१३५-१३६	लिङ्गम् (नियामक) २३७
	लीला ४१३९
	वक्रोक्तिः ९२७४, ९२७५-२७६

बन्धोपोपनक्षालंकारः	विप्रलम्बा ४९३
९१८७-१८८	विप्रलम्भशुद्धार ४१०४
वर्तमानसाध्यपोचरानुमाना-	विप्रलम्भशुद्धाररस. ३४०
लंकार ९२७७-२७८	विभावः ३१४
वर्तमानाक्षेपालकारः ९१५२-१५३	विभावना ९१४७
वस्तूपमा ९२५-२६	विभ्रमः ४१४५
वाक्यार्थोपमा (एकेवशब्दा)	विरहोत्कण्ठिता ४९५
९५२-५३	विरुद्धक्रियाश्लेषः ९२५६-२५७
वाक्यार्थोपमा (अनेकेवशब्दा)	विरुद्धमतिकृत् १०३०
९५३-५४	विरोधोपमा ९४२-४३
वाचिक. (कवि) २४	विलास ४३७, ४१४१
वाच्योत्प्रेक्षा ९१२१, ९१२५-	विपर्ययार्थान्तरन्यासः ९१३६-१३७
१२६, ९१२६-१२७	विपर्यालोपमा ९२६-२७
वासकसज्जिका ४८९	विरुद्धरूपकम् ९७७-७८
वासुदेव ३११७	विरुद्धार्थदीपकम् ९११५-११६
विकार्यविषयकारकहेत्वलंकार	विरोधक (= विरोध) ९२०३
९९५-९६	विरोधातिशयोक्ति ९१७९-१८०
विक्रियोपमा ९५०-५१	विरोधिता (= विरोधः,
विघ्नराज ३११८	नियामक) २३३
विच्छित्ति ४१४३	विवेकी (कवि) २७
विट ४३२	विशेषपरिवृत्त (अर्थः) १०१३३
विदूषक ४३०	विशेषस्थार्थान्तरन्यासः
विधाता (अविदेवता) ३१२४	९१३०-१३१
विधुप्रबन्ध १२८	विशेषोक्ति ९२२६
विध्यनुवादविवृत्तः (अर्थ.) १०१३७	विश्वव्यापिनामार्थान्तरन्यासः
विद्याविरुद्ध (अर्थ) १०१२५	९१२८-१२९
विप्रयोग. (नियामकः) २३२	

विषमं रूपकम् ९*७५-७६	व्याजस्तुत्यलकारः ९*२५५-२६६
विषमः ९*२८०	व्रीडाकरम् (अवलीकम्) १०*१८
विषयापह्नवालंकारः ९*१९९-२००	शक्तिः (= सामर्थ्यम्, नियामकः) २*३
विषयद्वेषक. (विषयद्वेषः, अवस्था) ३*५४	शठः (नायकः) ४*२०
विसदृशोर्थपरिवृत्तिः ९*२४७-२४८	शतमन्यु. ३*१२१
विसंघि १०*६४	शब्दकृतविरोधः ९ २०४-२०५
विहसितम् ३*७०	शब्दालंकरणतयः ९*५
वीररसः ३*८६	शान्तरसः ३*१०९
विहृतम् ४ १५९	शान्तरसाख्यरसबदलंकारः ९ २१९-२२०
वृत्तिः ७ ३	शान्तिजिनः ९*२१२
वैदर्भी रीति. ६*७	शिल्पिकः (कविः) २ ५
व्यक्तगूढोत्तरप्रश्नोत्तरालंकारः ९ ३०४-३०५	शृङ्गाररसः ३ ८
व्यक्तप्रश्नगूढोत्तरालंकारः ९*३०३-३०४	शृङ्गाराख्यरसबदलकारः ९*२०९-२१०
व्यक्तप्रश्नोत्तरालकार. ९*३०२-३०३	शृङ्गारार्णवचन्द्रिका १ २२
व्यक्ति (नियामक) २*३९	शोभा ४ ३९, ४ १२५
व्यतिरेकः ९ १३८	विलष्टम् ९ २५०
व्यतिरेकरूपकम् ९*८०-८१	श्राद्धदेवः ३*११९
व्यभिचारिभाव. ३ १९	श्रुतिकटु १० ७
व्यर्थोक्त १० ११३	विलष्टव्याजस्तुतिः ९ २६६-२६७
व्यवहार (नय) ३*११०	विलष्टाक्षेपालंकारः ९*१६९-१७०
व्यस्तरूपकम् ९ ६७-६८	विलष्टार्थदीपकम् ९*११६-११७
व्याहत. (अर्थ) १०*१०७	विलष्टार्थान्तरम्यासः ९*१३१-१३२
व्याजस्तुतिः ९ २६४	इलेषः ५*११, ५*१३

इलेषोपमा ९३७-३८	सनियमइलेष ९२५७-२५८,
संयोग (नियामक) २३२	९३००-३०१
सहाय (अलकार) ९२९०,	समता (= साम्यकम्) ५२९
९२९१-२९२, ९२९२-२९३,	समस्तरूपकम् ९६६-६७
९२९३-२९४	समस्तव्यस्तरूपकम् ९६८-६९
सहायाक्षेपालकार ९१७०-१७१	समाधानरूपकम् ९८२-८३
सहायातिशयोक्ति ९१७७-१७८	समाधि ५२०, ५२१
सहायोपमा ९३५-३६, ९२९३-	समानत्रिशेषणभिन्नविशेष्य-
२९४	समासोक्ति ९१८३-१८४
सकलरूपकम् ९६९-७०	समाप्तपुनरात्तम् १०७९
संकर ९३०५, ९३०६-३०७,	समासोक्ति ९१८२
९३०७-३०८	समाहितम् ९२४८
सकीर्णम् १०५३	समुच्चय ९२७१
सकल्प (अवस्था) ३४८	समुच्चयोपमा ९३०-३१
सजातिव्यतिरेकालकार	सभोग (शृङ्गार) रस ३३७
९१४६-१४७	सविशेषणरूपकम् ९७६-७७
संचारिभावा (त्रयस्त्रिंशत्) ३२२	सहचरभिन्न १०१४१
सत्त्वम् ३१७	सहेतुव्यतिरेकालकार ९१४२-१४३
संतानोपमा ९३८-३९	सहोक्ति ९२४०, ९२४३
संदिग्धम् १०२४	साकाङ्क्ष (अर्थ) १०१२१
संदिग्ध (अर्थ) १०१०५	साक्षेपव्यतिरेकालंकार ९१४१-
सदृशव्यतिरेकालकार ९१४४-	१४२
१४५, ९१४५-१४६	साचिव्याक्षेपालकार ९१६२-
सदृशार्थपरिवृत्ति ९२४६-२४७	१६३
सनियम. (अर्थ) १०१२९	सात्वती ७७
	सात्विकाष्टकम् ३१८

सात्विकोभाव' ३'१७	स्वभावोक्ति. ९ १४
साधारणा (नायिका) ४ ५७	स्वरादि (नियामक') २ ४०
सामान्यव्यत्यय' (= अविशेष- परिवृत्त) १०'१३५	स्वरूपापह्नवालकार ९'१९६-१९७
सारालकृति' (= सारालकार.) ९ २८६, ९ २८७-२८८	स्वयन्ब्रह्मणम् (रसदोष) १० १८७
साहचर्यम् (नियामक) २'३४	स्वाधीनपतिका ४'८७
सुषाघवलवर्ण ३'११८	हतवृत्तम् १० ४६
सूक्ष्म ९'१८०, ९ १८१-१८२	हसितम् ३'६९
सौकुमार्यम् ५ ६	हाव ४ १२१
स्तुतिपरतुल्ययोगिता ९'२३५-२३६	हास्यरस ३ ६४
स्थायिभाव ३ ३	हास्याख्यरसबदलकार. ९ २१५- २१६
स्फटिकवर्णभाक् ३ १२५	हेतु ९ ९१, ९ ९२
स्मितम् ३'६९	हेतुरूपकम् ९ ७८-७९
स्थिरत्वम् (= स्थैर्यम्) ४ ३९	हेतुविशेषोक्ति ९ २३१-२३२
स्याद्वाद ३ १११, १० ९५	हेतूपमा ९ ५६-५७
स्वकीया (= स्वीया, नायिका) ४ ४८	हेत्वाक्षोपालकार. ९ १७२-१७३
स्वभावविभावना ९ १४९-१५०	हेमवर्ण ३ १२४
	हेला ४'१२३

Appendix-F

REFERENCES

1. Alaṅkārasaṅgraha of Amṛtānandayogin
– The Adyar Library, Adyar, 1949
2. Alaṅkārasaṅgraha by Amṛtānandayogin
– Śrī Venkatesvara Oriental Institute, Tīrupatī,
1950
3. Candrāloka of Jayadeva
– The Gujarati Printing Press, Bombay, 1923
4. Daśarūpaka of Dhanañjaya
– Nirṇaya-Sāgar Edition, Bombay, 1941
5. Kāvyaḍarśa of Daṇḍin
– Bhandarkar Oriental Research Institute, Poona,
1938
6. Kāvyaṁīmāṁsā of Rājasēkhara
– Oriental Institute, Baroda, 1934
7. Kāvyaṁprakāśā of Mammṭa
– Rajasthan Oriental Research Institute, Jodhpur,
1959.
8. Kāvyaġlankāra of Bhāmaha
– Kashi Sanskrit Series, Benares, 1928

9. Kāvyaśāstra of Rudraṭa
– Kāvyaśāstra 2, Nirṇaya-Sāgar edition, 1909
10. Kāvyaśāstrasūtravṛtti of Vāmana
– Published by Atmaram and Sons, Delhi, 1954
11. Nāṭyaśāstra of Bharatamuni
– Oriental Institute, Baroda, 1956.
12. Pratāprudrayasobhūṣana of Vidyānātha
– Bombay Sanskrit and Prakrit Series, No. LXV
1909
13. Sarasvatīkaṇṭhābharṇa by Bhojadeva
– Kāvyaśāstra 94, Nirṇaya Sāgar edition, Bombay,
1934
14. Vṛttaratnākara by Kedārabhatta,
– Nirṇaya Sāgar edition, 1908.
15. A History of Sanskrit Literature—A B Keith, 1928
16. History of Classical Sanskrit Literature
– M. Kṛṣṇamachariar, Madras, 1937.
17. The Sanskrit Drama—A B Keith, 1964
18. The Number of Rasas—V. Raghavan
The Adyar Library, Adyar, 1940.
19. Studies on Some Concepts of the Alankāraśāstra
– V. Raghavan
– The Adyar Library, Adyar, 1942.

20. Jaina Siddhānta Bhāskara, Vol. XXIII, Part I
December 1963 – PP 18-29 – Dr. Nemichandra
Shastri's article – Do Alankāra Granthon ki
Pāṇḍulipiyan
21. Prasasti-Sangraha, (PP 73-78) edited by
Pt K Bhujabali Sastri, Arrah, 1942



शुद्धिपत्रम्

पृ०	प०	एव पठितव्यम्
९	१६	साजहल्लक्षणेतरा
१३	१६	मात्स्विकाष्टकम्
२२	५	विनिष्कासिता.
२६	१८	शृङ्गाराष्टपरसे
२८	१५	लुब्धा धीरोद्धता
२९	४	॥ ३८ ॥
२९	५	शोभा या
४३	१७	गुणोत्कर्षा
४९	९	बोमत्स
५२	९	निष्पाकं
६४	१३	सुधासूनिर्णय
६८	२०	तन्त्रविदय
८६	२१	तद्धि पर्यायोक्त
१०७	१६	अममतपरार्थ
१०७	१९	इत्यमतपरार्थ—
१०९	२	व्यर्थीकृता
१०९	२२	[टिप्पणी अत्र १०७ तमस्य इलाकस्य मातु- कायामेव ऋटित द्वितीयार्धम् “व्याहनोऽर्थ स उक्त स्यात्तत्रनिश्चयकोविदे.” इति पूरणोपयम् इत्यह मन्ये ।]
११७	१२	नीरेजादिप्रवर्तनम्

MĀNIKACHANDRA D. J. GRANTHAMĀLĀ

* The Serial Numbers marked with asterisk are out of print

*1 **Laghiyastraya-Ādi-saṅgrahaḥ** : This vol. contains four small works : 1) *Laghiyastrayam* of Akalaṅkadeva (c 7th century A. D.), a small Prakaraṇa dealing with *pramāna*, *naya* and *pravacana*. Akalaṅka is an eminent logician who deserves to be remembered along with Dharmakīrti and others. His works are very important for a student of Indian logic. Here the text is presented with the Sk. commentary of Abhayacandrasūri. 2) *Svarūpasambodhana* attributed to Akalaṅka, a short yet brilliant exposition of *ātman* in 25 verses. 3-4) *Laghu-Sarvajña-siddhi* and *Bṛhat-Sarvajña-siddhi* of Anantakīrti. These two texts discuss the Jaina doctrine of Sarvajñatā. Edited with some introductory notes in Sk. on Akalaṅka, Abhayacandra and Anantakīrti by PT. KALLAPPA BHARAMAPPA NITAVE, Bombay Saṁvata 1972, Crown pp. 8-204, Price As. 6/-

*2 **Sāgara-dharmāmṛtam** of Āśādhara : Āśādhara is a voluminous writer of the 13th century A. D., with many Sanskrit works on different subjects to his credit. This is the first part of his *Dharmāmṛta* with his own commentary in Sk dealing with the duties of a layman. PT. NATHURAM PREMI, adds an introductory note on Āśādhara and his works. Ed by PT. MANOHARLAL, Bombay Saṁvat 1972, Crown pp. 8-246, Price As 8/-

*3. **Vikrāntakauravam** or **Sulocanānāṭakam** of Hastimalla (A.D. 13th century) A Sanskrit drama in six acts. Ed. with an introductory note on Hastimalla and his works by PT. MANOHARLAL, Bombay Samvat 1972, Crown pp 4-164, Price As. 6/-.

*4. **Pārśvanātha-caritam** of Vādirājasūri : Vādirāja was an eminent poet and logician of the 10th century A. D. This is a biography of the 23rd Tirthaṅkara in Sanskrit extending over 12 cantos Edited with an introductory note on Vādirāja and his works by PT MANOHARLAL, Bombay Samvat 1973, Crown pp 18-198, Price As 8/-

*5. **Maithilīkalyāṇam** or **Sitānāṭakam** of Hastimalla : A Sk drama in 5 acts, see No 3 above Ed with an introductory note on Hastimalla and his works by PT MANOHARLAL, Bombay Samvat 1973 Crown pp 4-96, Price As 4/-

6 **Ārādhanaśāra** of Devasena A Prākṛit work dealing with religio-didactic topics Prākṛit text with the Sk commentary of Ratnakīrtideva, edited by PT. MANOHARLAL, Bombay Samvat 1973, Crown pp 128 Price As 4/6

*7 **Jinadattacaritam** of Gunabhadra A Sk. poem in 9 cantos dealing with the life of Jinadatta, edited by PT. MANOHARLAL, Bombay samvat 1973, Crown pp. 96, Price As 5/-.

8. **Pradyumnacarita** of Mahāsenācārya . A Sk. poem in 14 cantos dealing with the life of Pradyumna. It is composed in a dignified style Edited by

PTS. MANOHARLAL and RAMPRASAD, Bombay Samvat 1973, Crown pp. 290, Price As. 8/-

9. **Cāritrasāra** of Cāmuṇḍarāja : It deals with the rules of conduct for a house-holder and a monk. Edited by PT INDRALAL and UDAYALAL, Bombay Samvat 1974, Crown pp. 103, Price As. 6/-.

*10. **Pramāṇanirṇaya** of Vādirāja A manual of logic discussing specially the nature of Pramāṇas. Edited by PTS INDRALAL and KHUBCHAND, Bombay Samvat 1974, Crown pp. 80, Price As. 5/-.

*11. **Ācārasāra** of Vīranandi · A Sk. text dealing with Darśana, Jñāna etc. Edited by PTS. INDRALAL and MANOHARLAL, Bombay Samvat 1974, Crown pp. 2-98, Price As 6/-

*12. **Trilokasāra** of Nemiçandra : An important Prākṛit text on Jaina cosmography published here with the Sk. commentary of Mādhvacandra. Pt. Premi has written a critical note on Nemiçandra and Mādhvacandra in the Introduction Edited with an index of Gāthās by PT MANOHARLAL, Bombay Samvat 1975, Crown pp 10-405-20, Price Rs 1/12/-.

*13. **Tattvānuśāsana-ādi-saṁgrahaḥ** : This vol. contains the following works. 1) *Tattvānuśāsana* of Nāgasena 2) *Iṣṭopadeśa* of Pūjyapāda with the Sk. commentary of Āśādhara. 3) *Niṭisāra* of Indranandi 4) *Moksapañcāśikā*. 5) *Śrutāvātāra* of Indranandi. 6) *Adhyātmataraṅgini* of Somadeva. 7) *Bṛhat-pañca-namaskāra* or *Pātrakesari-stotra* of Pātrakesari with a Sk. commentary 8) *Adhyātmāṣṭaka* of Vādirāja. 9) *Dvā-*

trimsika of Amitagati 10) *Vairāgyamanimāla* of Śricandra. 11) *Tattvasūtra* (in Prākṛit) of Devasena. 12) *Śrutaskandha* (in Prākṛit) of Brahma Hemacandra. 13) *Dhāḍast-gāthā* in Prākṛit with Sk. chāyā 14) *Jñānosūtra* of Padmasimha, Prākṛit text and Sk chāyā. PT. PREMI has added short critical notes on these authors and their works Edited by PT MANOHARLAL, Bombay Samvat 1975, Crown pp 4-176, Price As. 14/-.

*14. **Anagāra-dharmāmṛta** of Āśādhara Second part of the *Dharmāmṛta* dealing with the rules about the life of a monk Text and author's own commentary. Edited with verse and quotation Indices by PIS BANSIDHAR and MANOHARLAL, Bombay Samvat 1976, Crown pp. 692-35, Price Rs. 3/8/-

*15 **Yuktyanusāsana** of Samantabhadra A logical Stotra which has wielded great influence on later authors like Siddhasena, Hemacandra etc Text published with an equally important commentary of Vidyānanda. There is an introductory note on Vidyānanda by PT. PREMI. Ed by PIS INDRALAL and SHRILAL, Bombay Samvat 1977, Crown pp 6-182, Price As 13/

*16 **Nayacakra-ādi-saṅgraha** : This vol contains the following texts 1) *Laghu-Nayacakra* of Devasena, Prākṛit text with Sk chāyā 2) *Nayacakra* of Devasena, Prākṛit text and Sk. chāyā 3) *Ālapapaddhati* of Devasena There is an introductory note in Hindi on Devasena and his *Nayacakra* by PT PREMI Edited by PT. BANSIDHARA with Indices, Bombay Samvat 1977, Crown pp. 42-148, Price As 15/-.

*17. **Ṣaṭprābhṛtādi-saṅgraha** : This vol. contains the following Prākṛit works of Kundakunda of venerable authority and antiquity. 1) *Daśana-prābhṛta*, 2) *Cāritra-prābhṛta*, 3) *Sūtra-prābhṛta*, 4) *Bodha-prābhṛta*, 5) *Bhāva-prābhṛta*, 6) *Mokṣa-prābhṛta*, 7) *Liṅga-prābhṛta*, 8) *Śīla-prābhṛta*, 9) *Rayaṇasūtra* and 10) *Dvādaśānupekṣā*. The first six are published with the Sk. commentary of Śrutasaṅgāra and the last four with the Sk. chāyā only. There is an introduction in Hindi by P. F. PREMI who adds some critical information about Kundakunda, Śrutasaṅgāra and their works. Edited with an Index of verses etc. by P. T. PANNALAL SONI, Bombay Samvat 1977, Crown pp. 12-442-32, Price Rs 3/.

*18 **Prāyascittādi-saṅgraha** : The following texts are included in this volume 1) *Chedapīṇḍa* of Indra-nandi Yogīndra, Prākṛit text and Sk. chāyā. 2) *Chedaśūtra* or *Chedanavati*, Prākṛit text and Sk chāyā and notes 3) *Prāyascitta-cūlikā* of Gurudāsa, Sk. text with the commentary of Nandīguru. 4) *Prāyascittagrantha* in Sk verses by Bhaṭṭākalaṅka There is a critical introductory note in Hindi by P. T. PREMI. Edited by P. T. PANNALAL SONI, Bombay Samvat 1978, Crown pp 16-172-12, Price Rs. 1/2/-

*19 **Mulācāra** of Vaṭṭakera, part I : An ancient Prākṛit text in Jaina Śauraseni, Published with Sk. chāyā and Vasunandi's Sk commentary. A highly valuable text for students of Prākṛit and ancient Indian monastic life. Edited by P. T. PANNALAL, GAJADHARALAL and SHRILAL, Bombay Samvat 1977, Crown pp. 516, Price Rs. 2/4/-.

20 Bhāvasaṅgraha-ādiḥ : This vol. contains the following works 1) *Bhāvasaṅgraha* of Devasena, Prākṛit text and Sk. chāyā 2) *Bhāvasaṅgraha* in Sk verse of Vāmadeva Paṇḍita 3) *Bhāva-triḥṅgī* or *Bhūvasaṅgraha* of Śrutamuni, Prākṛit text and Sk chāyā 4) *Āsraṅgī* of Śrutamuni, Prākṛit text and Sk chāyā There is a Hindi Introduction with critical remarks on these texts by PT PREMI Edited with an Index of verses by PT PANNALAL SONI, Bombay Sarvat 1978, Crown pp 8-284-28, Price Rs. 2/4/-

21. Siddhāntasāra-ādi-Saṅgraha : This vol contains some twentyfive texts 1) *Siddhāntasāra* of Jinacandra, Prākṛit text, Sk chāyā and the commentary of Jñānabhūṣaṇa. 2) *Yogasāra* of Yogicandra, Apabhraṁśa text with Sk. chāyā 3) *Kallānāloyanā* of Aṅgabhāra, Prākṛit text with Sk. chāyā. 4) *Amṛtāṅgī* of Yogīndradeva, a didactic work in Sanskrit 5) *Ratnamālā* of Sivakoṭi 6) *Śāstrasārasamuccaya* of Māghanandi, a Sūtra work divided in four lessons. *Arhat-pravacanam* of Prabhācandra, a Sūtra work in five lessons. 8) *Āptasvarūpam*, a discourse on the nature of divinity 9) *Jñānalocanastotra* of Vādirāja (Pomarājasuta). 10) *Samavasāranastotra* of Viṣṇusena 11) *Sarvajñastavana* of Jayānandasūri 12) *Pārśvanāthasamasyā-stotra* 13) *Gītrabandhastotra* of Guṇabhadra 14) *Maharṣi-stotra* (of Āśādharma). 15) *Pārśvanāthastotra* or *Lakṣmīstotra* with Sk. commentary. 16) *Nemināthastotra* in which are used only two letters viz *n* & *m* 17) *Śaṅkhadevāṣṭaka* of Bhānukīrti 18) *Nyūtmāṣṭaka* of Yogīndradeva in Prākṛit. 19) *Tattvabhāvana*

or *Sūmyika-pāṭha* of Amitagati 20) *Dharmarājya* of Padmanandi. Prākṛit text and Sk chāyā 21) *Sūrasamuccaya* of Kulabhadra. 22) *Aṅgapaṇṇatti* of Śubhacandra Prākṛit text and Sk. chāyā. 23) *Śrutavātāra* of Vibudha Śrīdhara 24) *Śalākānikṣepana-niṣkāsaṇa-ovaranam* 25) *Kalyāṇamālā* of Āśadhara
 PT PREMI has added critical notes in the Introduction on some of these authors. Edited by PT PANNALAL SONI Bombay Samvat 1979 Crown pp 32-324, Price Rs 1/8/-

*22 **Nītivākyaṃṛtam** of Somadeva An important text on Indian Polity, next only to *Kautilya-Arthaśāstra*. The Sūtras are published here along with a Sanskrit commentary There is a critical Introduction by PREMI comparing this work with Arthaśāstra. Edited by PT. PANNALAL SONI, Bombay Samvat 1979, Crown pp 34-426, Price Rs 1/12/-

*23. **Mulācāra** of Vaṭṭakera, part II : Prākṛit text, Sk chāyā and the commentary of Vasunandi, see No 19 above. Bombay Samvat 1980, Crown pp. 332, Price Rs 1/8/-

24 **Ratnakaraṇḍaka-śrīvākācāra** of Samantabhadra With the Sanskrit commentary of Prabhācandra. There is an exhaustive Hindi Introduction by PT. JUGAL KISHORE MUKTHAR, extending over more than pp. 300, dealing with the various topics about Samantabhadra and his works. Bombay Samvat 1982, Crown pp. 2-84-252-114, Price Rs. 2/-.

25. **Pañcasāgraha** of Amitagati : A good compendium in Sanskrit of the contents of *Gūmmatasāra*. Edited with a note on the author and his works by PT. DARBARILAL. Bombay 1927, Crown pp. 8-240, Price As. 13/-.

26. **Lāṭisāhiti** of Rājamalla . It deals with the duties of a layman and its author was a contemporary of Akbar to whom references are found in his compositions. There is an exhaustive Introduction in Hindi by PT. JUGALKISHORE Edited by PT. DARBARILAL, Bombay Saṃvat 1948, Crown pp. 24-136, Price As 8/-

27. **Purudevācampū** of Arhaddāsa A Campū work in Sanskrit written in a high-flown style Edited with notes by PF JINADASA, Bombay Saṃvat 1985, Crown pp. 4-206, Price As 12/-.

28. **Jaina-Śilālekha-saṃgraha** : It is a handy volume living the Devanāgarī version of *Epigraphia Carnatica* II (Revised ed.) with Introduction, Indices etc by PROF. HIRALAL JAIN, Bombay 1928, Crown pp 16-164-428-40, Price Rs. 2/8-

29-30-31. **Padmacarita** of Raviseṇa This is the Jaina recension of Rāma's story and as such indispensable to the students of Indian epic literature. It was finished in A. D. 676, and it has close similarities with *Palmarium* of Vimala (beginning of the Christian era). Edited by PT. DARBARILAL, Bombay Saṃvat 1985, vol. i, pp. 8-512 : vol ii, pp. 8-436 ; vol. iii, pp. 8-446, Thus pp. about 1400 in all, Price Rs. 4/8/-.

32-33. **Harivamśa-purāṇa** of Jinasena I : This is the Jaina recension of the Kṛṣṇa legend. These two volumes are very useful to those interested in Indian epics. It was composed in A. D. 783 by Jinasena of the Punnāṣa-saṃgha. There is a Hindi Introduction by PT PREMIJI. Edited by PT DARBARILAL, Bombay 1930, vol 1 and ii, pp. 48-12-806, Price Rs. 3/8/-.

34. **Nītivākya-mṛtam**, a supplement to No. 22 above : This gives the missing portion of the Sanskrit commentary, Bombay Samvat 1989, Crown pp. 4-76, Price As 4/-.

35. **Jambūsvāmi-caritam** and **Adhyātma-kama-lamārtaṇḍa** of Rājamalla . See No. 26 above. Edited with an Introduction in Hindi by PT. JAGADISHCHANDRA, M. A., Bombay Samvat 1993, Crown pp. 18-264-4, Price Rs. 1/8/

36. **Triṣaṣṭi-smṛti-śāstra** of Āśādhara : Sanskrit text and Marāṭhī rendering. Edited by PT. MOTILAL HIRACHANDA, Bombay 1937, Crown pp 2-8-166, Price As. 8/-.

37. **Mahāpurāṇa** of Puṣpadanta, Vol I **Ādipurāṇa** (Samdhis 1-37) : A Jaina Epic in Apabhramśa of the 10th century A. D. Apabhramśa Text, Variants, explanatory Notes of Prabhācandra. A model edition of an Apabhramśa text, Critically edited with an Introduction and Notes in English by DR. P. L. VAIDYA, M. A., D. Litt., Bombay 1937, Royal 8vo pp. 42-672, Price Rs. 10/-.

37 (a). Rāmāyaṇa portion separately issued, Price Rs. 2.50.

38 **Nyāyakumudacandra** of Prabhācandra Vol. I : This is an important Nyāya work, being an exhaustive commentary on Akalaṅka's *Lagṭhyastrayam* with Vivṛti (see No. 1 above) The text of the commentary is very ably edited with critical and comparative foot-notes by PT. MAHENDRAKUMARA There is a learned Hindi Introduction exhaustively dealing with Akalaṅka, Prabhācandra, their dates and works etc written by Pt KAILASCHANDRA. A model edition of a Nyāya text. Bombay 1938, Royal 8 vo pp 20-126-38-402-6, Price Rs 8/.

39. **Nyāyakumudacandra** of Prabhācandra, Yol. II See No 38 above. Edited by PT. MAHENDRAKUMAR SHASTRI who has added an Introduction Hindi dealing with the contents of the work and giving some details about the author There is a Table of contents and twelve Appendices giving useful Indices Bombay 1941. Royal 8vo pp. 20+94+403-930, Price Rs. 8/8/-

40 **Varāṅgacaritam** of Jaṭā-Simhanandī : A rare Sanskrit Kāvya brought to light and edited with an exhaustive critical Introduction and Notes in English by PROF A N. UPADHYE, M A., Bombay 1938, Crown pp. 16+56+392, Price Rs. 3/-.

41. **Mahāpurāṇa** of Puṣpadanta, Vol. II (Saṁdhis 38-80) · See No 37 above. The Apabhraṁśa Text critically edited to the variant Readings and Glosses, along with an Introduction and five Appendices by

DR. P.L. VAIDYA, M.A., D.Litt., Bombay 1940. Royal 8vo pp. 24+570. Price Rs. 10/-.

42. **Mahāpurāṇa** of Puṣpadanta, Vol III (Śarīdhis 81-102) : See No 37 and 40 above. The Apabhramśas Text critically edited with variant Readings and Glosses by DR. P. L. VAIDYA, M.A., D. Litt. The Introduction covers a biography of Puṣpadanta, discussing all about his date, works, patrons and metropolis (Mānyakheṭa). PT PREMI'S essay 'Mahākavi Puṣpadanta' in Hindi is included here. Bombay 1941. Royal 8vo pp 32+28+314. Price Rs 6/-

42(a) **Harivaṁśa** portion is separately issued Price Rs 2 50

43. **Ajanāpavanamjaya-nāṭakam** and **Subhadra-nāṭikā** of Hastimalla . Two Sanskrit Dramas of Hastimalla (see also No 3 above) Critically edited by PROF M V PATWARDHAN The Introduction in English is a well documented essay on Hastimalla and his four plays which are fully studied There is an Index of stanzas from all the four plays Bombay 1950. Crown pp. 8+68+120+128. Price Rs 3/-

44 **Syādvādasiddhi** of Vādībhasimha Edited by PT DARBARILAL with Introductions etc. in Hindi shedding good deal of light on the author and contents of the work Bombay 1950 Crown pp. 26+32+34+80. Price Rs 1-50

45. **Jaina Śilālekha-saṅgraha**. Part II (see No. 28 above) : The texts of 302 Inscriptions (following A-Guérinot's order) are given in Devanāgarī with summary

in Hindi. There is an Index of Proper Names at the end. Compiled by PT. VIJAYAMURTI, M.A. Bombay 1952. Crown pp. 4+520. Price Rs 8/-

46 **Jaina Śilālekha-saṅgraha**, Part III (see Nos. 28 & 45 above) · The texts of 303-846 inscriptions (following Guérinot's list) is given in Devanāgarī with summary in Hindi compiled by PT. VIJAYAMURTI, M.A. There is an Index of Proper Names at the end. The Introduction by SHRI G. C CHAUDHARI is an exhaustive study of inscriptions. Bombay 1957. Crown pp. 8+178+592+42 Price Rs 10/-.

47. **Pramāpaprāmeyakalikā** of Narendrasena (A.D. 18th century) A Nyāya text dealing with Pramāna and Prameya. The Sanskrit text critically edited by Pt DARBARILAL. The Hindi Introduction deals with the author and a number of topics connected with the contents of this work. Bhāratīya Jñānapīṭha Kashi, Varanasi 1961. Price Rs. 1 50

48 **Jaina Śilālekha-saṅgraha**, Part IV (see Nos. 28, 45 & 46 above) This vol contains some 654 inscriptions along with 324 Pratimā-lekhas of Nagpur in Appendix Compiled by DR. VIDYADHAR JOHARA-PURKAR with an exhaustive study of the inscriptions in the introduction and Indexes in the end Varanasi Vira Nirvāṇa Samvat-2491, Crown pp 10+34+506. Price Rs. 7/-.

49. **Ārādhanaśamuccayo-Yogasāra Saṅgrahaśca** : This vol. contains two small sanskrit texts—
1) Ārādhana samuccaya of Śrī Ravicandra Munindra

and 2) Yogasārasamuccaya of Sri Gurudas. Edited with indexes of verses and introductions by Dr. A. N. UPADHYE, Varanasi 1967, crown pp. 8+58. Price Re. 1/.

50. Śṛṅgārāṅgavacandrikā of Vijayavarṇī. A hitherto unpublished work on Sanskrit poetics. Critically edited by Dr V. M Kulkarnī with Introduction, detailed table of contents and six valuable Appen dexes. Varanasi 1969, crown pp 12+66+176. Price Rs. 3/-.

For copies please write to—

BHĀRATĪYA JÑĀNAPĪTHA
3620/21 Netaji Subhash Marg,
Delhi—6 (India)

